



पुस्तक भवन सीरीज सं० २४

गोर्की के संस्मरण

अनुवादक—
श्री इलाचंद्र जोशी



प्रकाशक
पुस्तक भवन
चौक, बनारस

प्रथमावृत्ति—जन्माष्टमी १९९९ वि०

मूल्य

[redacted]

अजिल्द दो रुपये

सजिल्द ढाई रुपये

प्रकाशक,
बिट्ठलदास गुप्त, व्यवस्थापक,
पुस्तक भवन,
चौक, बनारस

मुद्रक,
श्रीनाथदास अग्रवाल,
टाइम-टेबुल प्रेस,
बनारस ४३५-४२

अनुवादक का वक्तव्य

टाल्सटाय ने एकबार कहा था कि "गोर्की के भीतर एक जासूस की आत्मा छिपी हुई है।" गोर्की के भीतर जासूस की आत्मा छिपी रही हो या न रही हो, पर इतना अवश्य था कि जिन-जिन व्यक्तियों के संसर्ग में वह आता था उनकी प्रत्येक सूक्ष्म से सूक्ष्म और साधारण से साधारण गतिविधि का निरीक्षण बड़ी बारीकी से और अत्यंत निष्पक्ष, निःसंग और निर्लिप्त भाव से करने की कला में वह अपना सानी नहीं रखता था। हम लोग प्रतिदिन जिन आदमियों से मिलते-जुलते हैं, साधारणतः उनकी केवल उन्हीं बातों पर ध्यान देने के आदी होते हैं जो बहुत परिस्फुट हों और व्यक्ति के जीवन की ऊपरी सतह से संबंध रखने वाली हों। पर व्यक्तित्व के वास्तविक रूप पर सच्चा प्रकाश उन बातों से मिलता है जो अवचेतन मन की गहराई में दबी पड़ी रहती हैं, और विरले क्षणों में हमारी अत्यंत तुच्छ और साधारण बातों और व्यवहारों के द्वारा अस्फुट संकेतों के रूप में, अनजान में व्यक्त हो पड़ती हैं। गोर्की ने व्यक्तियों के जीवन के उन विरले क्षणों की तुच्छ से तुच्छ गतिविधि और साधारण से साधारण बातचीत को महत्त्व दिया है, और ऐसे आश्चर्य-जनक कौशल से उन्हें लिपिबद्ध किया है कि दंग रह जाना पड़ता है। तारीफ़ की बात यह है कि किसी भी घटना के वर्णन और वार्तालाप के उद्धरण के सिलसिले में उसने अपना मंतव्य इतना कम दिया है जो नहीं

के बराबर है। इसमें संदेह नहीं कि उसने जिन-जिन व्यक्तियों के संबंध में अपने संस्मरण वर्तमान पुस्तक में संकलित किए हैं वे प्रायः सभी असाधारण-चरित्र हैं। पर उन असाधारण-चरित्रों का प्रस्फुटन उसने जिस प्रकार की तुच्छ गतिविधियों और साधारण वार्तालापों के वर्णन द्वारा किया है वह आश्चर्यजनक है।

मुझे पूरा विश्वास है कि इन रोचक संस्मरणों से केवल विगत युग के रूसी जीवन के संबंध में ही नहीं, बल्कि सब देशों के और सब युगों के मानव-स्वभाव की बहुत-सी मूल प्रवृत्तियों का परिचय पाठकों को प्राप्त होगा।

विषय सूची

गोर्की के संस्मरण

कुतर्की यात्री

पश्चिम की तरफ के बादल नीले और नारंगी रंगों से रँगे हुए थे। मोती के-से रंग वाले आकाश में, चीड़ के सघन वन के ऊपर समाप्त-प्राय चन्द्रमा का पारदर्शी टुकड़ा लटक रहा था। चीड़-वन दलदल से लेकर सुदूर क्षितिज तक फैला हुआ था। दूर एक कोने में फैक्टरी की चिमनी से निकलने वाली आग की लपट मानो अपनी रक्तजिह्वा निकाल कर उस वन को डरा रही थी। जैसे उसके भय से एक दूसरे से सटने के कारण चीड़ के पेड़ और अधिक सघन और अंधकारमय दिखाई देते थे। सारा दलदल-प्रान्त जैसे सूज उठा हो, ऐसा जान पड़ता था और उसका वह भयावना रूप सारे अवसादमय वातावरण को और अधिक भारग्रस्त कर रहा था।

साशा विनोकुराफ़, जो एक एसिस्टेंट सर्जन था, अपने दोनों पैरों और दोनों हाथों के बल एक पहाड़ी पर चला जा रहा था, और बटेरों को फाँसने के लिये जाल बिछा रहा था। मैं एक झाड़ी के नीचे ध्यान-मग्न अवस्था में लेटा हुआ था। सहसा कुछ सोचकर मैंने कहा—"काश कि जीवन को फिर नये सिरे से--पन्द्रह वर्ष की अवस्था से—बिता पाता!"

इसपर साशा मोटी आवाज़ में बोल उठा—"जीवन की वर्तमान अवस्था से कोई सन्तुष्ट नहीं रहता।" यह कहते हुए वह पहाड़ी से नीचे लुढ़कते हुए ठीक मेरी झाड़ी के पास चला आया, और वहाँ से अपने बिछाए हुए जालों का निरीक्षण करने लगा। उसकी गंजी खोपड़ी के नीचे उसके कपाल में बड़ी-बड़ी झुर्रियाँ पड़ी हुई थीं। उसकी आँखें मछली की आँखों की तरह गोल दिखाई देती थीं।

साशा बड़ा मज़ेदार आदमी है। वह एक बैरिस्टर का लड़का है, पर (जैसा कि वह कहता है) "स्कूली शिक्षा का भार ढोने में असमर्थ होने और अपने पिता के जंगलीपन से तंग आने के कारण" वह घर से भाग निकला और दो वर्ष तक इधर-उधर भटकता रहा—कभी जेल में और कभी आवारा लोगों के दूसरे अड्डों में। इसके बाद जब वह अपने पिता के पास लौटकर आया, तो "असंख्य चींटियों के दल के बीच में एक मरे हुए चूहे की तरह फेंक दिया गया,"—अर्थात् पलटन में भर्ती कराया गया और आर्मी मेडिकल स्कूल में दाखिल हुआ। इसके बाद वह सात वर्ष तक सैनिक शिक्षा-संबंधी विभिन्न जहाज़ों में भ्रमण करता रहा।

उसने मुझसे कहा—"मैंने सभी देशों की शराबों का स्वाद लिया है। इसलिये नहीं कि मैं प्रकृति से ही शराबी हूँ, बल्कि इस कारण कि प्रत्येक व्यक्ति की भीतरी प्रवृत्तियों को बाहर निकलने का मार्ग अवश्य चाहिये। मैं इतनी अधिक मात्रा में शराब पीता था कि और तो और, स्वयं अँगरेज़ लोग मुझे पीते हुए देखने के लिये चले आया करते थे। वे लोग अपनी गर्दनें हिलाते हुए मुस्कराते जाते थे और कहते थे—'हाँ, यह है वास्तव में पियक्कड़! ऐसे व्यक्ति के लिये 'जिन' और 'व्हिस्की' जैसी शराबों को तैयार करने में प्रसन्नता होती है।' उनमें से

एक ने मुझसे यहाँ तक पूछा कि 'तुमने कभी व्हिस्की से स्नान करने की चेष्टा की है या नहीं?' यह सब होने पर भी अँगरेज़ क़ौम बहुत अच्छी है; केवल उनकी ज़बान बड़ी भद्दी है—चीनी भाषा से भी कई गुना भ्रष्ट !

"मुझे स्वयं पता नहीं है कि एक दिन फ़ारस कैसे पहुँच गया, और वहाँ एक अँगरेज़ व्यापारी की लड़की से मेरा विवाह कैसे हो गया। कुछ भी हो, वह लड़की बहुत सुन्दर थी, केवल एक ऐब उसमें था—उसे शराब पीने की लत पड़ गई थी; हालाँकि सम्भवतः मैंने ही उसमें यह आदत डाल दी थी। दो वर्ष बाद हैज़े से उसकी मृत्यु हो गई, और मैं संसार के सबसे वीभत्स शहर—बाकू—में जा पहुँचा। वहाँ से मैं यहाँ—मेंढक के इस बिल में—चला आया। यह भी कोई क़स्बा है ! शैतान इसकी धज्जियाँ उड़ा डाले !"

मैंने कहा—"साशा, अपनी चीन-यात्रा के क़िस्से सुनाओ।"

"यात्रा सबसे सरल काम है। केवल जहाज़ पर चढ़ने की ज़रूरत है, बाक़ी सब काम कप्तान स्वयं सँभाल लेता है। ये कप्तान लोग सब शराबी होते हैं, गाली-गलौज करते हैं और दूसरों पर झूठमूठ का रोब गाँठते रहते हैं—प्रकृति का नियम ही ऐसा है। ज़रा एक सिगरेट तो बढ़ाना !"

उसने सिगरेट जलाई और उसके धुएँ को नाक के केवल एक नथने से भीतर खींचते हुए कहा—"इस सिगरेट का तमाखू बहुत ही हल्का है; वास्तव में यह स्त्रियों के पीने की चीज़ है।"

विनोकुराफ़ की आयु पचास से अधिक हो चुकी है, पर वह अभी तक काफ़ी तगड़ा और स्वस्थ दिखाई देता है। उसका चेहरा एक सिपाही का-सा है और काठ में खुदा हुआ-सा जान पड़ता है। उसकी

आँखें बड़ी चमकती हुई, स्वच्छ और तरल हैं। जब वह उन शान्त आँखों से किसी की ओर देखता है, तो ऐसा अनुभव होने लगता है कि इस व्यक्ति ने जीवन में बहुत-कुछ देखा है, और अब उसे कोई भी बात आश्चर्य में नहीं डाल सकती, और न किसी प्रकार की चिन्ता उसे सता सकती है। वह लोगों को अक्सर तिरछी निगाह से देखता है, सीधी दृष्टि से नहीं, और उसकी उस दृष्टि में अपने बड़प्पन और दूसरों के प्रति अवहेलना का भाव झलकता है। वह अब डाक्टरी नहीं करता। वह कहा करता है––"दीर्घ अनुभव से मैं इस धारणा पर पहुँचा हूँ कि डाक्टरी विद्या एक अन्ध विद्या है।"

क़स्बे में उसकी एक डेयरी है, जिसमें वह "डाक्टर मेचनिकाफ़ के बताए हुए नुस्ख़े के अनुसार 'केफ़िर' (एक प्रकार का दही) और बुलगेरियन मठा" तैयार करता है।

मैंने प्रायः हठपूर्वक उससे कहा—"कुछ अपने बारे में सुनाओ।"

"आश्चर्य है कि इस तरह की बातों से तुम्हारी तृप्ति ही नहीं होती! इतनी सब बातें तुम कहाँ जमा करते जाते हो? अच्छी बात है, तुम किस विषय पर सुनना चाहते हो?"

"जो कुछ तुमने देखा है।"

"ओह, यह बात! इस तरह की बातें एक वर्ष में भी समाप्त नहीं होंगी, मैं जो कुछ भी देखने योग्य है वह सब देख चुका हूँ, कोई भी 'रुकावट' शेष नहीं रही। 'रुकावट?' इसके सिवा और क्या शब्द उनके लिये काम में लाया जा सकता है! जहाज़ बन्दर से रवाना होता है, और प्रत्येक यात्री भगवान को याद करते हुए मन-ही-मन जहाज़ से कहता है—'जहाँ तुम्हें जाना है वहाँ तक मुझे सकुशल पहुँचा दो!' दिन और रात, रात और दिन जहाज़ समुद्र के ऊपर से होकर चलता

रहता है, और रास्ते-भर केवल शून्य आकाश और शून्य जल के सिवा और कुछ नज़र नहीं आता। मैं शान्त-प्रकृति का आदमी हूँ, इसलिये मुझे इस प्रकार की शून्यता पसन्द है। इसके बाद एक दिन बड़े ज़ोरों से सीटी बजती है; इसका अर्थ यह है कि हम लोग गन्तव्य स्थान पर पहुँच गए हैं। पर मैं ठहरना पसन्द नहीं करता। यह एक 'रुकावट' है। यह ठीक वैसा ही है जैसे कोई रात में खुली हवा में भ्रमण करने के इरादे से निकल पड़े, और अकस्मात् एक झाड़ी के भीतर जा घुसे। कुछ भी हो, जहाज़ के ठहरते ही 'डेक' पर यात्रियों की हड़बड़ी पड़ जाती है। यात्री भी क्या अनोखे जीव होते हैं—अपने ढङ्ग के बिलकुल निराले! मूर्खता में उनकी तुलना किसी से नहीं हो सकती। जहाज़ पर सवार होते ही प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर बच्चों का सा बेतुकापन घर कर लेता है। इसके अलावा प्रायः प्रत्येक यात्री बड़े ज़लील तौर पर समुद्री बीमारी से कष्ट पाने लगता है। समुद्र में यह बात भी विशेष रूप से ध्यान में आती है कि मनुष्य कैसा तुच्छ और नगण्य प्राणी है। संक्षेप में, मैं निश्चित रूप से यह कह सकता हूँ पृथ्वी की सारी सतह के ऊपर यात्री से अधिक हीन प्राणी दूसरा नहीं मिलेगा। एक कैदी की दृष्टि में जीवन एक दीर्घ निर्विचित्रता के सिवा और कुछ नहीं है। समुद्री यात्रा ख़ास तौर से यह निर्विचित्रता विषैला रूप धारण कर लेती है, और सब यात्री स्वभाव से बड़े आलसी होते हैं। जीवन की वैचित्र्यहीनता के कारण वे अपना व्यक्तित्व इस हद तक खो देते हैं कि अपने ऊँचे पद, धनाढ्यता और मान-प्रतिष्ठा सब भूलकर जहाज़ के इञ्जिन की आग सुलगानेवाले मजदूरों के साथ समानता का व्यवहार करने लगते हैं। जिस प्रकार कुत्ते बिस्कुटों को देखकर दौड़ पड़ते हैं, उसी प्रकार यात्री किसी विदेशी भूमि का तट देखते ही बड़ी हड़बड़ी के साथ उस दृश्य का उप-

योग करने के उद्देश्य से डेक पर भीड़ लगा देते हैं। उपभोग करो, इस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है, पर इस प्रकार की व्यस्तता दिखाकर गुल क्यों मचाते हो ? पर नहीं—वे अपने पाँव पटकना शुरू कर देते हैं और एक दूसरे की बात से सहमत न होते हुए कहने लगते हैं—'यह दृश्य देखो यह ! अरे नहीं, वह देखो वह !' वास्तव में कोई भी दृश्य नया या अनोखा नहीं होता; सब चीजें वैसी ही होती हैं जैसी हमेशा सब जगह दिखाई देती हैं—ज़मीन, इमारतें, लोग जो चूहों से भी छोटे दिखाई देते हैं। और उस विशेष अवसर पर हमेशा कोई-न-कोई दुर्भाग्यपूर्ण घटना अवश्य घट जाती है। उदाहरण के लिये, सिकन्दरिया में हमारे जहाज की हरजाई भण्डारिन ने मेरे कपड़ों के बक्स पर एक विशेष प्रकार के तेज़ाब की बोतल तोड़ डाली। उसकी दुर्गन्ध पहले दर्जे के 'कैबिनों' तक फैल गई, और हमारा प्रधान अफ़सर बाहर आकर क्रोध के कारण मेरे चारों ओर एक पागल आदमी की तरह नाचने लगा। वह ऐसी भयङ्कर गालियाँ देने लगा कि एक महिला को घबराहट के कारण चक्कर आते-आते रह गया, और उस महिला ने कप्तान के पास जाकर शिकायत की—पर हड़बड़ी में उसने वह शिकायत मेरे खिलाफ़ कर दी ! एक और उदाहरण इसी तरह का है। एक छोटी-सी लड़की की उँगली डाक्टरखाने के दरवाज़े से दबकर कुचल गई, और उसके बापने, जो एक राजनीतिज्ञ था, मेरे पेटे में अपनी छड़ी घुसेड़ कर मुझपर गुस्सा उतारा। जहाज़ी सफ़रों में हमेशा इसी तरह की अद्भुत और अनहोनी घटनाएँ हुआ करती हैं।

"ग़रज़ यह कि मैंने सारी पृथ्वी का चक्कर लगाने पर भी कहीं कोई विशेष रोचक दृश्य नहीं देखा। सर्वत्र समान रूप से अपमानित होने का अन्देशा रहता है—एशियाई अर्द्धगोले में कुछ अधिक, और

अर्द्धगोलों में कुछ कम—केवल इतना ही अन्तर है। क्या तुम्हारी यह धारणा है कि इस पृथ्वी में केवल दो ही अर्द्धगोले हैं ? इस प्रकार की धारणा केवल गँवारपन है। यदि तुम व्यावहारिक दृष्टि से इस बात पर विचार करो, और हमारी इस पृथ्वी के गोले को किसी भी अक्षांश की रेखा के लगे-लगे एक ध्रुव से लेकर दूसरे ध्रुव तक काट डालो, तो तुम्हें पता चल जायगा कि जितने अक्षांश हैं उतने ही अर्द्धगोले भी हो सकते हैं; कुछ अधिक हों तो आश्चर्य नहीं। ज़रा एक सिगरेट बढ़ाना !"

सिगरेट जलाकर आँखें मूँदते हुए वह बोला—"पर वास्तव में यहाँ सिगरेट पीनी नहीं चाहिये, क्योंकि अबाबीलों को इसका धुँआ क़तई पसन्द नहीं है !"

इसके बाद फिर उसने शान्त भाव से, धीमी आवाज़ में अपने क़िस्से का क्रम ज़ारी रखते हुए कहा—"समय-समय पर मनोरञ्जक घटनाएँ भी घटती रहती हैं, उदाहरण के लिये, चीनी समुद्र में—इस नाम का एक समुद्र है, हालाँकि और समुद्रों से इसमें कोई अन्तर नहीं है—उस समुद्र में जब हम लोग यात्रा कर रहे थे और हाङ्काङ्ग की ओर चले जा रहे थे, तो एक रात पहरेदार ने स्याही के रङ्ग के समान घने अन्धकार के बीच में एक विशेष प्रकार की रोशनी देखी। मैं उस समय तीन और आदमियों के साथ ताश के एक विशेष प्रकार के खेल में तल्लीन हो रहा था। अकस्मात् हम लोगों ने किसी को चिल्लाते हुए सुना—

"समुद्र में आग लगी हुई है !"

"हम लोग उस विचित्र दृश्य को देखने के लिये दौड़ पड़े। खेल बीच ही में छोड़ देना पड़ा। जब समुद्र में यात्रा करते हुए बहुत दिन बीत जाते हैं, तो यात्री इस कदर ऊब जाते हैं कि प्रत्येक साधारण दृश्य या घटना उन्हें आकर्षित करने लगती है। यहाँ तक कि 'डालफिन'

नामक एक विशेष जाति की मछली को तैरते हुए देखने के लिये वे उत्सुक हो उठते हैं, हालाँकि वह विशेष मछली, जो खाई नहीं जाती, किसी और जन्तु की अपेक्षा सुअर से अधिक मिलती-जुलती है। इस एक बात में पता चल सकता है कि यात्री लोग किस हद तक मूर्ख होते हैं।

"कुछ भी हो, मैं जब आगका दृश्य देखने के लिये बाहर निकला, तो रात घनी अँधेरी थी हवा बंद होने से बड़ी गरमी मालूम होती थी। सामने की ओर काफ़ी दूरी पर आग लगी हुई दिखाई दे रही थी। दूर से आगकी लपटों का वह दृश्य एक फूलके आकार की तरह छोटा लगता था। पर धीरे-धीरे उसका आकार बढ़ता ही चला जाता था। पर उसमें कोई विशेष दिलचस्पी नहीं मालूम हो रही थी; इसका एक कारण यह भी था कि ताशका खेल मुझे ऐसे समय छोड़ना पड़ा था जब कि मैं जीत रहा था।

"मेरा ध्यान अक्सर इस बात पर गया है कि लोगों के मनमें आग के प्रति एक ऐसा प्रबल आकर्षण पाया जाता है जिसकी तुलना मूर्ति-पूजा की उमङ्ग-भरी भावना से की जा सकती है। प्रायः सभी बड़े-बड़े पर्वों में, जन्मदिन, विवाह आदि आनन्द के अवसरों पर—जनाज़ों के अवसरों को छोड़कर—आतिशबाजियों की भरमार रहती है और दीवाली भी जलाई जाती है। छोटे-छोटे नटखट बच्चे गरमियों में भी लकड़ियों के छोटे-छोटे ढेर जमा करके होलियाँ जलाने में सुख पाते हैं—ऐसे छोकरों की खूब अच्छी मरम्मत करनी चाहिये, क्योंकि जंगलों में आग लगाने में अक्सर ऐसे ही छोकरों का हाथ रहता है। आगको देखकर सभी आदमी एक विशेष प्रकार की प्रसन्नता प्राप्त करते हैं, और उस दृश्यका मज़ा लेने के लिये पतिंगों की तरह टूट पड़ते हैं। एक ग़रीब आदमी जब किसी धनी व्यक्तिका मकान जलते हुए देखता है, तो उसके हर्षका पारावार नहीं

रहता। वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति, जिसे सृष्टिकर्ता ने देखने के लिये दो आँखें दी हैं, आगको देखते ही आकर्षित हो उठता है।

"कुछ भी हो, हमारे जहाज़ के सब यात्री हड़बड़ाते हुए डेक पर चले आए, और उस दृश्यका मजा लेते हुए आपस में इस बात पर बहस करने लगे कि किस चीज पर आग लगी है। एक साधारण-सी बुद्धि रखने वाले व्यक्ति के लिये यह बात स्पष्ट थी कि किसी-न-किसी जहाज़ पर आग लगी होगी, क्योंकि समुद्र में घास की गड्डियाँ बहती नहीं रहतीं; पर जो बात एक गूंगे और बहरे बच्चे तक के लिये स्पष्ट थी वह हमारे सह-यात्रियों के लिये एक समस्या का विषय बन गई थी। मुझे अक्सर इस बात पर आश्चर्य होता है कि यात्री लोग एक अत्यन्त सरल और स्पष्ट बात को भी क्यों नहीं समझ पाते। जीवन की जिस निर्विचित्रता से वे पीड़ित रहते हैं वह कभी इस प्रकार के फ़ालतू विषयों पर बहस करने से दूर नहीं हो सकती।

"बहरहाल मैं शान्त भाव से यात्रियों का वाद-विवाद सुन रहा था। सहसा उन यात्रियों में से एक स्त्री चिल्ला उठी—'ओह! इस जलते हुए जहाज़ पर निश्चय ही मुसाफ़िर होंगे!'

"कितना बड़ा आविष्कार इसने किया था! यह तो मानी हुई बात है कि जहाजों में निश्चय ही आदमी रहेंगे। पर वह इतनी देर बाद यह अनुमान कर पाई!

"इसके बाद उस स्त्री ने फिर चिल्लाना शुरू किया—'उन आदमियों को बचाना चाहिये।'

"इस पर यात्रियों में नये सिरे से बहस शुरू हुई। कुछ लोगों ने अपना यह मत प्रकट किया कि बिना विलम्ब उस जलते हुए जहाज़ के यात्रियों को बचाने के लिये चल पड़ना चाहिये; दूसरे लोग, जो कि

सांसारिक बुद्धि रखते थे, बोले कि हमारे जहाज़ को गन्तव्य स्थान पर पहुँचने में यों ही काफ़ी समय लग चुका है, तिसपर इस नये झंझट के फेर में पड़ा जाय, तो बड़ी ज़्यादती होगी। पर पूर्वोक्त महिला बड़बड़ाती चली जाती थी और पूरी ताक़त से अपनी बात पर ज़ोर दे रही थी। बाद में मुझे मालूम हुआ कि वह कार्स से जापान जा रही है; टोकियों में उस की एक बहन किसी रूसी राजदूत को व्याही हुई थी, वह उसीसे मिलने जा रही थी। उसकी यात्रा का एक कारण और था—वह यक्ष्मा रोग से पीड़ित थी। कुछ भी हो, वह स्त्री क्या थी एक ख़ासी आफ़त थी! वह इस बात पर ज़ोर देती चली गई कि जलते हुए जहाज़ के यात्रियों को हर हालत में बचाना होगा, और यात्रियों को वह इस बात के लिये उकसाने लगी कि कप्तान के पास एक 'डेपूटेशन' भेजा जाय और उससे जलते हुए जहाज़ के यात्रियों की सहायता के लिये प्रार्थना की जाय। पर कुछ यात्रियों ने उस महिला की इस बात पर बड़ी ज़बर्दस्त आपत्ति उठाई, और यह दलील पेश की कि संभव है वह जलता हुआ जहाज़ चीनियों का हो और उसके यात्री भी चीनी हों। पर इस दलील से महिला का जोश तनिक भी ठण्ढा नहीं हुआ। उसके आवेग-भरे उद्गारों का तीन यात्रियों पर ऐसा ज़बर्दस्त प्रभाव पड़ा कि वे कप्तान के पास अपील करने के लिये चले गए। कप्तान ने उन लोगों से कहा कि यदि उस जलते हुए जहाज़ की सहायता के लिये जाना होगा तो हम लोगों की यात्रा में और अधिक देर लग जावेगी; पर उन लोगों ने उसे क़ानून की धमकी दी, और कहा कि समुद्री यात्रा के क़ानून के अनुसार कोई भी जहाज़ विपत्ति में पड़े हुए किसी दूसरे जहाज़ की सहायता करने के लिये बाध्य है, और यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो हाङ्गकाङ्ग पहुँचते ही उसकी शिकायत की जायगी।

"अन्त में झंझट-पसंद यात्रियों की ही जीत रही। कप्तान हमारे जहाज़ को जलते हुए जहाज़ की ओर ले गया। हम लोग पहाड़ियों के समान ऊपर को उठी हुई लहरों के ऊपर से होकर घनघोर-अंधकार में आग की ओर बढ़े। जब हम लोग आग के निकट पहुँचे, तो मालूम हुआ कि एक छोटा-सा, दो मास्तूलोंवाला, निकम्मा चीनी जहाज़ जल रहा है। उस छोटे-से जहाज़ के चारों ओर दो छोटी-सी नावें चक्कर लगा रही थीं। उन नावों में यात्री भरे हुए थे और भयंकर रूप में शोर मचा रहे थे। जलते हुए जहाज़ के सिरे पर दुबला-पतला, लम्बा-सा आदमी स्थिर खड़ा था। आग अविचलित रूप से जल रही थी। लपटों के कारण जहाज़ का 'डेक' तक नहीं दिखाई देता था। उसके मस्तूल मोमबत्तियों की तरह दिखाई दे रहे थे, और आग की लपटें जहाजों की दोनों बग़लों को घेरती चली जा रही थीं, पर जो आदमी उस पर खड़ा था, वह एक सन्तरी की तरह अविचल दिखाई देता था।

"जो दो नावें आदमियों से भरी थीं उनमें से एक के यात्रियों को हमने अपने जहाज़ में बिठा लिया, पर दूसरी नावके तीन आदमी घबराहटके कारण पानी में कूद पड़े और डूब गए। जिन आदमियों को हमने बचाया उनसे मालूम हुआ कि जलते हुए जहाज़ का कप्तान अभी तक जहाज़ ही पर है, और उसने यह निश्चय कर लिया कि वह अपने माल-असबाब सहित जल मरेगा। हमारे जहाज़ के मल्लाहों ने उसे लक्ष्य करके चिल्लाकर कहा—'अरे शैतान, पानी में कूद क्यों नहीं पड़ता। हम तुझे उठाकर अपने जहाज़ में ले लेंगे।' पर उस व्यक्तिने उनके इस चिल्लाने पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। उसके हठ पर विजय पाना असम्भव सिद्ध हुआ। इधर हमारे जहाज़ का कप्तान बड़े ज़ोरों से भोंपू बजाकर कानों के पर्दे फाड़ते हुए वापस चलने के लिये अपना उतावलापन प्रकट

कर रहा था। आग की लपटें ज्योंही जहाज़ के सिरे पर पहुँची, मैंने स्वयं अपनी आँखों से स्पष्ट देखा कि वह एशियाई कप्तान अपने स्थान पर से ऊपर उछला, और अपने सिरको अपने दोनों हाथों से पकड़ कर वह लपटों में इस प्रकार कूदा, जैसे किसी गहन गर्त में फाँद पड़ा हो।

"पर उस घटना का मूल महत्त्व उस चीनी कप्तान के विचित्र आचरण से सम्बन्धित नहीं है; कारण यह है कि उसकी जाति के लोग अपने जीवन के प्रति एकदम उदासीन रहते हैं। उनकी इस उदासीनता का कारण यह है कि उनके देश की जनसंख्या अगणित है। चीन में स्थिति यहाँ तक पहुँच गई है कि जहाँ कहीं फ़ालतू आदमियों की संख्या इतनी अधिक हो जाती है कि समाज-सङ्गठन में बाधा पहुँचाने लगती है, तो वे पुर्जा डालते हैं, और जिनके नाम के पुर्जे निकल आते हैं वे बिना किसी शिकायत के ईमानदारी के साथ, आत्मघात कर लेते हैं। चीनी परिवार में जब दूसरी लड़की पैदा होती है तो लोग उसे नदी में डाल देते हैं—एक परिवार में एक से अधिक लड़की वे नहीं चाहते।

"बहरहाल मैं यह कह रहा था कि पूर्वोक्त घटना का मूल महत्त्व उस चीनी कप्तान के आचरण में नहीं, बल्कि हमारी सहयात्री जिस महिला ने जलते हुए जहाज़ की सहायता के लिये बावैला मचाया था, उसके आचरण में निहित है। वह हमारे कप्तान पर बरस पड़ी और चीख़ मारते हुए कहने लगी कि उसने जहाज़ की आग बुझाने का कोई आर्डर नहीं दिया।

"इस पर कप्तान अत्यन्त शान्त और गम्भीर भाव से बोला—'श्रीमती जी, मैं कोई आग बुझानेवाला इञ्जिन थोड़े ही हूँ!'

"महिला ने चिल्लाकर कहा—'पर एक आदमी उस जहाज़ में जल मरा है!'

"कप्तान ने उसे बारहाँ समझाने की कोशिश की कि अग्निकाण्ड में इस प्रकार की घटना कोई असाधारण बात नहीं है, पर वह अपनी ही बात की रट लगाती रही—'क्या तुम अन्दाज लगा पाते हो कि यह कितनी बड़ी बात है ? एक आदमी !'

"प्रत्येक यात्री उसके आवेश पर मुस्करा रहा था, पर वह एक मुँह लगे हुए कुत्ते की तरह हर आदमी के पास उचकती हुई जाती थी और चिल्लाती जाती थी—'एक आदमी, एक आदमी !'

"लोग जब उसकी एक ही बात की रटन से तङ्ग आ गए, तो वहाँ से हटकर चले गए। पर वह 'डेक' पर कूदफाँद मचाती रही, और अन्त में फूटकर रो पड़ी। एक अत्यन्त प्रतिष्ठित पद का सौम्य-स्वभाव व्यक्ति उसके पास गया और उसे शान्त करने की चेष्टा करने लगा। उसने उस महिला को विश्वास दिलाते हुए कहा—'सहायता में जो-कुछ सम्भव हो सकता था वह किया गया है।' पर महिला ने बड़े अपमान-जनक भाव से उसे दुतकार दिया।

"इसके बाद मैंने अपनी ओर से चेष्टा करने का इरादा किया, और उसके पास पहुँचकर कहा—'श्रीमती जी, क्या मैं आपको एक दवा देने की धृष्टता कर सकता हूँ ?'

"पर वह मेरी ओर बिना देखे केवल बड़बड़ाती रही—'ओह ! मूर्ख, गधे कहींके !'

"उसकी यह बात मुझे नागवार मालूम हुई। फिर भी मैंने एक बार और चेष्टा की। मैंने यथासम्भव नम्रता के साथ कहा—'श्रीमतीजी, आपके हृदय के उच्चाशय ने कप्तान के अनुचित आचरण का जो रूप मेरे सामने रखा है, उससे मेरे मन में उसके प्रति घृणा का भाव जग उठा है।'

"उसने मेरी ओर देखा, और अपना मुख मेरे मुख के अत्यन्त

निकट बढ़ाकर अपनी तीखी आवाज़ की फुफकार से मेरी नाक के भीतर हवा भरते हुए कहा—'यहाँ से चले जाओ, समझे !'

"मैं शान्त-भाव से चला गया, पर एक गिलास में दवा डालकर उसके लिये छोड़ गया। मैं दूर से उसकी हरकतों पर ग़ौर करता रहा। उसने अपनी नाक साफ करते हुए एक सिसकारी-सी भरी, मुझे ऐसा लग रहा था कि एक अज्ञात चीनदेशीय व्यक्ति के लिये इस प्रकार आँसू बहाना अनीतिपूर्ण और शिष्टता के खिलाफ़ है। मैं यह बात बिलकुल सम्भव नहीं समझता कि वह महिला अपने सामने मरे हुए प्रत्येक व्यक्ति के लिये इस प्रकार फूट-फूटकर रोने की आदी रही होगी। सिङ्गापुर में सैकड़ों 'नेटिव' लोग भूख के कारण प्रतिदिन मर रहे थे, पर कभी एक भी यात्री ने उनके लिये एक आँसू नहीं गिराया। मैं मानता हूँ कि सिङ्गापुर के 'नेटिव' हम यूरोपियनों के समान नहीं हैं। पर मैंने स्वयं अपनी आँखों से अपने ही देश के मल्लाह, मज़दूर और दूसरे आदमियों के चिथड़े-चिथड़े होते हुए देखा है और घोर दुर्दशा में मरते देखा है, पर इस प्रकार के दृश्यों से हमारे किसी भी सहयात्री को विचलित होते नहीं देखा गया। रक्तपात के दृश्यों ने उनके मन में घबराहट का भाव अवश्य उत्पन्न कर दिया, जैसा कि स्वाभाविक है; पर यह बिलकुल दूसरी बात है। मैंने पूर्वोक्त स्त्री के आचरण के सम्बन्ध में बहुत सोचा, उसे आवश्कता से अधिक महत्त्व दिया, पर उसका कोई समाधान मैं नहीं कर पाया।"

विनोकुराफ़ ने अपने गलमुच्छों पर हाथ फेरा, और दूर से आनेवाली किसी आवाज़ पर ध्यान देते हुए, कुछ नाराज़गी का-सा भाव जताकर बड़बड़ाने लगा—"मेरी यह धारणा है कि इसके मूल में कोई एक मूर्खतापूर्ण भावना रही होगी।"

रात हो चुकी थी। पानी की तरह नीले रंग के आसमान में तारे अस्पष्ट रूप से टिमटिमाते हुए दिखाई दिए, चाँद का टुकड़ा लुप्त हो चुका था। चीड़ का जो क्षीणकलेवर पेड़ हमारे पास ही खड़ा था, वह अंधकार में एक चोगा पहने संन्यासी की याद दिला रहा था।

साशा विनोकुराफ़ ने यह प्रस्ताव किया कि हमलोग जंगल के चौकीदार की कुटिया में रात बितावें, और सुबह अबाबीलों के उड़ने का समय होने तक वहीं रहें। हम दोनों उठ खड़े हुए। गीली घास में भारी क़दम रखते हुए साशा ने धीरे से कहा—"जब मांस ख़ूब गरम होता है, तो इस बात का पता नहीं लग पाता कि उसमें नमक पड़ा है या नहीं।"

अग्नि-काण्ड

फ़रवरी के महीने की एक अँधेरी रात जब मैं निजनी नोवोगोरोद के अन्तर्गत ओशार्स्क स्क्वायर नामक स्थान में पहुँचा, तो किसी एक मकान के छतवाले कमरे की खिड़की से निकलती हुई आग की लपट लोमड़ी की दुम के समान दिखाई दी। उस अँधेरी रात में वह लपट आतिशबाज़ी की तरह बड़े-बड़े चिनगारे उगल रही थी। चिनगारे एक-एक करके बड़े धीरे से और अनिच्छा से पृथ्वी पर गिर रहे थे। आग के उस सौन्दर्य ने मुझे विचलित कर दिया। ऐसा मालूम होता था जैसे लाल रंग का कोई जानवर अकस्मात् अँधेरे के बीच से कूदकर छतवाले कमरे की खिड़की पर जा कूदा है, और पीठ को धनुष की तरह टेढ़ा करके किसी चीज़ को बड़े भयंकर आवेग के साथ अपने दाँतों से काट रहा है। बीच-बीच में चटखने की जो आवाज़ होती थी, उससे ऐसा जान पड़ता था जैसे वह जन्तु अपने दाँतों से किसी चिड़िया की हड्डी तोड़ रहा है।

आग की उस कलाबाज़ी का दृश्य देखते हुए मैं सोचने लगा—"किसी को जाकर खिड़कियों पर धक्के देकर सोए हुए लोगों को जगाना चाहिये और चिल्लाना चाहिये—'आग लगी है, आग'।" मैं सोच तो रहा था, पर मुझे स्वयं न तो उस स्थल से हटने की इच्छा होती थी, न चिल्लाने की—मैं निश्चल अवस्था में जहाँ था वहीं खड़ा रहा, और मुग्ध भाव से आग की लपटों की गति देखता रहा। धीरे-धीरे छत के किनारे-किनारे मुर्गे के परों के रङ्गों की विचित्रता का दृश्य दिखाई देने लगा और बाग़ के पेड़ों की चोटियों की शाखाएँ कुछ बैजनी और कुछ सुनहले रङ्ग से रँगी हुई जान पड़ती थीं, और आस-पास के स्थान प्रकाश में जगमगा उठे थे।

मैंने अपने आपको सम्बोधित करते हुए कहा—"मुझे अब जाकर लोगों को जगाना चाहिये।" पर फिर भी मैं स्थिर खड़ा रहा और शान्त भाव से वह अपूर्व दृश्य देखता रहा। अन्त में मैंने 'स्क्वायर' के बीच में एक आदमी की-सी सूरत देखी। वह फ़व्वारे के धातु-निर्मित स्तम्भ पर झुका हुआ था, और प्रथम दृष्टि में उस स्तम्भ में और उसमें कोई अन्तर नहीं मालूम होता था।

मैं उसके पास पहुँचा। वह रात का चौकीदार, ल्यूकिच था। वह अत्यन्त नम्र और शान्त स्वभाव का बुड्ढा था।

मैंने उससे कहा—"तुम सोच क्या रहे हो? अपनी सीटी बजाकर तुम लोगों को क्यों नहीं जगाते?"

वह एकटक आग की ओर देख रहा था। अपनी आँखें बिना हटाए उसने नींद से—अथवा नशे से भारी आवाज़ में उत्तर दिया—"अभी, एक मिनट में........."

मैं जानता था कि वह कभी शराब नहीं पीता, पर इस समय उसकी

आँखें एक ऐसे उन्मादक हर्षण से चमक रही थीं कि उसके उत्तर से मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। वह धीमी आवाज में बड़बड़ाते हुए कहने लगा—"ज़रा देखो तो सही, इस आग की चालबाजी पर ग़ौर तो करो! यह शैतान धीरे-धीरे सब कुछ चट करता चला जाता है। चन्द मिनट पहले यह चिमनी के पास एक छोटी-सी शिखा थी, पर ऐसे ढङ्ग से उसने अपनी कारस्तानी शुरू की कि क्या कहने हैं! आग का दृश्य सचमुच बड़े मज़े का होता है, उसे देखते रहने में बड़ा आनन्द आता है!"

इसके बाद वह अपने मुँह से सीटी लगाकर, कुछ कठिनाई से सँभल सीधा खड़ा हुआ, और उस निर्जन स्थान को सीटी की तीखी आवाज़ से गुँजा दिया, और साथ ही अपने हाथ से वह एक rattle को भी घुमाता हुआ बजाता रहा। पर सब समय उसकी आँखें स्थिर, निश्चल भाव से उस स्थान पर गड़ी रहीं जहाँ लाल और सफेद रङ्ग के स्फुलिङ्ग छत की चारों ओर चक्कर लगाते हुए नाच रहे थे, और गहरे काले रङ्ग का धुँआ एक टोप के आकार में पुञ्जीभूत हो रहा था। ल्यूकिच उस धुँए को लक्ष्य करके प्रसन्नता के कारण दाँत दिखाते हुए बोला—"तुम बुड्ढे शैतान!...... पर मैं सोचता हूँ, अब लोगों को सचमुच जगा देना चाहिये।"

इसके बाद हम दोनों 'स्कायर' के चारों ओर दौड़ते हुए लोगों के दरवाजों पर धक्के देने लगे और चिल्लाने लगे—"आग लग गई, आग!"

मैं कर्तव्यवश लोगों को जगा रहा था, पर मेरा हृदय इस मामले में मेरा साथ नहीं देना चाहता। ल्यूकिच जब एक-एक बार सबके दरवाज़ों पर धक्के दे चुका, तो फिर से दौड़कर 'स्कायर' के बीच में चला आया और चिंघाड़ मारते हुए बोला—"आग! आग!" पर उसकी आवाज़ से घबराहट के बजाय स्पष्ट ही हर्ष का भाव प्रकट होता था।

आग की मायावी शक्ति का आकर्षण बड़ा प्रबल है ! मैंने अक्सर इस बात पर ग़ौर किया है कि बड़े-बड़े त्यागी पुरुष भी इसकी सम्मोहकता से अपने को बचा नहीं पाते, मैं स्वयं उसके जादू के प्रभाव से मुक्त नहीं हूँ। लकड़ियों के ढेर में आग लगाने में मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है, और आग की लपटों का दृश्य लगातार कई दिनों तक देखते रहने पर मैं कभी नहीं ऊब सकता——ठीक जिस प्रकार सुन्दर सङ्गीत सुनने से मैं कभी उकता नहीं सकता ।

आग और भाग्य

सन् १८९६ की बात है। निजनी में मज़दूरों के एक निवास-स्थान में भयङ्कर रूप से आग लग गई । आग नीचे से शुरू होकर बड़ी तेज़ी से फैलती चली गई, और दुमञ्ज़िले तक जो लोहे की सीढ़ियाँ बनी हुई थीं वे इस क़दर गरम हो उठीं कि लाल दिखाई देने लगीं । जो बूढ़ी स्त्रियाँ वहाँ रहती थीं वे सब—उनकी संख्या बीस के क़रीब थी—गैस-युक्त धुँए से दम घुटने के कारण जल मरीं ।

मैं उस समय घटनास्थल पर पहुँचा जब आग बहुत-कुछ शान्त हो चुकी थी । सारी छत नीचे गिर गई थी । ईंटों की एक विशाल चौबन्दी के भीतर से, जिसमें लोहे की छड़ें लगी हुई थीं, आग कभी किलकती हुई जान पड़ती थी, कभी खुर्राटें लेती थी, और एक गाढ़ा तैलाक्त धुँआ बाहर को उगल रही थी । खिड़कियों की जलती हुई, रक्त-वर्ण छड़ों से धुँआ सघन कुण्डलियों के आकार में बाहर निकल रहा था, और उस जलते हुए मकान के बहुत उपर तक न उठकर आस-पास के मकानों की छतों में विलीन हो जाता था, और वहाँ से दम घोटनेवाले कुहरे के रूप में सड़कों पर आकर इकट्ठा हो जाता था ।

मेरी बग़ल में कैपिटन सिज़ाएफ़ नामक एक कुख्यात व्यक्ति खड़ा था। यह व्यक्ति शहर के बहुत से मकानों का मालिक था। वह काफ़ी मोटा-घाटा और स्वस्थ दिखाई देता था, हालाँकि उसने जीवन के पचास वर्ष पार कर लिए थे और बड़ा पियक्कड़ था। उसकी दाढ़ी-मूँछ सब साफ़ थी, गालों की हड्डियाँ कुछ उपर को उभरी हुई थीं और छोटी-सी, चञ्चल और अशान्त आँखों का एक जोड़ा हड्डी के दो गहरे गढ़ों के भीतर जैसे जमा दी गई हों। उसके पहनावे से लापरवाही प्रकट होती थी। ऐसा जान पड़ता था जैसे वह जो-कुछ भी पहने है, उसे दर्जी ने उसके लिये तैयार नहीं किया है। उसके सारे व्यक्तित्व से किसी विरस अशोभनता की हवा बहती थी, और मालूम होता था कि अपनी इस अशोभनता से वह स्वयं परिचित है। इस भाव की प्रतिक्रिया इस रूप में देखने में आती थी कि वह प्रत्येक व्यक्ति पर अपना रोब गाँठने की चेष्टा करता था, और सबके साथ बड़ी गुस्ताखी से पेश आता था।

वह आग का दृश्य ऐसी दृष्टि से देख रहा था, जिससे यह व्यक्त होता था कि उसके लिये जीवन और जीवन से सम्बन्ध रखनेवाली सब बातें तमाशे के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। "आग में भुनी हुई बूढ़ी स्त्रियों" की चर्चा करते हुए वह एक दिलजले दार्शनिक की तरह कहता था कि यदि संसार की सब बूढ़ी स्त्रियाँ इसी प्रकार जलकर मर जायँ तो बड़ा अच्छा हो। वह बातें तो कर रहा था, पर किसी कारण से बड़ा चञ्चल और अस्थिर जान पड़ता था। अपने हाथ को वह बार-बार अपने कोट की जेब में डाल रहा था, और फिर उसे बाहर निकाल कर एक विचित्र ढङ्ग से हिलाता था; कुछ समय बाद फिर हाथ भीतर डाल कर चौकन्नी आँखों से इधर-उधर देखता था––यह जानने के लिये कि कोई उसकी हरकतों पर गौर तो नहीं कर रहा है। अन्त में मुझे स्पष्टतया

दिखाई दिया कि उसके हाथ में कागज में लपेटा हुआ एक छोटा-सा पार्सल है, जो एक काले फीते से बँधा था। उस पार्सल को अपनी मुट्ठी में लेकर उसने कई बार आगे को बढ़ाया, और अन्त में अकस्मात् उसे सड़क के उस पार-फेंक दिया, जहाँ आग लगी हुई थी।

मैंने पूछा—"आपने यह क्या चीज़ आग में डाल दी?"

"कोई खास चीज़ नहीं थी। वह केवल मेरा एक अन्धविश्वास था।" यह कहते हुए उसने कनखियों से मेरी ओर देखा। वह अपनी उस क्रिया से बहुत प्रसन्न जान पड़ता था, और मुक्त भाव से मुस्करा रहा था।

मैंने पूछा—"वह किस प्रकार का अन्धविश्वास है?"

"यह न पूछिए, मैं आपको नहीं बता सकता।"

इस घटना के प्रायः दो सप्ताह बाद उसी व्यक्ति से फिर एक बार वेन्सकी नामक वकील के यहाँ मेरी मुलाक़ात हो गई। हमारा मेज़बान काफ़ी पी चुका था, और-कुछ ही समय बाद वह सोफ़ा पर ही सो गया। मुझे आगवाली घटना की याद आई, और मैंने सिज़ाएफ़ से अनुरोध किया कि वह अपने 'अन्धविश्वास' का भेद बताने की कृपा करे। मदिरा की एक घूँट लेकर वह परिहास के-से स्वर में अपना क़िस्सा सुनाने लगा। पर शीघ्र ही मैंने इस बात पर ग़ौर किया कि उसका परिहास का स्वर बनावटी है।

उसने कहा—"आग में मैंने जिस छोटे से पार्सल को फेंका उसमें मेरे दोनों हाथों की उँगलियों के कटे हुए नाख़ून बँधे हुए थे। वास्तव में यह एक अच्छी दिल्लगी है; क्यों है न? जब मेरी आयु उन्नीस वर्ष की थी तब से बराबर मैं अपने नाख़ूनों को काटकर एक पुड़िया में बन्द करके रख देता हूँ, और जब कहीं आग लगती है, तो दो-एक ताम्रखण्डों

के साथ उस पुड़िया को आग में डाल देता हूँ। क्यों ? मैं आरम्भ से सारा क़िस्सा आपको सुनाऊँगा।

"जब मेरी आयु उन्नीस वर्ष की थी, तो चारों ओर से मुझे भयङ्कर विपत्तियों ने आकर घेर लिया था—एक ऐसी स्त्री से मैं प्रेम करने लगा था, जिसे पाना मेरे लिये असम्भव-सा था, मेरे जूते फट चले थे, मेरे पास रुपये-पैसे का निपट अभाव था, यहाँ तक कि मैं विश्वविद्यालय की पढ़ाई का खर्चा बर्दाश्त करने में भी असमर्थ हो गया था। इन सब दुर्भाग्यों के कारण मुझे घोर निराशा ने धर दबाया और मैंने विष खाकर आत्महत्या करने का निश्चय कर लिया। 'सायनाइड आफ़ पोटेसियम' नामक घातक विष कहीं से जुटाकर मैं स्ट्रास्टज़ोइ बूलवार नामक स्थान में चला गया। वहाँ पादड़ियों के एक मठ के पीछे एक बेञ्च था, जिसपर मैं अक्सर आकर बैठा करता था। उसपर बैठ कर मैंने मन-ही-मन कहा—'मास्को, विदा ! जीवन, विदा ! तुम सब जहन्नुम में जाओ !' सहसा मेरा ध्यान इस बात पर गया कि एक मोटे क़द की बुढ़िया मेरी बग़ल में बैठी हुई है। वह काले रंग की पोशाक पहने थी, और उसकी दोनों भौंहें कपाल में एक दूसरे से जुड़ी हुई थीं। उसका चेहरा बहुत भयानक था। वह आँखें फाड़-फाड़कर मेरी ओर देख रही थी और हम दोनों कुछ समय तक चुपचाप एक–दूसरे को देखते रहे। उस समय की वह नीरवता बड़ी अवसादजनक और भयावह थी।

"इसके बाद मैं सहसा बोल उठा—'तुम क्या चाहती हो ?'

"उसने बड़े कर्कश किंतु प्रभावपूर्ण स्वर में कहा—'नौजवान, मुझे अपना बाँया हाथ दिखाओ !"

इतना कहकर सिज़ाएफ़ ने एक बार हमारे मेजबान की ओर देखा,

जो खुर्राटे ले रहा था, और इसके बाद एक बार कमरे के चारों कोनों पर बड़े ग़ौर से नज़र डालते हुए धीमे किंतु गम्भीर स्वर में कहा—"मैंने उसकी ओर अपना हाथ बढ़ा दिया और—मैं शपथपूर्वक कहता हूँ—उसकी पैनी दृष्टि जैसे मेरे चमड़े को छू रही हो, मुझे ऐसा मालूम हुआ। उसने बड़ी देर तक ध्यानपूर्वक मेरी हथेली को देखा, और तब कहा—'तुम्हारे भाग्य में अभी जीना बदा है। तुम अभी दीर्घकाल तक जिओगे, और बड़े सुख और संतोष से रहोगे।'

"मैंने उससे कहा कि मैं न ज्योतिष पर विश्वास करता हूँ, न किसी जादू के चमत्कार पर। पर उसने उत्तर दिया—'यही कारण है कि तुम इतने उदास रहते हो, और सब तरफ़ से दुर्भाग्य तुम्हें आ घेरता है। एक बार विश्वास करके परीक्षा कर लो......।'

'कैसे ?'

'मैं तुम्हें बताती हूँ—अपने हाथों की उँगलियों के नाखून काट डालो और उन कटे हुए नाखूनों को किसी ग़ैर के यहाँ की आग में डाल दो।'

'ग़ैर के यहाँ की आग से तुम्हारा आशय क्या है ?'

"उसने कहा—'आश्चर्य है, कि तुम इतनी साधारण सी बात भी नहीं समझ पाते ! जाड़े के दिन किसी सड़क में जलाए गए लकड़ियों के ढेर में, किसी घर में लगी हुई आग में, या अपने किसी मित्र के यहाँ की जलती हुई अँगीठी में तुम्हें कटे हुए नाखूनों को डालना होगा।' चाहे यह कारण हो कि मैं भीतरी मनसे मरना नहीं चाहता था—और वास्तव में आदमी तभी मरता है जब वह किसी कारण से मरने को बाध्य किया जाता है, भले ही वह यह समझ ले कि वह अपनी इच्छा से मर रहा है—या यह कारण रहा हो कि उस बुढ़िया ने मेरे मनमें एक क्षीण

आशा का सञ्चार कर दिया था, बहरहाल मैं उस समय आत्मघात से बच गया। मैं सीधे घर गया और तत्काल मैंने अपने नाखून काटकर उन्हें एक काग़ज़ में लपेटकर रख दिया। मैंने मन-ही-मन कहा—'उस बुढ़िया की जादूगरी की परीक्षा अवश्य करनी होगी।'

"दूसरे ही सप्ताह ठीक मेरे मकान के सामने वाले मकान में आग लग गई। मैंने अपने नाखूनों की पुड़िया को किसी वज़नदार चीज़ के साथ बाँधकर उसे आग की लपटों के बीच में फेंक दिया। इसके बाद मैंने अपने मन में कहा——'चलो, मैंने हवन कर दिया है। अब देखना है कि यज्ञ के देवता मुझे क्या वरदान देते हैं।' मेरा एक मित्र था, जो गणितज्ञ था; वह 'बिलियर्ड्स' के खेल में बहुत निपुण था, और मुझे बड़ी आसानी से हरा दिया करता था। मैंने जादू का प्रभाव आजमाने के उद्देश्य से अपने उस मित्र को खेल के लिये चुनौती दी।

"उसने अवहेलना–सूचक भाव से कहा—'तुम किस हद तक "बढ़ावा" लेकर खेल शुरू करना चाहते हो?'

" 'मैं कुछ भी 'बढ़ावा' नहीं चाहता!'

"खेल शुरू हुआ। मैं जीत गया! आप मेरे हृदय की दशा की कल्पना नहीं कर सकते। मुझे याद है कि एक विचित्र अनुभूति की उत्तेजना के कारण मेरे पाँव काँपने लगे थे और मैं ठीक से खड़ा नहीं हो पाता था। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था जैसे मेरे उपर पवित्र जल का अभिषेक किया गया हो। मैंने अपने मन में कहा—'जुपिटर देवता! जिस दुष्प्राप्य तरुणी से मैं प्रेम करता हूँ, क्या उसके सम्बन्ध में जादू की परीक्षा की जाय? क्या यह सम्भव है कि वहाँ भी मेरी विजय होगी? यदि ऐसा हुआ तो मैं उस घटना को काकताली कभी नहीं समझूँगा।'

"बहरहाल मैं सीधे उस लड़की के पास जा पहुँचा और उसके आगे

मैंने फिर एक बार अपना प्रेम निवेदित किया। आश्चर्य की बात है कि मुझे वहाँ भी बड़ी आसानी से सफलता मिल गई। उस असाधारण सफलता के कारण मैं भयभीत हो उठा और रात-भर मुझे नींद नहीं आई। क्या ये दोनों घटनाएँ केवल काकताली--संयोग--थीं ?

"मैं दो प्रकार की आगों के बीच में रहने लगा—प्रेम और भय। वह मनहूस बुढ़िया नित्य रातके समय मुझे दिखाई देती थी। वह किसी एक कोने पर खड़ी रहती और अपनी घनी, मोटी, जुड़वा भौंहों के नीचे से मेरी ओर बड़े ग़ौर से देखती रहती। मैंने अपनी प्रेमिका से उस बुढ़िया का सारा क़िस्सा कह सुनाया। मेरी वह प्रेमिका किसी एक नाटकीय कम्पनी में अभिनेत्री थी। सभी 'ऐक्ट्रेसों' की तरह वह भी बड़ी अन्धविश्वासिनी थी। मेरी बात सुनकर वह अत्यन्त उत्साहित हो उठी और उसने मुझसे प्रार्थना की—'तब तो तुम बराबर अपने नाखूनों को काटते रहो और कहीं आग लगने पर अवश्य उन्हें डाल दिया करो!' उसका अनुरोध मानकर मैं बराबर नाखूनों को काटकर जमा करता, पर यह सब होते हुए भी मैं कभी एक क्षणके लिये भी यह बात नहीं भूलना चाहता था कि यह सब फ़िज़ूल है, और सारी बात का आधार केवल यह तथ्य है कि जब किसी व्यक्ति का विश्वास अपने ऊपर से हट जाता है, तो उसे किसी बाहरी बात पर विश्वास करने की इच्छा होती है।

"पर इस प्रकार के विचार से मेरे भीतर की अशान्ति और उत्तेजना तनिक भी ठण्डी नहीं पड़ी। जब कुछ कटे हुए नाखून जमा हो गए, तो मैंने फिर एक बार आग में डाल दिया। इसके कुछ ही समय बाद शैतान ने एक और तमाशा दिखाया। एक गञ्जी खोपड़ीवाला नाटे क़द का आदमी मेरे पास आया। उसने कहा--निजनी-नोवोगोरोद में तुम्हारी एक अविवाहिता फूफी की मृत्यु अभी हुई है, और तुम

उसके एकमात्र उत्तराधिकारी हो। इसके पहले मैं कभी इस तरह की किसी भी फूफी के अस्तित्व से परिचित नहीं था। असल में मैं सगे-सम्बन्धियों से उसी प्रकार रहित था जिस प्रकार रुपये-पैसे से। केवल दो रिश्तेदारों की बात मुझे मालूम थी——एक मेरे नाना, जो एक अनाथालय में रहते थे और एक चाचा, जो एक बहुत बड़े परिवार के भार से ग्रस्त थे और जिन्हें मैंने जीवन में कभी नहीं देखा था।

"मैंने उस नाटे क़द के गञ्जे की ओर देखा, और नम्रता के साथ कहा——'शायद तुम शैतान हो ?' मेरी बात से उसने अपने को अपमानित अनुभव किया। उसने कहा कि वह एक वकील है और मेरी फूफी से उसका बहुत दिनों से परिचय रहा है।

"मैंने कहा—'शायद किसी बुढ़िया ने तुम्हें भेजा है ?'

" 'जी हाँ उन्हें बूढ़ी ही समझिए, क्योंकि मरने के समय उनकी आयु सत्तावन के क़रीब हो चली थी'।"

"मैंने उस शख्स की ओर एक घृणा की-सी दृष्टि से देखा, और उसे सूचित कर दिया कि उसके परिश्रम के लिये कुछ देने को मेरे पास रुपया नहीं है।

"उसने कहा—'जब आपको अपनी फूफी की सम्पत्ति मिल जायगी, तब आप मुझे दे सकते हैं।'

"वह एक बड़ा मनहूस बुड्ढा था, बड़ा बना हुआ और घाघ। मुझे यह ताड़ने में देर न लगी कि वह मुझसे घृणा करता है। वह मुझे इस शहर में लाया। मैं जो यहाँ दो मकानों का मालिक बन गया हूँ, इसका कारण वही घटना है। अपने जीवन के प्रारम्भ में मैं यह कल्पना किया करता था कि मुझे लकड़ी का बना हुआ एक मकान मिल जाय, जिसमें तीन खिड़कियाँ हों, और साथ ही पाँच सौ रूबल नक़द मेरे पास

हों, और एक गाय हो। पर शैतान की चेष्टा से मुझे मिल गए दो मकान, दुकानें, गोदाम, किराएदार आदि-आदि। अच्छी दिल्लगी रही! पर मैं किसी अज्ञात कारण से इस सारे चक्कर से तनिक भी शान्ति और सन्तोष नहीं पाता हूँ। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि मेरा सारा जीवन किसी अज्ञात, रहस्यमयी शक्ति की इच्छा के अनुसार चलता है; और मेरे भीतर अग्निदेवता के प्रति एक विचित्र भावना जाग पड़ी है—ठीक जिस प्रकार किसी बर्बर के हृदय में एक ऐसे अलौकिक प्राणी के प्रति भाव-विह्वलता जगती है जो आनन्द और विनाश की सम्मिलित शक्तियों को अपने इच्छानुसार परिचालित करने में समर्थ हो।

"मैंने अपने मन में कहा—'नहीं, मैं इस प्रकार के चक्कर में नहीं पड़ना चाहता, भाड़ में जाय यह सब, मैं इन सब बातों से कोई वास्ता नहीं रखने का।'

"यह सोचकर मैं अपनी सम्पत्ति को नष्ट करने पर तुल गया, और जञ्ज़ीर से बँधे हुए कुत्ते की तरह अत्यन्त चञ्चल और अस्थिर जीवन बिताने लगा। पर अब भी मैं अपने नाखूनों को काटकर इकट्ठा करता चला जाता हूँ, और मौका देखकर उन्हें 'ग़ैर के यहाँ की आग' में डालता रहता हूँ। मैं ठीक तरह से आपको बताने में असमर्थ हूँ कि मैं ऐसा क्यों करता हूँ। मैं यह भी निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि मैं जादू-टोने पर विश्वास करता हूँ या नहीं। पर कुछ भी हो, उस बुढ़िया को मैं नहीं भूल पाता जिसने मुझे इस चक्कर में डाला था, हालाँकि मेरा विश्वास है कि वह कभी मर चुकी है।

"पर इन सब बातों का अर्थ क्या है? मैंने विश्वविद्यालय में पढ़ना छोड़ दिया और इस समय मैं एक अत्यन्त लज्जाजनक और घृणास्पद रूप से सुखमय जीवन बिता रहा हूँ। एक प्रकार की अशान्त

धृष्टता का अनुभव मैं सब समय करता रहता हूँ, जो मुझे प्रत्येक सम्भव उपाय से पुलिस के धैर्य, अपनी शारीरिक सहनशीलता और भाग्य की सदाशयता की परीक्षा करते रहने के लिये उकसाता रहता है। और मज़ा यह है कि प्रत्येक विपत्ति से मैं बिना लेशमात्र आँच के साफ़ बचकर निकल जाता हूँ। पर यह सब होते हुए भी मैं सब समय निश्चय-पूर्वक इस बात पर विश्वास किए रहता हूँ कि इसी दम कोई व्यक्ति मेरे पास आकर यह कहने ही वाला है कि—'इधर तशरीफ़ लाइए जनाब !'वह व्यक्ति कौन हो सकता है, और वह मुझे किधर ढकेलते हुए ले चलेगा यह मैं नहीं जानता—पर मैं उस व्यक्ति की प्रतीक्षा में बैठा हूँ ! मैंने स्वेडेनबोर्ग, याकोब बोएम, दुप्रेनिल आदि मनीषियों की रचनाएँ पढ़नी शुरू कीं। पर मुझे वे किस क़दर थोथी जान पड़ी यह मैं कैसे बताऊँ ! मुझे ऐसा जान पड़ा कि उन लेखकों ने मानवी बुद्धि का अपमान किया है। रात में मैं बीच-बीच में अकस्मात् चौंकता हुआ जग पड़ता हूँ। किस लिये ? बात वही है। यदि संसार में शैतान का क्रियाचक्र एक रूप में चल सकता है, तो दूसरे रूप में क्यों नहीं चल सकता, जो पहलेवाले से अच्छा या बुरा भी हो सकता है ? मुझे कभी-कभी यह सोचकर बड़ा आश्चर्य होता है कि मैं पागल क्यों नहीं हो जाता। मैं एक अविवाहित धनी हूँ; स्त्रियाँ मुझे चाहती हैं; ताश के खेलों में मैं घृणास्पद रूप से भाग्यशाली हूँ—मैंने इतना रुपया इन खेलों में जीता है कि जीतते-जीतते उकता गया हूँ। मेरे मित्रों में से कोई भी व्यक्ति जुआचोर या गुण्डा नहीं है। वे सब शराबी हैं, सन्देह नहीं, पर हैं सब बड़े भले आदमी। इस प्रकार मैंने अपने जीवन के पचास वर्ष बिता दिए हैं, और इस आयु में प्रत्येक व्यक्ति को किसी-न-किसी प्रकार का चरम अनुभव होना चाहिये—कहा जाता है कि यह

एक आमफ़हम सज़ा है। कुछ भी हो, मैं उस चरम क्षण की प्रतीक्षा में हूँ।

"मैं एक बार कीव में किसी काम से गया हुआ था। वहाँ मैं पोलैण्ड निवासी किसी रईस से उलझ पड़ा, जिसके फलस्वरूप उसने मुझे द्वन्द्व युद्ध के लिये चुनौती दी। मैंने अपने मन में कहा—'ठीक है, जिस चरम क्षण की प्रतीक्षा मैं इतने दिनों से कर रहा था, वह इस रूप में आया—ऐसा जान पड़ता है!' जिस दिन द्वन्द्व युद्ध होने-वाला था उसके ठीक एक दिन आगे कीव के अन्तर्गत पोडोल नामक स्थान में यहूदियों के कुछ मकानों में आग लग गई। मैं तत्काल घटना-स्थल पर पहुँचा, और तब तक मैंने जो कटे हुए नाखून इकट्ठा कर रखे थे उन्हें आग में डालते हुए मन ही मन यह प्रार्थना की कि कल द्वन्द्वयुद्ध में मैं जान से मार डाला जाऊँ या कम-से-कम घातक चोट का शिकार बनूँ! पर उसी दिन सन्ध्या को मुझे मालूम हुआ कि मेरा पौलैण्ड-निवासी प्रतिद्वन्द्वी जब घोड़े पर सवार होकर बाहर निकला तो उसका घोड़ा किसी एक स्थान में किसी कारण से भड़क उठा और उसने सवार को गिरा दिया, जिसके फलस्वरूप सवार की दाहिनी बाँह और सिरपर सख़्त चोट आई है। जिस व्यक्ति ने मुझे इस घटना की सूचना दी उससे मैंने पूछा कि दुर्घटना का मूल कारण क्या है। उसने कहा—'एक बूढ़ी स्त्री ने अपने को घोड़े के पाँवों के नीचे गिरा दिया।'

"एक बूढ़ी स्त्री? शैतान उसे बरबाद करे! क्या यह घटना भी संयोग की बात थी? जब मैंने यह हाल सुना तो जीवन में प्रथम बार उस दिन मुझे हिस्टीरिया का 'फिट' आ गया। मुझे जर्मनी के अन्तर्गत सैक्सोनी के किसी पहाड़ी स्थान की एक आरोग्यशाला में भेज दिया गया। मैंने जर्मन डाक्टर से अपना सारा क़िस्सा कह सुनाया।

"किस्सा सुनकर जर्मन ने कहा—'ओह ! यह एक बड़ा दिलचस्प 'केस' है। उसने मेरी उस मानसिक बीमारी को लैटिन भाषा में एक कीड़े का-सा नाम दिया। इसके बाद उसने आरोग्यदायक जलकी फुहारों में स्नान करने की हिदायत दी और दो मास तक मुझे पहाड़ी में ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर दौड़ाया। पर इस प्रकार के प्रयोगों का फल कुछ भी नहीं हुआ। मेरी मानसिक अवस्था में कोई परिवर्तन नहीं हुआ; और सब समय मेरे मनमें आग का दृश्य देखने की इच्छा बनी रहती थी। आप मेरी बातका आशय समझ गए न ? मैं आग के दृश्यों के लिये लालायित रहता था ! और साथ ही मैं अपने कटे हुए नाखूनों को इकट्ठा करता चला गया। अपने मनमें मैं कहता था—'मैं जानता हूँ कि यह सब निरर्थक और मूर्खता पूर्ण है—अन्धविश्वास के सिवा और कुछ नहीं है।' पर यह सोचने पर भी मैं नाखूनों को इकट्ठा करता चला गया।

"इसके कुछ ही समय बाद मैंने अपने मकानों को गिर्वी रखा, क्योंकि जो धन मेरे पास था, वह सब मैं प्रायः उड़ा चुका था। मैंने अपने मन से प्रश्न किया—'अब इसके बाद शैतान का कौन-सा चक्कर दिखाई देनेवाला है ?' मैं न्यूरेम्बुर्ग, औग्सबुर्ग आदि स्थानों में भ्रमण करता रहा, पर यह भ्रमण-चक्र मुझे बड़ा नीरस लग रहा था। एक दिन मैं किसी होटल के हॉल की अँगीठी के पास बैठा हुआ आग ताप रहा था। उस अँगीठी में मैंने अपने कटे हुए नाखूनों को डाल दिया। दूसरे दिन सुबह जब मैं बिस्तर पर ही था, तो किसीने मेरे कमरे का दरवाज़ा खटखटाया। एक तार आया हुआ था। मैंने उसे खोलकर जो पढ़ा तो मालूम हुआ कि मेरे तीन सरकारी "शेयरों" में से एक ने पचास हज़ार रूबल जीते हैं, और दूसरे ने एक हज़ार रूबल ! मैं पलँग

पर बैठा-बैठा भय से चारों ओर देखने लगा, और बड़ी भयङ्कर गालियाँ मेरे मुँहसे निकलने लगीं। मैं एक स्त्री की तरह किसी अज्ञात आशङ्का से भयभीत हो उठा।

"इस विचित्र और अस्वाभाविक किस्से को यदि मैं पूरा सुनाऊँ तो बहुत समय लग जायगा। चौबीस वर्षों से मैं इस शैतानी चक्कर की उलझन में पड़ा हुआ हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने अपने विनाश की चेष्टा में कोई भी बात उठा नहीं रखी है। पर, जैसा कि आप स्वयं देखते हैं, मैं बावजूद इस चेष्टा के अधिकाधिक पनपता चला जाता हूँ। अब मैंने तङ्ग आकर इस विषय में किसी प्रकार की चिन्ता करना छोड़ दिया है; चाहे जो कुछ भी हो, मुझे अब किसी बात की परवा नहीं है।"

पर उसके मुखके भावसे व्यक्त होता था कि उसने अभी तक इस विषय की चिन्ता नहीं छोड़ी है। उस मुख पर घृणाका भाव स्पष्ट झलकता था और उसकी तीखी और तङ्ग आँखें क्रोध के कारण चमक रही थीं।

मैंने पूछा—"इस प्रकार सोचने पर भी आप तब क्यों अभी तक कटे हुए नाखूनों को आग में डालते चले जाते हैं?"

"यदि मैं ऐसा न करूँ तो मुझे ऐसा जान पड़ता है कि मेरे लिये जीना असम्भव हो जायगा। मैं स्वयं नहीं जानता कि इसके बाद मुझे और किस बात की प्रतीक्षा है। इस शैतानी चक्कर का अन्त एक-न-एक दिन अवश्य होना चाहिये। यह भी सम्भव है कि इसका अन्त ही न हो, तो क्या मुझे मरने का कोई अवसर ही शैतान नहीं देगा?"

यह कहकर वह दाँतों को दिखाकर विकट रूप से हँसने लगा और उसने अपनी आँखें मूँद लीं। इसके बाद एक सिगार जलाकर उसने धीमी आवाज़ में कहा—

"रसायनशास्त्र आखिर रसायनशास्त्र ही है--फिर भी मुझे ऐसा लगता है कि आग में कोई ऐसा गुप्त, रहस्यात्मक तत्त्व छिपा हुआ है, जो मानवीय बुद्धि के परे है। और आग अपने को अत्यन्त आश्चर्य-जनक रूप से छिपाने में समर्थ है। कोई भी चीज़, कोई भी व्यक्ति उस प्रकार अपने को छिपा नहीं सकता। दबाई हुई रुई का एक छोटा-सा टुकड़ा गन्धक की तेज़ाब की कुछ बूँदें, थोड़ी-सी आक्सीहाइड्रोजन गैस और तब........."

यह कहकर उसने अपनी जबान को चटकारा और फिर चुप हो गया।

मैंने उससे कहा--"मेरा यह ख़याल है कि आपने सारे क़िस्से की असलियत स्वयं अपने इन शब्दों द्वारा बड़े अच्छे ढङ्ग से व्यक्त की है कि 'जब किसी व्यक्ति का विश्वास अपने ऊपर से हट जाता है तो उसे किसी बाहरी बात पर विश्वास करने की इच्छा होती है।'"

उसने इस प्रकार अपना सिर हिलाया जैसे मेरी बात की ताईद करना चाहता हो। पर वास्तव में उसने या तो मेरी बात सुनी नहीं, या उसे समझने की चेष्टा नहीं की, क्योंकि दूसरे ही क्षण उसने कुछ झीखते हुए कहा--"पर यह सारा क़िस्सा एकदम अस्वाभाविक है, आप का क्या ख़याल है? मेरे नाखूनों को वह किस लिये चाहता है, आप इसका कुछ कारण बता सकते हैं?"

* * * *

इस घटना के प्रायः दो वर्ष बाद मैंने सुना कि किसी एक सड़क पर अकस्मात् उसकी मृत्यु हो गई।

आग का अनोखा पुजारी

ज़ोलोत्लित्सकी नामक पुरोहित को अधार्मिकता के अपराध पर तीस वर्ष की क़ैद की सज़ा हुई, और वे तीस वर्ष उसने एक मठ के कारावास में बिताए। एक पत्थर के गढ़े के भीतर एक कालकोठरी में उस सख़्त कैद की सज़ा भुगतने को वह बाध्य किया गया था। ग्यारह हज़ार दिनों और रातों के उस लम्बे चक्कर में उसका एकमात्र साथी और आधार आग थी। उस अधार्मिक पुरोहित को अपनी कालकोठरी की अँगीठी में स्वयं आग जलाने की आज्ञा दे दी गई थी।

वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक काल में ज़ोलोत्लित्सकी को मुक्त कर दिया गया। इस बीच वह अपने अधार्मिक विचारों को तो भूल ही चुका था, साथ ही उसकी प्रायः सभी मानसिक क्रियाएँ बन्द हो चुकी थीं; उसके मन के भीतर की ज्योति एकदम बुझ गई थी। दीर्घ कारावास ने उसकी हड्डियों और पसलियों तक का सब रस सोख लिया था, और उसकी आकृति-प्रकृति पृथ्वी सतह के जीवों से कोई मेल नहीं खाती थी। वह सब समय अपना सिर नीचा किए चलता था——जैसे प्रतिपल उसके मन में यह बात समाई हो कि वह गढ़े के नीचे उतरता चला जाता है, और एक ऐसे स्थान की खोज में है जहाँ वह अपना अत्यन्त करुण और क्षीण शरीर छिपा सके। उसकी निस्तेज आँखों से सब समय पानी चूता रहता था, उसका सिर हिलता रहता था और उसकी असम्बद्ध बातों को समझना असम्भव था। उसकी दाढ़ी का रङ्ग एक प्रकार का हरापन लिए हुए था और उसके पीले मुरझाए हुए चेहरे की तुलना में उसकी विषमता अत्यन्त तीव्रता से व्यक्त होती थी। वह अधपगला हो गया था, और स्पष्ट ही प्रत्येक व्यक्ति से वह आशङ्कित रहता था, पर

साथ ही अपनी भय की भावना को छिपाने की चेष्टा करता रहता था। जब कोई आदमी उसे पुकारता तो वह तत्काल अपना हाथ उठाकर अपनी आँखों के पास ले जाता, जैसे किसी चोट की आशङ्का करके अपने दुर्बल काँपते हुए हाथ से अपने आँखों की रक्षा करना चाहता हो। वह प्रायः सब समय मौन धारण किए रहता, और जब कभी कुछ बोलता भी तो काँपती हुई आवाज़ में फुसफुसाते हुए।

कैदखाने में रहकर वह अग्नि-पूजक बन गया था, और जब कभी उसे अँगीठी में लकड़ियाँ जलाने की स्वतन्त्रता दी जाती तो उसका मुरझाया हुआ चेहरा खिल उठता था। अँगीठी के सामने एक छोटे से स्टूल पर बैठ कर वह बड़े प्रेम से लकड़ियों को जलाता और मन्त्रमुग्ध भाव से आग को जलते हुए देखता रहता, और अपना सिर हिलाते हुए वह मन्त्र बड़बड़ाता, जिसे वह अभी तक नहीं भूला था—

"तू अनन्तकालीन अग्नि है......पापियों को जलाती है...... सर्वव्यापक है......"

वह हौलेहौले जलती हुई लकड़ियों को भीतर की ओर करता रहता, और स्वयं कभी पीछे और कभी आगे की ओर झूलता-सा रहता, जसे अपने सिर को आग के भीतर डालने की तैयारी कर रहा हो। हवा उसकी दाढ़ी के पतले, हरे बालों को अँगीठी के भीतर ले जाने की चेष्टा में रहती।

वह बड़बड़ाता चला जाता—"तेरी इच्छा चरितार्थ होती रहे—तेरी मूर्ति अनन्तकाल तक महिमान्वित होवे—और देखो, वे भाग चले—वे भागे चले जा रहे हैं—आग की मूर्ति के सामने से—जैसे धुँआ आग की मूर्ति के आगे नहीं ठहरता—तेरे नाम का जयजयकार होता रहे—निर्वाणहीन—"

दयाशील लोग उसे घेरे रहते और इस बात पर आश्चर्य प्रकट करते रहते कि किसी आदमी को लोग इस क़दर कैसे सता पाते हैं।

जब ज़ोलोत्नित्सकी ने जब पहलेपहल बिजली का लैम्प देखा, तो एक ग्लास के भीतर क़ैद एकदम सफेद और रङ्गरहित प्रकाश को एक विचित्र रहस्यमय रूप से प्रज्वलित होते देखकर वह आतङ्कित हो उठा। कुछ क्षण तक वह उसकी ओर बड़े ग़ौर से ताकता रहा, इसके बाद अत्यन्त हताश भाव से अपने हाथों को हिलाते हुए व्याकुल भाव से बड़बड़ाने लगा—"यह क्या! आग को भी क़ैद कर लिया गया है!... उफ़! उफ़!......किस लिये? इसमें कहीं शैतान का हाथ तो नहीं है? उफ़—उफ़! क्यों ऐसा किया गया है?"

बड़ी कठिनाई से उसे समझाया-बुझाया गया। उसकी निस्तेज, रङ्गरहित आँखों से आँसुओं की धारा अविरल भाव से बही चली जाती थी। उसका सारा शरीर काँप रहा था, और बड़ी दर्दनाक आहें भरते हुए वह अपने चारों ओर खड़े व्यक्तियों को सम्बोधित करते हुए कहने लगा—

"अरे ईश्वर के दासो! तुम लोग ऐसा क्यों करते हो? सूर्य की किरण को क़ैद करने चले हो! अरे पापियो! अग्निदेवता के रोष का भय करो!"

वह सिसकियाँ भरता रहा, और अपने अगल-बग़ल के आदमियों के कन्धों पर धीरे से अपना काँपता हुआ हाथ रखते हुए व्याकुल स्वर में कहता चला गया—

"अरे, इसे छोड़ दो—मुक्त कर दो!"

अनोखे आवारे

(१)

'डाक्टर' नामक सामयिक पत्र में व्लाडीवोस्टोक से भेजा हुआ यह सम्वाद छपा—

"हमें डाक्टर ए. पी. रियुमिन्सकी की मृत्यु का सम्वाद देते हुए दुःख होता है। डाक्टर रियुमिन्सकी कई वर्षों तक आवारा लोगों का जीवन बिताते रहे। बीमारी की हालत में यह अभागा व्यक्ति शहर के अस्पताल में लाया गया, पर वहाँ अधिकारियों ने उसे भर्ती करने से इनकार कर दिया, और यह कारण बताया कि उसने एक पुराना क़र्ज़ा नहीं चुकाया है। इसके बाद उसे पुलिस स्टेशन में ले जाया गया और वहीं उसकी मृत्यु हुई। उसकी मृत्यु के बाद उसके सहचर कुछ आवारों ने उसका एक शानदार जनाज़ा निकाला। इस अवसर पर एक आवारे ने मृत व्यक्ति को लक्ष्य करते हुए कहा—"तुम अपने सगे-सम्बन्धियों द्वारा विस्मृत और परित्यक्त होकर हम लोगों के बीच में रहे। हम लोगों ने एक साथ पापकर्म किए और साथ-साथ कष्ट झेले। अब हम तुम्हें क़ब्र में गाड़ने के उद्देश्य से यहाँ उस अनन्तकालीन विश्राम के स्थान पर लाए हैं।"

जिस व्यक्ति का उल्लेख पूर्वोक्त सम्वाद में किया गया है उससे मैं दो बार मिला था—पहली बार १८९१ में मेकाप नामक स्थान में और दूसरी बार इसके दस वर्ष बाद याल्टा में। लाबा नदी के तट पर बड़ी सड़क पर रास्टाफ़ के आवारों का एक दल काम कर रहा था। सन्ध्या के समय, जब वे लोग दिन-भर का काम समाप्त कर चुके थे और चाय पीने की तैयारी कर रहे थे, तो मैं उनके पास आ पहुँचा। एक मोटे

क़द का आवारा, जिसकी लम्बी दाढ़ी पक चली थी, जली हुई लकड़ियों के उपर केतली चढ़ाकर चाय के लिये पानी गरम कर रहा था। उसके तीन साथी सड़क के किनारे छोटी-सी झाड़ियों पर आराम कर रहे थे, और एक आदमी गरमियों के योग्य हलके सूती कपड़े पहने हुए पत्थरों के एक ढेर के ऊपर बैठा हुआ था। उसके सिरपर एक चौड़ी दीवार की फूस की टोप थी और पाँवों में सफ़ेद रङ्ग के जूते थे। वह अपनी उँगलियों से एक सिगरेट पकड़े था। सिगरेट से निकलनेवाले धुएँ को एक बेत के सोंटे से काटने की चेष्टा करते हुए वह अपने आस-पास व्यक्तियों की ओर बिना देखे उनसे बातें कर रहा था।

अस्तङ्गत सूर्य की निस्तेज रक्त आभा लावा नदी के नीले पानी पर कम्पित हो रही थी। चारों ओर दूर तक फैली हुई समतल भूमि ऐसी मालूम हो रही थी जैसे उसका मुण्डन कर दिया गया हो। उसका रङ्ग लोहे पर लगे हुए जङ्ग की तरह दिखाई दे रहा था। पुआल की विशाल गञ्जियाँ नदी के उस पार गोटे और किनारी के ढेर की तरह चमचमा रही थीं। कुहरे से मटमैले क्षितिज के उपर बैंजनी रङ्ग का पहाड़ आकाश से मिलन की आकांक्षा से उपर उठा हुआ था; और दूर कहीं से अनाज कूटने की एक मशीन बड़ी धीरता के साथ निरन्तर घरर-घरर शब्द करती जाती थी।

जो व्यक्ति पत्थर पर बैठा हुआ था उसने पास ही बैठे हुए एक युवक से पूछा—"शिकायत क्या है ?"

युवक ने, जिसके सूजे हुए मुख से यह पता चलता था वह जलन्धर रोग से पीड़ित है, उत्तर में कहा—"मेरी आँखों में धूल झोंकने की चेष्टा न कीजिए, जनाब ! मैंने स्वयं भी डाक्टरी की शिक्षा पाई है।"

"अच्छा, यह बात है ?"

"जी हाँ।"

"यह बात है!"—वही बात फिर एक बार दुहराते हुए दूसरे व्यक्ति ने अपने सोंटे को हिलाते हुए उससे धुँए को काटने की चेष्टा की। इसके बाद उसने मेरी ओर एक विचित्र दृष्टि से देखा, और पूछा—"नौजवान, तुम कौन हो?"

"केवल एक नौजवान हूँ।"

मेरा यह उत्तर सुनकर आवारा मुस्कराया। उसकी आँखें बाहर को उभरी हुई-सी थीं और बड़ी सतेज जान पड़ती थीं। ऐसा बोध होता था जैसे वे व्यङ्गपूर्वक मुस्करा रही हों और मेरे मुख पर गड़ी हुई हों। उस रूखी और सर्वशोषी दृष्टि से मुझे एक ऐसी अप्रिय गुदगुदी का-सा अनुभव होता था, जिसकी यदि अभी तक मेरे मन में ताज़ा बनी हुई है। उसकी दाढ़ी-मूँछ सफ़ाचट थी, और उसका चेहरा साफ़-सुथरा और सुन्दर था। यह बात स्पष्ट प्रकट हो जाती थी कि आवारों के साथ जीवन बिताने पर भी उसके मन में अभी तक अपने पद के अभिमान का भाव बना हुआ था। जब एक आवारा सालस भाव से लुढ़कते हुए उसके सङ्घर्ष में आता था, तो वह चौंकता हुआ अपने पाँव को उस स्थान से हटा लेता था, और अपने पतले सफ़ेद हाथ से आगाही के बतौर अपने सोंटे को उपर उठाता था।

वह अपनी एक उँगली में सोने की अँगूठी पहने था, जो 'दुर्भाग्य से रक्षा करनेवाले' क़ीमती पत्थर से जड़ी थी। उस पत्थर का इन्द्रधनुषी रङ्ग उसकी आँखों की अभिमान-भरी चमक से मेल खाता था। उसकी आवाज़ धीर-गम्भीर थी, पर साथ ही भड़कानेवाली थी। अपनी उस अनोखी आवाज़ में वह लोगों से पूछता रहता था कि वे कौन हैं, कहाँ से आए हैं, क्या करते हैं। जब कोई व्यक्ति अनिच्छा से, कुछ नाराज़गी-सी

प्रकट करते हुए उत्तर देता, तो भी उसका उत्साह तनिक भी ठण्डा न पड़ता, और अपनी मर्मभेदी दृष्टि को आन्दोलित करते हुए वह प्रश्न पर प्रश्न करता चला जाता।

जिस व्यक्ति ने अपने को डाक्टरी शिक्षा-प्राप्त बताया था उसे सम्बोधित करते हुए सोंटेवाले व्यक्ति ने कहा—"यदि प्रत्येक व्यक्ति तुम्हारी तरह उत्तर-दायित्वहीन रूप से जीवन बितावे तो क्या हाल होगा?"

डाक्टर ने क्रोधपूर्वक बड़बड़ाते हुए उत्तर दिया—"मैं इस बात की क्या परवा करता हूँ! जो दाढ़ीवाला व्यक्ति आग के पास बैठा हुआ था, उसने इस बात पर डाक्टर का साथ देते हुए सोंटेवाले व्यक्ति से कहा—"और तुम अपने बारे में नहीं सोचते? इसे कहते हैं—समझे!"

सहसा, आश्चर्यजनक शीघ्रता के साथ, रात के अन्धकार ने चारों ओर अपना जाल फैला दिया। आकाश में मोटी-मोटी बूँदों की तरह तारे छिटक आए। उस पार नदी का पानी काले मख़मल की तरह स्पन्दित होने लगा, और सुनहरे स्फुलिङ्ग इधर-उधर जगमगाने लगे। उस गम्भीर तथा विषादपूर्ण स्तब्धता में तमाखु की तीखी और कड़वी गन्ध किसी कारण से अधिक उग्र मालूम होती थी। वे सब लोग अपने-अपने झोलों से रोटी और मांस लाकर खाने लगे, और सोंटेवाला भद्रपुरुष बेत को अपने जूते पर मारता हुआ प्रश्नों का ताँता बनाए रहा। उसने कहा—"यदि जीवन की शृङ्खला से प्रत्येक कड़ी को तोड़कर अलग कर दिया जाय, तो क्या होगा?"

पके हुए बालों वाले व्यक्ति ने कुछ खीझकर सहसा उत्तर दिया—"कुछ भी नहीं होगा।"

नदी के उस पार किसी स्थान से किसी धीमी गाड़ी के चलने से 'चरर-चूँ चरर-चूँ' का शब्द सुनाई देता था और कोई एक छोटी-सी

चिड़िया सीटी बजाने की सी आवाज़ निकाल रही थी। आग बुझती चली जाती थी, और लकड़ी के जले हुए टुकड़े निःशब्द टूटते जाते थे।

कुछ दूर से किसी स्त्री को स्पष्ट शब्दों में पुकारते सुनाई दिया—"आर्केडी पेट्रोविच !"

सोंटेवाला व्यक्ति तत्काल उठ खड़ा हुआ, और सोंटे से अपने घुटने की धूल झाड़ते हुए, और अपने साथियों को बिदाई का अभिवादन जनाते हुए चला गया। नदी के किनारे-किनारे चलते हुए वह अन्धकार में विलीन हो गया।

उसके चले जाने पर मैंने उपस्थित व्यक्तियों से पूछा—"यह आदमी कौन है ?" मेरे प्रश्न के उत्तर में वे लोग सब एक साथ बोल उठे—"केवल शैतान ही जानता होगा कि वह कौन है।" "सुना जाता है वह यहाँ क़ज्ज़ाकों की बस्ती में रहता है।" "कहता है कि मैं एक डाक्टर हूँ।"

वे लोग जानबूझकर ऊँची आवाज़ में बोले, जैसे उस आदमी को यह जताना चाहते हों कि उसके बारे में उन लोगों की क्या धारणा है। एक आवारा, जो दुबला-पतला था और जिसके सिर के बाल लाल रङ्ग के थे और चेहरे में घावों के चिह्न वर्तमान थे, ज़मीन पर चारों खाने चित लेट गया। आकाश की ओर देखते हुए वह बोला—"किसी तारे पर थूकने से हम वहाँ तक नहीं पहुँच सकते।"

डाक्टरी की शिक्षा पाए हुए नौजवान ने बड़बड़ाते हुए, शिकायत के स्वर में कहा—"इससे बेहतर यह होगा कि हम टर्की के रास्ते की खोज करें। तुर्क लोग बड़े भले मानस होते हैं। मैं यहाँ के जीवन से उकता गया हूँ।"

* * * *

अनेक वर्ष बादकी बात है। याल्टा में मैं ध्मित्री नार्किसोविच मैमिन–सिबिरियाक नामक व्यक्तिकी खोज में था। शहर के जिस पार्क में उसके मिलनेकी सम्भावना थी वहाँ जब मैंने उसे नहीं पाया, तो मैं उसके बोर्डिंग–हाउस में उससे मिलने गया। ज्योंही मैंने उसके कमरे में प्रवेश किया त्योंही तनिक बाहर को उभरी हुई-सी आँखों के एक जोड़े से मेरा आमना-सामना हो गया, जिनकी तेज चमक ने मुझे तत्काल लाबा नदी के तट की उस रात की याद दिला दी, जब मैं आवारों के बीच में गरमियों की पोशाक पहने हुए डाक्टर से मिला था।

ध्मित्री नार्किसोविच ने अपने छोटे से मांसल हाथ से अपने अतिथि का ध्यान मेरी ओर आकर्षित करते हुए कहा—"मैं आपसे परिचय कराता हूँ। यह एक ज़हरीली क़िस्मका जीव है!"

अतिथि ने यह सुनकर अपना सिर तनिक ऊपरको उठाया और फिर नीचे कर लिया। अपनी ठुड्डीको उसने मेज़के किनारे से मिला लिया, जिससे ऐसा जान पड़ता था कि उसका सिर धड़से अलग कर दिया गया है। वह दुबक कर बैठा हुआ था, उसकी कुर्सी मेज़ से यथासम्भव पीछे को हटी हुई थी, और उसके हाथ उसके कपड़ों के भीतर छिपे हुए थे। उसके गञ्जे सिरकी दोनों ओरसे गंगा-जमुनी बालों के दो गुच्छे दो सींगों की तरह ऊपरको उभरे हुए थे, जिनके नीचे दो छोटे-से कान दिखाई देते थे। उसके कानोंकी बनावट एक निश्चित प्रकार की थी, और उनके नीचेका मांसल हिस्सा सूजा हुआ–सा मालूम होता था। उसकी ठुड्डी के बाल सफ़ाचट थे, पर उसकी नाक के नीचे दोनों ओर से मूँछें ऊपर को उठी हुई थीं और उसे एक सेना-नायक का-सा रूप प्रदान कर रही थीं। वह एक नीली कमीज़ पहने था। उसके गलेका कालर फटा हुआ था और उसमें बटन नहीं थे। उस कालर के भीतर उसकी मैली गर्दन

और मज़बूत कन्धे के कुछ हिस्से दिखाई दे रहे थे। वह इस तरह बैठा हुआ था कि जान पड़ता था जैसे वह उछलकर मेज़को लाँघने की तैयारी कर रहा है। उसकी नङ्गी टाँगें उसकी कुर्सी के नीचे से जैसे बाहरको झाँक रही थीं। पाँवों में वह तातारी चप्पल पहने था। वह मुझे बड़े कौतूहल से देख रहा था और एक अलस, गम्भीर स्वरमें बोल रहा था जो मुझे परिचित जान पड़ा।

उसने कहा—"एक विशेष प्रकार का कुकुरमुत्ता होता है, जिसे लैटिन में 'मेरचूलियस लेक्रिमेंस'—अर्थात् 'रोनेवाला छत्रक' कहते हैं। इस छत्रक की यह विशेषता होती है कि वह वायुमण्डल से नमी खींच लेता है। जब वह किसी पेड़को पकड़ लेता है तो वह पेड़ आश्चर्यजनक शीघ्रता से नष्ट होने लगता है; और यदि किसी नये मकान की एक भी धरन पर वह अपना अधिकार जमा लेता है, तो सारा मकान सड़ने लगता है।"

इसके बाद अपना सिर ऊपर को उठाकर डाक्टर धीरे से बियर पीने लगा। जब वह पीता था, तो उसकी दोनों ओर बालों का उभरा हुआ गुच्छा हिलता रहता था। म्रित्री नार्किसोविच, जो पहले ही काफ़ी पी चुका था अपनी बड़ी-बड़ी आँखों को घुमाते हुए और एक छोटे-से 'पाइप' को अपनी आर्मीनियन नाक से प्रायः सटाकर उससे धुँआ निकालते हुए बड़े गौर से डाक्टर की बातें सुन रहा था। वह बीच-बीच में अपना सिर हिलाता जाता था, और उसका गोलाकार शरीर कुर्सी पर नीचे की ओर धँसता चला जाता था। जब उसके अतिथि ने शराब पीना शुरू किया, तो उसने मेरी ओर कर।देख धीमे स्वर में कहा—"जब से यह आया है तब से बराबर झूठ बोलता चला जाता है।

अतिथि ने अपना गिलास ख़ाली करके उसे फिर बियर से भरा, और

झाग में भींगी हुई अपनी मूँछोंको अपनी ज़बान से साफ़ करने की चेष्टा करते हुए बोलता चला गया—"मैं यह कहना चाहता था कि हमारा रूसी साहित्य उसी विशेष प्रकार के कुकुरमुत्ते की तरह है। वह जीवन से नमी और गन्दगी खींचकर अपने में मिला लेता है, और जो भी स्वस्थ व्यक्ति उसके संसर्ग में आता है उसे अपनी सड़न से विषाक्त करके छोड़ता है।"

द्मित्री नार्किसोविच ने अपने कुहने से मुझे टहोका देते हुए व्यङ्ग के तौर पर कहा—"कहो, तुम्हारी इस सम्बन्ध में क्या राय है?"

अतिथि ने उसी निर्विकार भावसे अपनी बातको दुहराते हुए कहा-"साहित्य उसी कुकुरमुत्तेकी तरह अस्वस्थ और सड़न पैदा करनेवाला है।"

अकस्मात् द्मित्री नार्किसोविचका माथा गरम हो उठा और वह साहित्य के उस कटु आलोचकको भयङ्कर रूप से गालियाँ देने लगा। बियरकी एक ख़ाली बोतल हाथमें लेकर उसे मेज़पर पटका। इस भयसे कि कहीं वह अतिथिकी गञ्जी खोपड़ी पर वह बोतल न दे मारे, मैंने उससे प्रस्ताव किया कि वह मेरे साथ टहलने चले। मेरी बात सुनकर उसका अतिथि उठ खड़ा हुआ और एक विचित्र अशिष्ट और कृत्रिम ढङ्ग से जम्हाई लेते हुए वह बोला—"मैं टहलने के लिये जाता हूँ।" यह कहते हुए वह मुस्कराया और एक अभ्यस्त पैदल-यात्रीकी तरह हलके और तेज क़दमों से बाहर चला गया।

द्मित्री नार्किसोविचने मुझसे कहा कि वह आदमी उसे बन्दर पर मिला था, और अपनी उड़ती बातों से उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के बाद उससे चिमट-सा गया। दो दिनसे वह साहित्य के विरुद्ध तरह-तरह के लाञ्छन लगाते हुए विष उगल रहा था, और उसे परेशान किए था।

उसने कहा--"मैं उससे पिण्ड नहीं छुड़ा पाता। वह जोंककी तरह मुझसे चिपट गया है, और स्पष्ट शब्दों में उसे दुतकारनेका साहस मुझे नहीं होता। कुछ भी हो, इतना अवश्य है कि वह बदमाश होने पर भी सुसंस्कृत है। उसका नाम डाक्टर आर्केडी रियुमिन्सकी या रियुमिन है; बात सम्भव है, इस नामकी उत्पत्ति 'रियुमका' (शराबका गिलास) से हुई है। वह बड़ा चतुर शैतान है, और मूर्तिमान पापके समान दुष्ट है! ऊँटकी तरह पीता चला जाता है और कभी नशे में नहीं आता! कल मैं दिन भर उसके साथ शराब पीता रहा। उसने मुझसे बताया कि वह यहाँ अपनी पत्नी से मिलने आया हुआ है। जिसे उसने अपनी पत्नी बताया है वह एक मशहूर अभिनेत्री है। वह वास्तव में आजकल यहाँ आई है। पर मेरा पूर्ण विश्वास है कि वह उस गुण्डेकी पत्नी नहीं है, और वह सरासर झूठ बोल रहा है।

अपनी आँखों को भयङ्कर भावसे घुमाते हुए मैमिन (भित्री नार्किसोविच) व्यङ्गके तौर पर बोला—"तुम्हें यह कहानी के लिये अच्छा मसाला मिल गया है। यह तुम्हारा नायक बन सकता है। क्या बढ़िया आदमी है! संसार-भरके झूठोंका शिरमौर! जो लोग जीवन में असफल रहते हैं वे निश्चयपूर्वक मिथ्यावादी बन जाते हैं! स्वयं दुःखवाद झूठ है, क्योंकि वह असफल व्यक्तियोंका दर्शनवाद है......"

दो दिन बाद मैं रातके समय दार्सानकी पहाड़ियों में निरुद्देश्य भ्रमण कर रहा था। वहाँ वही डाक्टर मुझे फिर मिल गया। वह दोनों टाँगोंको फैलाकर ज़मीन पर बैठा हुआ था। उसके सामने शराबकी एक बोतल रखी हुई थी और काग़ज़ के एक ताव पर कुछ 'सैंडविच' 'सोसाज', खीरा आदि खानेकी चीजें रखी हुई थीं। मैं उसे देखकर ठहर गया और अभिवादन के रूप में मैंने अपनी टोप ऊपरको उठाई।

उसने अपना सिर एक झटके से ऊपरको उठाते हुए मेरी ओर देखा। एक विशेष मुद्रासे मेरा अभिवादन करते हुए उसने कहा--"ओह, आप हैं! क्या आप मेरा साथ देना पसन्द करेंगे? आइए, बैठिए!"

मैं उसकी आज्ञाका पालन करते हुए बैठ गया, और उसने अपनी जमी हुई दृष्टिसे मुझे भाँपते हुए बोतल मेरे हाथ में दी।

उसने कहा--"कोई दूसरा गिलास मेरे पास नहीं है? इसलिये आप को इस बोतल से ही पीना होगा। यह बड़े आश्चर्यकी बात है, सन्देह नहीं, पर मुझे कुछ ऐसा लगता है जैसे मैंने आपको अपने बचपन की अवस्था में कहीं देखा है।"

मैंने कहा--"अपने बचपनकी अवस्था में आपने मुझे नहीं देखा।"

"मैं जानता हूँ कि ऐसा सम्भव नहीं है। मैं निश्चय ही आपसे बीस साल बड़ा हूँगा। पर मैं अपनी तीस वर्षकी आयुके पहले की अवस्थाको बचपन ही समझता हूँ, यह इस कारण कि तब तक मैं तथाकथित 'कल्चर्ड' जीवन बिताया करता था।"

जब वह गम्भीर स्वर में बोलता था तो उसके मुँह से शब्द बड़े सुन्दर और सहज भाव से निकल रहे थे। वह सैनिकों के पहनने-योग्य मोटे छालटीन की कमीज़ और तुर्की पाजामा पहने था, और उसके पाँव के जूतों से मालूम होता था कि उसकी आमदनी खासी अच्छी है। मैंने उसे याद दिलाया कि मुझसे उसकी पहली मुलाक़ात कहाँ हुई थी। वह बड़े गौर से मेरी बात सुन रहा था, और साथ ही घास के एक तिनके से दाँत खोद रहा था।

उसने अपने परिचित कण्ठस्वर में कहा--"अच्छा, यह बात है! इस समय आप क्या कर रहे हैं? आप क्या एक साहित्यिक हैं? सचमुच? आपका नाम क्या है? मैंने तो इसके पहले कभी यह नाम

नहीं सुना । और इसमें आश्चर्य की कोई बात भी नहीं है, क्योंकि मैं वर्तमान साहित्य के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता हूँ और न जानने की इच्छा ही रखता हूँ । आपने इस सम्बन्ध में कल सिबिरियक के यहाँ मेरी राय सुन ही ली है । अच्छा, वह व्यक्ति क्या एक केकड़े से आश्चर्यजनक समानता नहीं रखता ? साहित्य---और—ख़ासकर रूसी साहित्य—एक सड़ी-गली चीज़ है; अधिकांश लोगों के लिये वह विषैला है, और आप-जैसे व्यक्तियों के लिये एक ख़ब्त है ।"

वह बड़ी प्रसन्नता के साथ बहुत देर तक इसी ढङ्ग से बातें करता रहा । मैंने एक बार के लिये भी उसकी कोई बात नहीं काटी और अत्यन्त धैर्यपूर्वक सुनता रहा ।

अन्त में उसने कहा—"आप मेरी बातों का विरोध नहीं करना चाहते ?"

"नहीं ।"

"तो क्या आप मेरे विचारों से सहमत हैं ?"

"नहीं, यह कैसे सम्भव हो सकता है !"

"तब निश्चय ही आप मुझे इस योग्य नहीं समझते कि मेरे विचारों का विरोध किया जाय । क्यों, यही बात है न ?"

"नहीं, यह बात भी नहीं है । पर इतना अवश्य है कि मैं साहित्य की मर्यादा को बहुत ऊँचा समझता हूँ, और इस कारण उसको लेकर किसी व्यक्ति से झगड़ना पसन्द नहीं करता ।"

"ओह तो आपके चुप रहने का कारण यह है ! ख़ूब !"

अपना सिर पीछे की ओर करके, आँखें बन्द किए हुए उसने पहले बोतल से एक-एक घूँट करके शराब पी; इसके बाद एक साँस में उसे ख़तम कर दिया, और अपने ओठों को चटकारने लगा ।

उसने अपनी बात दुहराते हुए कहा—"ख़ूब! आपने एक कट्टर गिर्जा-प्रेमी की तरह बात कही है। जब लुहार अपने कारख़ाने को, जहाज़ का मल्लाह अपने जहाज़ को, वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला को गिर्जा समझने लगेगा तभी मानव अपनी दुष्टता, ख़ामख़याली और बुरी आदतों से दूसरों की प्रगति में विघ्न पहुँचाए बिना रह सकेगा। सुख और सन्तोषपूर्वक रहने का अर्थ यह है कि आदमी अन्धों की तरह रहे, और जिस चीज को न देखना चाहे उसे न देखे, सुख की अवस्था प्रायः यही है—एक एकान्त शान्तिपूर्ण कोना जिसमें आदमी अपने को छिपा सके। इसके लिये एक छोटी सी अँधेरी कोठरी काफ़ी है। आपने क्या शातोब्रियाँ लिखित 'क़ब्र से लिखी गई चिट्ठियाँ' नामक रचना पढ़ी है! उस पुस्तक में एक स्थान पर उसने कहा है—'सुख एक निर्जन द्वीप की तरह है, जिसमें केवल मेरी कल्पना द्वारा सृष्ट प्राणी निवास करते हैं।"

वह एक कालकोठरी की भयङ्कर निर्जनता से अभी-अभी बाहर निकले हुए व्यक्ति की तरह बोल रहा था, जैसे इस बात की परीक्षा लेना चाहता हो कि वह पिछले जीवन में सीखे हुए शब्दों को कहीं भूल तो नहीं गया है।

शहर से, जो कि कुछ ही दूरी पर था, एक पियानों का बजने का शब्द सुनाई दे रहा था, और जहाज़ के घाट पर से घोड़ों के टापों की आवाज़ आ रही थी। सारे शहर में एक काली शून्यता छाई हुई थी; और दूर एक जहाज़ की रोशनी रात्रि के अन्धकार के बीच एक सुनहरे गुबरैले की तरह रेंगती हुई-सी जान पड़ती थी। वह प्रकाश अगाध समुद्र के आस्तित्व की याद दिला रहा था। मेरा साथी शून्य की ओर देख रहा था और उसकी आँखें मुझे उस क़ीमती, चमकीले पत्थर की

याद दिला रही थीं जो उस रात, लाबा नदी के किनारे, उसकी अँगूठी में अत्यन्त सुन्दरता से चमक रही थी।

उसने फिर बोलना शुरू किया--"सुख वह चीज़ है--जब आदमी अपने निज़त्व को अत्यन्त सफलतापूर्वक खोज लेता है, और अपने उस अनुसंधान से संतोष का अनुभव करता है।"

जब सिगरेट पीता हुआ ज़ोर से दम लगाता था तो उसके प्रकाश से उसकी पतली और सीधी नाक, खुरदरे और नुकीले बालोंवाली मूँछ और मटमैले रंग की ठुड्डी चमक उठती थी।

वह कहता चला गया--"अपने निजत्व के प्रति प्रेम सुअर, कुत्ते या और किसी दूसरे जानवर के मन में स्वभावतः उत्पन्न होता है--यह सहज पशुबुद्धि है। मनुष्य स्वभावतः उस चीज़ से प्रेम करेगा जिसका सृजन उसने स्वयं किया हो।"

मैंने पूछा--"और आप किस चीज़ से प्रेम करते हैं?"

उसने तत्काल उत्तर दिया--"आगामी कल से--केवल अपने निज के 'कल' से। मेरा यह सौभाग्य है अपने उस आनेवाले कल के सम्बन्ध में मुझे कुछ भी मालूम नहीं रहता। पर आपके सम्बन्ध में यह बात नहीं कही जा सकती; आप जानते हैं कि कल सुबह उठते ही आप या तो कुछ लिखना शुरू कर देंगे, या कोई ऐसा काम करने लगेंगे जिसे करने के लिये आप बाध्य हों। साथ ही आप यह भी जानते हैं कि सुबह का काम करने के बाद आप उस मोटे केकड़े--मित्री नार्किसोविच से--या और किसी दूसरे मित्र से मिलेंगे। इसके अतिरिक्त आपको अपने कपड़ों के सम्बन्ध में भी सोचना पड़ेगा। पर मेरी बात बिलकुल दूसरी है। मैं नहीं जानता कि कल मुझे क्या खाने की इच्छा होगी, या मैं क्या करूँगा, या किस प्रकार के मनुष्यों से

बातें करूँगा। सम्भवतः आप यह सोच रहे होंगे कि आप एक शराबी, लुच्चे और लफङ्गे की बातें सुन रहे हैं। यदि आपके मनमें इस प्रकार की धारणा जमी हुई है, तो आप ग़लती पर हैं। मैं शुद्ध शराब से घृणा करता हूँ, और केवल बहुत बढ़िया अंगूरी शराब पीता हूँ, और बियर तो बहुत ही कम अवसरों पर पीता हूँ। मैं समाज से वहिष्कृत प्राणी भी नहीं हूँ, बल्कि सच बात तो यह है कि मैंने समाज को बहिष्कृत कर दिया है।"

यह बात उसने ऐसे उत्साह और आवेग के साथ कही कि उसकी सचाई पर मैं अविश्वास न कर सका।

जब मैंने उससे प्रश्न किया कि उसने एक शिक्षित व्यक्ति के सहज-स्वाभाविक जीवन को क्यों त्याग दिया, तो उसने उमङ्ग में आकर मेरे घुटनों पर अपने हाथ से आघात करते हुए हँसकर कहा—"मैं समझ गया हूँ, आप अपनी साहित्य-रचना का मसाला जुटाने की फ़िक्र में हैं!" इसके बाद वह स्वेच्छा से अपने जीवन की कथा सुनाने लगा। उसकी बातों में शेखी अवश्य भरी हुई थी, पर उसकी रामकहानी निश्चय-पूर्वक वैसी ही सची थी जैसी अधिकांश आत्म कथाएँ होती हैं।

उसने कहा—"मैंने अपने शिक्षित जीवन में सबसे पहली भूल यह की कि प्राकृतिक विज्ञान-सम्बन्धी विषयों की ओर मैं अन्धभाव से आकर्षित हो गया। इस पागलपन से प्रेरित होकर मैं युनिवर्सिटी में डाक्टरी की शिक्षा प्राप्त करने लगा। पहले ही वर्ष, जब मैं एक लाश की चीरफाड़ कर रहा था, मुझे मनुष्य की तुच्छता का बोध होने लगा। मैं यह अनुभव करने लगा कि भाग्य की कोई क्रूर विडम्बना मेरे पीछे पड़ गई है। फल यह हुआ कि मानव-मात्र से मुझे घृणा होने लगी और स्वयं अपने से मैं घृणा करने लगा। मुझे ऐसा लगा कि मैं एक ऐसा प्राणी हूँ

जिसका कर्तव्य केवल एक मृतदेह में परिणत होने में समाप्त हो जाता है।

"यह घृणित कार्य मुझे छोड़ देना चाहिये था, पर मैं बलपूर्वक अपनी ज़िद पर डटा रहा, और इच्छाशक्ति के प्रयोग से अपने ऊपर विजय प्राप्त करने की चेष्टा करने लगा। क्या आपने भी कभी अपने ऊपर विजय प्राप्त करने की चेष्टा की है? यह क्रिया उतनी ही असम्भव है जितना अपना सिर काटकर उसके स्थान पर अपने पड़ोसी का सिर जोड़ देना। इस बात की असम्भवता केवल इस तथ्य पर निर्भर नहीं करती कि आपका पड़ोसी अपना सिर देने को राज़ी न होगा।"

अपने इस परिहास से वह स्वयं प्रसन्न हो उठा और बड़े मजे से हँसने लगा। इसके बाद अपनी आँखें बन्द करके उसने एक गहरी साँस लेते हुए शुद्ध और नमकीन हवा को अपने भीतर खींचा।

कुछ देर बाद उसने फिर बोलना शुरू किया—"समुद्र से कैसी आश्चर्यजनक गन्ध आ रही है!......हाँ, तो मैं सोचने लगा कि मनुष्य की आत्मा कहाँ पर है और उसका स्वरूप कैसा है; साथ ही इस बात पर भी विचार करने लगा कि बुद्धि कहाँ पर है और क्या है। इस प्रकार की चिन्ता के फलस्वरूप मैं इस निश्चय पर पहुँचा कि बुद्धि शैतान के एक आधे-अन्धे कुत्ते के सिवा और कुछ भी नहीं है, और वह शरीर की अवस्था पर निर्भर करती है; साथ ही मैंने इस बात पर भी गौर किया कि जब मैं दाँत के दर्द, सिर दर्द या अजीर्ण रोग से पीड़ित रहता हूँ तो सारा संसार मुझे अत्यन्त घृणित मालूम होने लगता है। विचार की सारी क्रिया शारीरिक क्रिया-चक्र से सम्बन्धित है; केवल कल्पना-शक्ति स्वतन्त्र है। यह बात किसी एक अँगरेज पादड़ी की समझ में भली भाँति आ गई थी; पर ईश्वर के लिये आप यह भूल कर

भी न सोचें कि मैं आदर्शवादी हूँ, या और किसी तरह का 'वादी' हूँ। प्रत्येक प्रकार के दर्शनशास्त्र के विरुद्ध मेरे भीतर द्वन्द्व चला करता है, हालाँकि—हालाँकि मैं यह बात अच्छी तरह जानता हूँ कि दर्शन-प्रणाली मस्तिष्क का एक असाध्य रोग है।

"स्पष्ट शब्दों में यह कहना होगा कि मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जो इस प्रकार के सारे मूर्खतापूर्ण चक्कर पर—दूसरों को धोखा देने और अपने-आपको भ्रम में डालने की बातों पर—कभी गम्भीरता से विचार करने की इच्छा नहीं रखता। यह मूर्खतापूर्ण चक्कर है—तथाकथित संस्कृति, वे सब बाहरी और भीतरी ढकोसले और झूठी तड़क-भड़क जो मनुष्यों को श्रम की निरर्थकता के भँवर में गोते खिलाती रहती है। पर सम्भवतः आप संस्कृति के उपासक हैं? यदि ऐसा है तो मैं आपकी भावुकता को ठेस पहुँचाना नहीं चाहता।"

मैंने कहा—"नहीं, आप अपनी बात कहे चले जाइए। मरी भावुकता को कोई ठेस नहीं पहुँचेगी। मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप किस प्रकार के व्यक्ति हैं।"

"अच्छा, सच? तब अच्छी बात है......"

प्रायः सौ चुने हुए शब्दों के प्रयोग द्वारा उस व्यक्ति ने सारी संस्कृति को नष्ट-भ्रष्ट कर देना चाहा। बड़े भयंकर आवेश के साथ उसने ऐसा किया। वह एक ऐसे स्कूली लड़के का-सा क्रोधावेश था जो अपनी पढ़ाई समाप्त करने के बाद अपनी सब किताबों को फाड़कर चीर डालता है। रात की ठंडी हवा में वह सिकुड़-सा गया था। अपना दुबला-पतला और लचीला शरीर लेकर वह दुबका हुआ-सा बैठा था। अपने दोनों हाथों को वह कमीज़ के आस्तीनों में छिपाए था, और उस अवस्था में वह प्रायः एक नवयुवक जान पड़ता था। दूर आकाश

में स्फुलिंगों का एक गुच्छा कुहरे के बीच में शून्य में लटका हुआ-सा मालूम हो रहा था और उत्तर को ओर बहता हुआ-सा चला जा रहा था—रात के अन्धकार और नमी में विलीन होने के लिये। मकानों की खिड़कियों में पीले प्रकाश काँपते हुए दिखाई देते थे और फिर ग़ायब हो जाते थे, जैसे एक-एक करके सब मकान समुद्र के अन्धकार अतल में डुबाए जा रहे हों।

मेरा साथी कहता चला गया—"उन दिनों मैं बड़ा सुन्दर और बुद्धिमान था। मेरी बातचीत का ढङ्ग बड़ा रोचक था और स्त्रियाँ मुझ चाहती थीं। जब मैं तीस वर्ष की अवस्था को पहुँचा तो मैंने एक अभिनेत्री से, जो मुझे चाहती थी, व्याह कर लिया। मैंने अपने हठ के कारण, उससे विवाह किया। वह दूसरी स्त्रियों की अपेक्षा मुझे कम चाहती थी। उस समय मैं यह अनुभव करने लग गया था कि नाटक-घर, सङ्गीत-समारोह, साहित्य, राजनीतिक तर्क-वितर्क आदि मेरे जीवन की धारा से मेल नहीं खा सकते। मैंने बीस, तीस, बल्कि सौ के क़रीब व्यक्तियों को किसी अज्ञात कारण से मानसिक कष्ट पाते और विकट रोगों से पीड़ित होकर समाप्त होते देखा—चेकोव्सकी, आस्ट्रोव्सकी, डास्टाएव्सकी आदि का यही हाल रहा—और इसके बाद ही मुझे एक अत्यन्त घृणित बुढ़िया की याद आई जिसका नाम बुकिना था। वह किसी अस्पताल में नर्स थी। उसमें एक बड़ी नीचतापूर्ण आदत पड़ी हुई थी; वह बीमारों और मौत के चङ्गुल में फँसे हुए व्यक्तियों के आगे 'कुमारी मरियम के स्वप्न' का वर्णन बड़े उत्साह के साथ, स्वयं भी रस लेते हुए किया करती थी।

"'सुसंस्कृत' समाज के बीच में मैं अपने को स्त्रियों की टोपियों की दुकान में एक 'जम्पर' की तरह मालूम करने लगता था। उस दुकान

की कोई भी वस्तु मेरी किसी काम की न थी, फिर भी मुझे उनमें मन मार कर दिलचस्पी लेनी पड़ती थी, यहाँ तक कि शिष्टता के लिहाज़ से उनकी प्रशंसा भी करनी पड़ती थी। जीवन एक सङ्ग्राम है, और शिष्टाचार को एक अञ्जीर के पत्ते की तरह काम में लाकर उससे मानव के भीतर के पशु को छिपाया नहीं जा सकता।

"मेरा गठन बहुत अच्छा था, और पैन्टों के साथ कभी 'ब्रेसेज़' का उपयोग नहीं करता था, क्योंकि उनके बिना ही मेरे पैन्ट मेरे शरीर में ठीक बैठ जाते थे। पर मेरी स्त्री ने इस बात पर हठ करना शुरू किया कि मुझे 'ब्रेसेज़' बाँधने ही पड़ेंगे क्योंकि सब लोग उसका इस्तेमाल करते हैं और वह एक फ़ैशन में आ गया है। और—ज़रा इस मजे की बात की कल्पना कीजिए !—'ब्रेसेज़' 'नेकटाइ' आदि के तुच्छ विषयों को लेकर मेरी स्त्री के और मेरे बीच भयङ्कर द्वन्द्व मच जाया करता था। मेरा तो यह विश्वास है कि वह अक्सर अभिनय-कला में अधिक निपुणता प्राप्त करने के उद्देश्य से, अभ्यास के लिये, रार मचा बैठती थी। वह मुझसे कहती—'ओह आर्केडी 'निहिलिज़्म' अब फ़ैशन के एक दम खिलाफ़ माना जाने लगा है।' मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि वह कोई मूर्ख स्त्री नहीं है, और वह एक प्रतिभाशालिनी अभिनेत्री मानी जा चुकी है।"

यह कहकर डाक्टर हँसा; पर मुझे ऐसा लगा कि उसकी वह हँसी वास्तविक प्रसन्नता की परिचायक नहीं है। इसके बाद ज़मीन पर अत्यन्त चञ्चलता से अपने शरीर को इधर-उधर हिलाते-डुलाते हुए वह बोला—'मालूम होता है कि पानी बरसनेवाला है; क्या आफ़त है !"

उसने अपनी जेब से क्रीमिया की बनी हुई 'फेल्ट' टोपी निकाली और उसे अपने गञ्जे सिरपर कसकर पहन लिया। इसके बाद बोला—

"मेरी जीवन-कथा का शेष अंश बहुत लम्बा है, और इस समय नहीं सुनाया जा सकता। इसके अलावा, वह रोचक भी नहीं है। सारी कथा से यह सारोपदेश निकलता है—यदि मुझे एक दिन अवश्य मरना है, तो मुझे यह पूरा अधिकार है कि मैं जैसा चाहूँ वैसा जीवन बिताऊँ। यदि मुझे भी एक दिन सबकी तरह विनाश के नियम का शिकार बनने को बाध्य होना है, तो मनुष्य के नियम मेरे लिये बिलकुल निरर्थक हैं।

"जब आप कुबान में मुझसे मिले थे, तब मैं इस तत्त्व को कुछ-कुछ समझने लगा था। पर मूल भाव ने मेरे मन में तथ्यों के बाद घर किया। वास्तव में यह एक स्वाभाविक नियम है और रोमन लोग इस बात से भली भाँति परिचित थे। वे लोग इस संसार में सर्वश्रेष्ठ थे, क्योंकि उन्हें प्रत्येक प्रकार की भावुकता-मानवता आदि मनोभावों और आदर्शों से आन्तरिक चिढ़ थी। भाव हमेशा तथ्यों के बाद आते हैं, और जब हम अपने किसी कार्य की सफ़ाई देने की चेष्टा करने लगते हैं, तो वे भड़क उठते हैं—क्यों, मैं कह नहीं सकता। ग़रज़ यह कि मैं इस सारे चक्कर से इस कारण बाहर निकल आया कि मैं ऐसा करना चाहता था, और कैफ़ियत मुझे बाद में सूझी।

"कर्तव्य का तकाज़ा उत्तरदायित्व आदि प्रहसनात्मक बातें हमारे जीवन को अत्यन्त वीभत्स बना देती हैं। मैंने अपने मन में कहा कि चूँकि मैं इन सब प्रहसनों से ऊब उठा हूँ, इसलिये मैं अब संस्कृति को अन्तिम प्रणाम करता हूँ।

"उस दिन के बाद प्रायः दस वर्ष बीत चुके हैं। ये दस वर्ष मैंने बड़े रोचक ढंग से, स्वतन्त्रतापूर्वक बिताए हैं, और इस वर्ष और इसी तरह बिताने की आशा करता हूँ। अच्छा, अब मैं आपको आपके साथ के लिये धन्यवाद देते हुए तब तक के लिये आपसे विदा

होता हूँ जब हम किसी दूसरी दुनिया में—जो इस दुनिया से बेहतर होगी फिर एक बार मिलेंगे।"

"किस दुनिया से आपका मतलब है!"

"इसी पृथ्वी की बात मैं कह रहा हूँ, पर वह दुनिया जिसमें मैं रहता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि आप पीने के बाद मतवाले होकर उस स्थिति को पहुँच जावेंगे जो आपको ठीक रास्ते पर ले आवेगी—सब प्रकार की सांस्कृतिक मूर्खता से परे!"

यह कहकर वह बड़ी तेज़ी से पहाड़—के नीचे उतरते हुए मोर्ड-किनोफ़ पार्क की ओर क़दम बढ़ाता हुआ चला गया। उसके चले जाने के कुछ ही समय बाद पानी बरसने लगा। पानी की बूँदें शीशे की गुरियों की तरह जान पड़ती थीं।

इसके बाद मैं लगातार दो दिन तक उस व्यक्ति को पानालयों में, बाज़ार में, रात्रिनिवासों में और बन्दरगाह में खोजता रहा, पर कहीं उसका पता न लगा। मैं संस्कृति के विरुद्ध उसकी दलीलों को एक बार फिर से सुनना चाहता था।

मैमिन सिबिरियाक (मित्री नार्किसोविच) ने उस आवारे डाक्टर और उसकी पत्नी—सुप्रसिद्ध अभिनेत्री—से अपनी भेंट को लेकर एक कहानी लिख डाली। मुझे इस समय याद नहीं आता कि उस कहानी का शीर्षक क्या था, पर उसने उस आवारे का चरित्र जिस रूप में अङ्कित किया था, उससे यह अनुभव होने लगता था कि उसका चरित-नायक केवल एक अभागा और दयनीय शराबी है। इस चरित्र-चित्रण से उस व्यक्ति की भीतरी विशेषता का तनिक भी आभास नहीं मिलता था जिसका उद्घाटन एक दिन डाक्टर रियुमिन्सकी ने मेरे आगे करने का कष्ट उठाया था।

अनोखे आवारे

२

जिस आवारे का वर्णन पूर्व परिच्छेद में किया गया है उसी कोटि के व्यक्ति—ऐसे व्यक्ति जो जीवन की प्रतिदिन की साधारण परिस्थितियों से स्वेच्छानुसार असहयोग कर लेते हैं—रूस में अवश्य ही बड़ी संख्या में होंगे। 'नोवोये फ्रेम्या' नामक एक सम्वादपत्र में एक ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में एक नोटिस छपा था जिसका स्वभाव डाक्टर रियुंमिन्सकी से बहुत-कुछ मिलता-जुलता हुआ-सा लगता है। नोटिस इस प्रकार था——

"एक विचित्र आवारा

"एक विचित्र कोटि का आवारा, जिसकी आयु पचास वर्ष के लगभग होगी, पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया। उके कागज़ात सब ठीक हालत में थे, पर वह अपना निवास-स्थान बताने में असमर्थ था। जब इस सम्बन्ध में फिर जाँच की गई तो मालूम हुआ कि वह एक धनी व्यक्ति था, पर वह जीवन में विचित्र प्रकार के अनुभवों का मज़ा लेने के लिये उत्सुक रहता था। गृहहीन आवारों की जीवन-चर्या में वह बड़ी दिलचस्पी लेता था। अपनी पत्नी की मृत्यु होने पर उसने अपनी लड़की को एक बोर्डिङ्ग-स्कूल में भर्ती करवा दिया और स्वयं एक पेशेवर आवारा बन बैठा। रात में वह कभी पवाजों में अथवा इसी प्रकार के दूसरे स्थानों में अड्डा जमाता था। केवल जाड़ों में, जब भयङ्कर पाला पड़ने के कारण सर्दी असहनीय हो उठती थी, तो वह वारसा को वापस चला जाता और वहाँ एक होटल में ठहर वसन्त की प्रतीक्षा में रहता। जब पुलिस ने उसे बहुत-से आवारों के

साथ गिरफ़्तार किया तो उसने यह वचन दिया कि वह अपने जीवन की गति को बदल डालेगा; साथ ही उसने यह भी कहा कि मैं इसका उत्तरदायित्व अपने ऊपर नहीं ले सकता।"

सन् १८९० के बाद मैं सम्वादपत्रों में छपे हुए इस प्रकार के समाचारों का सङ्ग्रह करने का आदी हो गया था। मेरे पास इस ढङ्ग के प्रायः तीस सम्वाद एकत्रित हो चुके थे। १९०५ में जब पुलिस ने मेरे यहाँ तलाशी ली, तो जिस पार्सल में वे कटिङ्ग रखे थे उन्हें भी उठा ले गई, और बाद में वे सब पेट्रोग्राड (वर्तमान लेनिनग्राड) पुलिस स्टेशन में खो गए।

मैं अपने जीवन में इस प्रकार के बहुत-से व्यक्तियों के संसर्ग में आया हूँ। उनमें से जिस आवारे का सब से अधिक प्रभाव मेरे स्मृति-पटल पर पड़ा है उसका नाम 'बाश्का' था। जब बेसलान से लेकर पेट्रोवस्क तक की रेलवे लाइन तैयार हो रही थी, तब उससे मैं मिला था। वह 'डाइनेमाइट' द्वारा तोड़े गए पत्थरों के ढेर के ऊपर पहाड़ी घाटी के उस सिरे पर बैठा था जहाँ धूप थी। उसके आस-पास बहुत-से आदमियों की भीड़ लगी हुई थी, जो पत्थरों को खोद रहे थे, 'डाइनेमाइट' से उड़ा रहे थे और उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान में ढोते हुए ले जा रहे थे। उस बैठे हुए व्यक्ति को उन सब मजूरों का 'सरदार' समझकर मैं सीधे उसके पास गया और उससे पूछा कि वह मुझे किसी काम पर नियुक्त कर सकता है या नहीं। उसने पतली, पर तीखी, आवाज़ में कहा—"मैं मूर्ख नहीं हूँ—मैं काम नहीं करता।"

इस तरह की बातें मैं जीवन में पहले भी कई बार सुन चुका था, इसलिये मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ।

मैंने पूछा—"तब तुम यहाँ क्या करते हो?"

"मैं केवल बैठे-बैठे सिगरेट पिया करता हूँ—जैसा कि तुम देख रहे हो।" यह कहते हुए दाँत दिखाते हुए मुस्कराने लगा।

वह कुबड़ा था और एक चौड़ा कोट और 'तरबूज़-टोपी' पहने था। उस टोपी का किनारा फटा हुआ था। उस पहनावे में वह मुझे एक चमगादड़-सा लगता था। उसके छोटे और खड़े कान किसी अज्ञात शब्द को सुनते हुए-से जान पड़ते थे। उसका मुँह बड़ा और मेंढ़क की तरह था। जब वह हँसता था तो निचला ओठ नीचे को सरक जाता था, और फलस्वरूप छोटे-से दाँतों की एक मोटी क़तार स्पष्ट दिखाई देने लगती थी, जिससे उसकी मुसकान में एक विचित्र निष्ठुरता का आभास झलकने लगता था। उसकी आँखें विस्मयजनक थीं, जिनकी पुतलियाँ काली और गोल थीं—रात में विचरनेवाले पक्षी की तरह। आँखों की सफ़ेदी के कारण जो तङ्ग सुनहरे वृत्त बन गए थे, उनके भीतर वे पुतलियाँ चमक रही थीं। उसका चेहरा बालों से बिलकुल रहित था—ठीक एक पुरोहित के चेहरे की तरह, और उसकी लम्बी और पतली नाक के नथने अत्यन्त वीभत्स रूप से दबे हुए थे। उसकी उँगलियाँ एक सङ्गीतज्ञ की तरह पतली थीं। उनसे वह एक सिगरेट पकड़े था। बीच-बीच में वह उस सिगरेट को अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक मुँह से लगाकर धुँए को भीतर खींचता जाता था, और साथ ही कर्कश शब्द से खाँसता रहता था।

मैंने कहा—"तुम्हारे लिये सिगरेट पीना लाभदायक नहीं है।"

उसने तत्काल तमककर उत्तर दिया—"और तुम्हारे लिये बोलना लाभदायक नहीं है—कोई भी व्यक्ति तुम्हें देखते ही तत्काल यह मालूम कर सकता है कि तुम एक मूर्ख हो।"

"धन्यवाद!"

"अनुगृहीत करने के कारण मुझे प्रसन्नता है।"

कुछ देर तक हम दोनों चुप रहे, और इस बीच वह कनखियों से मेरी ओर देखता रहा। इसके बाद उसने कुछ नम्रता के साथ कहा--"तुम्हारे लिये यहाँ कोई काम नहीं है, इसलिये यहाँ से चले जाओ।"

घाटी के उस पार, आकाश में, हवा बहुत व्यस्त थी, और बादलों को भेड़ों के झुण्ड की तरह चारों ओर से एकत्रित करने के लिये चिन्तित जान पड़ती थी। पहाड़ का जो हिस्सा सूरज के सामने था उसपर शरत्काल की जङ्गली झाड़ियों का रङ्ग लोहे में लगे हुए जङ्ग की तरह दिखाई दे रहा था। हवा उन झाड़ियों को बड़ी तेज़ी से हिला रही थीं और उनकी सूखी पत्तियाँ झरती जाती थीं। दूर कहीं से बड़े-बड़े पाषाणों को 'डाइनेमाइट' से उड़ाने की आवाज़ आ रही थी। वह विकट शब्द वज्र की कड़क की तरह पहाड़ की कन्दराओं में गूँज उठता था, और बोझ ढोनेवाली गाड़ियों के पहियों की आवाज़ और बड़े-बड़े हथौड़ों द्वारा पत्थरों पर कीलें ठोके जाने के शब्द के साथ मिलकर एक रूप हो जाता था।

कुबड़े ने मुझसे पूछा--"तुम्हें शायद भोजन की आवश्यकता है? अभी एक मिनट के अन्दर भोजन की घण्टी बजेगी। तुम्हारे समान न जाने कितने निठल्ले संसार में भटकते रहते हैं!" यह कहते हुए उसने थूकने के लिये मुँह फेरा।

कुछ ही समय बाद बड़ी तीखी आवाज़ में एक सीटी बज उठी। ऐसा मालूम होता था जैसे घाटी का सारा वायुमण्डल किसी बाजे की धातु-निर्मित डोरी से चोट खाकर कराह उठा है। उस कराह की गूँज से और सब शब्द मन्द पड़ गए।

कुबड़ा बोला--"चलो, भगो!" इसके बाद वह अपने हाथों

और पाँवों के सहारे पत्थरों के ऊपर से उछलता-कूदता हुआ चला। बीच-बीच में वह झाड़ियों अथवा पेड़ों की शाखाओं को एक बन्दर की तरह दक्षता के साथ पकड़ता जाता था। इसके बाद वह पहाड़ की ढाल के नीचे एक ढेर सा बनकर निःशब्द लुढ़कता हुआ चला गया।

सब लोगों ने बाहर खुले स्थान पर खाना खाया। पत्थरों और ढेलों पर बैठकर वे अनाज और गोश्त के मिश्रण से तैयार की गई एक प्रकार की नमकीन लपसी खा रहे थे। खानेवाले मेरे अतिरिक्त छः व्यक्ति थे। कुबड़ा बड़े रोब के साथ उन लोगों पर अपना प्रभुत्व जमा रहा था। जब उसने लपसी को चखा तो अपनी नाक सिकोड़कर उसने अत्यन्त क्रोधपूर्वक सामने एक बुड्ढे की ओर देखा, जो एक स्त्री को पहनने-योग्य फूस की टोपी सिर पर डाले हुए था, और गरजकर कहा--"गधा कहीं का! फिर नमक ज़्यादा डाल दिया!"

उसके साथ के शेष पाँच आदमियों ने भयङ्कर भाव से गुर्राते हुए अपना क्रोध प्रकट किया। एक आदमी बोला—"इसे पीटना होगा!"

कुबड़े ने मेरी ओर देखते हुए कहा—"क्या तुम नमकीन लपसी तैयार कर सकते हो? सच? तुम झूठ तो नहीं बोल रहे हो? अच्छी बात है, इसकी परीक्षा ली जाय।" उसके साथी उसके प्रस्ताव पर राज़ी हो गए।

भोजन के बाद कुबड़ा अपने 'कैम्प' की ओर चला गया, और बुड्ढे रसोइये ने, जिसके चेहरे का रङ्ग लाल था, और जो एक भोले स्वभाव का आदमी जान पड़ता था, मुझे वह स्थान दिखाया जहाँ गोश्त, अनाज, रोटी, नमक आदि चीजें रखी हुई थीं। बुड्ढे ने फुसफुसाते हुए कहा—"इस कुबड़े के सम्बन्ध में किसी भ्रम में न रहना। कुबड़ा

होने पर भी वह एक भद्रपुरुष है, और उसकी ज़मींदारी भी है। अपने समय में वह एक बड़ा आदमी रहा है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि वह बुद्धि रखता है। हम लोगों के बीच में वह बाक़ायदा मालिक की तरह रहता है। वह हिसाब-किताब रखता है। कड़ा है कहते हो? है तो! वह एक दुर्लभ प्राणी है!"

प्रायः एक घण्टे बाद फिर एक बार गर्जन-तर्जन के साथ काम शुरू हुआ। मैं केतलियों और चम्मचों को नाले में धोने लगा। इसके बाद मैंने आग जलाने के लिये लकड़ियाँ इकट्ठा कीं और पानी से भरी एक केतली उसके उपर चढ़ा दी, और तब आलू छीलने लगा।

इतने में कुबड़े की तीखी आवाज़ सुनाई दी—"तुमने पहले भी कभी रसोइये का काम किया है?" यह कहते हुए वह चुपके से मेरे पीछे आकर खड़ा हो गया, और बड़े गौर से देखने लगा कि मैं आलू एक दक्ष व्यक्ति की तरह छीलता हूँ या नहीं। जब वह खड़ा था तो मेरा ध्यान इस बात पर गया कि उस स्थिति में चमगादड़ से उसका साम्य और अधिक तीव्रता से प्रकट हो रहा था।

कुछ समय बाद उसने पूछा—"तुमने कभी पुलिस की नौकरी तो नहीं की है?" और तत्काल स्वयं अपने प्रश्न का उत्तर देते हुए बोला—"नहीं, तुम अभी इस पेशे के लिये बच्चे ही हो।"

अपने चौड़े अँगरखे के दोनों पल्लों को चमगादड़ के डैनों की तरह फ़ड़फड़ाते हुए वह एक पत्थर से दूसरे पत्थर पर फुदकता हुआ चला गया, और बड़ी तेज़ी से पहाड़ी के ऊपर चढ़ गया। जब वह चोटी पर पहुँच गया, तो वहाँ आराम से बैठकर सिगरेट से धुआँ उड़ाने लगा।

मैंने जब खाना बनाकर उन लोगों को खिलाया, तो सबने मेरी

पाककला की प्रशंसा की। खाना खाकर सब लोग घाटी में इधर-उधर बिखर गए। उनमें से तीन एक स्थान पर बैठकर ताश खेलने लगे, और पाँच या छः व्यक्ति ठण्डे पानी के चश्मे में नहाने चले गए। पत्थरों और झाड़ियों के बीच किसी एक स्थान से एक कज़्ज़ाक गाना सम्मिलित स्वर में गाया जाने लगा। उस गिरोह में, मुझे और कुबड़े को मिलाकर प्रायः तेईस आदमी थे। वे सब कुबड़े के साथ घनिष्ठ भाव से बातें करते थे, पर साथ ही उसके प्रति सब समय सम्मान और सम्भ्रम का भाव प्रदर्शित करते थे।

कुबड़ा आग के सामने एक पत्थर पर चुपचाप बैठा हुआ था, और कोयलों को एक लम्बी छड़ी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर हटाता जाता था। धीरे-धीरे एक-एक करके प्रायः दस आदमी उसे घेर कर बैठ गए। एक काले बालोंवाला किसान एक बहुत बड़े कुत्ते की तरह उसके चरणों पर लोट रहा था, और एक दुबला-पतला, निस्तेज युवक विनय के स्वर में कुछ बड़बड़ा रहा था।

कुबड़े ने गर्जन के स्वर में कहा—"चुप रहो! गुल मत मचाओ!"

इसके बाद बिना किसी की ओर देखे, बात करने लगा। उसकी आवाज़ बड़ी साफ़ और ज़ोरदार थी और आत्मविश्वासपूर्वक गूँज रही थी। वह कहने लगा—"मैं तुम लोगों को यह बताना चाहता हूँ कि भाग्य, अदृष्ट और दैव—तीनों की अलग-अलग विशेषताएँ हैं, और इन तीनों में से प्रत्येक के कई रूप होते हैं।"

मैंने जब उसके मुँह से इस तरह की बात सुनी, तो मैं चकित भाव से उसकी ओर देखने लगा। मेरे मुख के भाव पर उसने ग़ौर किया और अत्यन्त गम्भीरता के साथ मेरी ओर देखते हुए बोला—"क्यों? क्या हुआ?"

सब मेरी ओर देखने लगे, जैसे किसी विशेष बात की आशा रखते हों। उनकी दृष्टि में मेरे प्रति क्रोध का भाव भरा हुआ था। कुछ समय तक चुप रहने के बाद कुबड़े ने अपने अँगरखे को खूब अच्छी तरह अपने शरीर में लपेटते हुए फिर बोलना शुरू कर दिया।

उसने कहा—"हाँ, दैव—दैवी विशेषताएँ सङ्कटों से मनुष्य की रक्षा करती रहती हैं, पर इतना ज़रूर है कि शैतान उन्हें आदमी के पास भेजता है।"

"और—आत्मा?"—किसीने धीमे स्वर में पूछा।

"आत्मा एक चिड़िया है जिसे शैतान फँसाना चाहता है।"

इस प्रकार की बेतुकी बातें वह उन लोगों को बताता रहा, और वह बेतुकापन बड़ा भयङ्कर क्रूर था। यह स्पष्ट था कि उसने पोटीब्निया द्वारा लिखित "भाग्य और उससे सम्बन्धित जन्तु" शीर्षक लेख पढ़ा था, पर उस वैज्ञानिक लेख के गम्भीर रूपकात्मक मर्म की अवज्ञा करके वह उसे लौकिक कथाओं और किंवदन्तियों के ऐन्द्रजालिक रङ्गों में रँग कर उन लोगों के आगे पेश कर रहा था। शीघ्र ही उसने अपने बोलने का सीधा-सादा ढङ्ग त्यागकर सुसंस्कृत साहित्यिक शैली में बोलना शुरू कर दिया।

उसने कहा—"मानव-जाति अपनी उत्पत्ति के प्रारम्भिक काल में ही रहस्यमयी शक्तियों से घिरी रही है। पर उन शक्तियों के विशेषत्व को वह समझ नहीं पाती, और उनपर विजय प्राप्त करने में असमर्थ है। प्राचीन ग्रीक—"

उसकी तीखी और गहन रूप से गूँजनेवाली आवाज़, उसके शब्दों का असाधारण सम्मिश्रण और सम्भवतः उसकी विचित्र, रहस्यात्मक आकृति—ये सब मिलकर उपस्थित व्यक्तियों पर आश्चर्यजनक और

असाधारण प्रभाव डाल रहा था। वे लोग स्तब्ध भाव से उसकी बातें सुन रहे थे, और अपने "गुरु" के मुख की ओर इस तरह टकटकी लगाए हुए थे जिस प्रकार पुजारी किसी मूर्ति की ओर भक्तिभाव से देखते हैं। कुबड़े की चिड़ियों की-सी आँखें भयङ्कर रूप से चमक रही थीं, और उसके ढीले ओठ हिलते हुए ऐसे मालूम होते थे जैसे सूजते चले जाते हैं और अधिकाधिक मोटे और भारी होते जाते हैं। मुझे यह अनुभव होने लगा कि उसकी उन विचित्र और विषादपूर्ण कल्पनाओं में कोई ऐसी बात निहित है जिसपर वह स्वयं भी विश्वास करता है, और उसके कारण भयभीत रहता है। जब वह बोलता था तो आग के प्रकाश में उसका मुख अधिकाधिक गम्भीर और विषादपूर्ण होता हुआ दिखाई देता था।

सन्ध्या के स्तिमित प्रकाश में स्थिर, निश्चल बादल घाटी के ऊपर लटके हुए-से जान पड़ते थे; लकड़ियों के आग की ज्वाला गाढ़तर हो उठी थी और पहले से अधिक लाल दिखाई देती थी; आस-पास के चट्टान फैलते हुए-से मालूम होते थे और ऐसा अनुभव होता था कि पहाड़ की दरार तङ्ग होती चली जा रही है। मेरे पीछे पानी का चश्मा रेंगता और छपछपाता हुआ बह रहा था, और कोई चीज़ 'खस-खस' शब्द कर रही थी, जैसे साही की जाति का कोई जीव सूखी पत्तियों के बीच से होकर अपना रास्ता साफ़ करते हुए चला जा रहा हो।

जब चारों ओर बिलकुल अन्धेरा हो गया, तो मज़दूर लोग बड़ी सावधानी से इधर-उधर देखते हुए एक-एक करके डेरे की ओर चले गए। किसी को फुसफुसाते हुए सुना गया—"यह है विज्ञान का फल!" उससे भी धीमी आवाज़ में एक दूसरा बोल उठा—"यह सब शैतान की कारस्तानी है।"

कुबड़ा आग के पास ही बैठा रहा। वह अपनी छड़ी से आग को खरोंचता जाता था। खरोंचने से जब छड़ी का सिरा जल उठता था तो वह एक मशाल की तरह उसे ऊपर उठा लेता था, और अपनी उल्लू की-सी आँखों से आग की शिखाओं के पीले परों को देखता रहता था, जो आग के ढेर से टूट-टूटकर आकाश में उड़े चले जाते थे। इसके बाद वह छड़ी को हवा में घुमाता था, जिससे प्रकाश की एक गोल-रेखा बनकर उसके सिर को घेर लेती थी।

दो दिन तक मैं उसके रङ्ग-ढङ्ग और बात-व्यवहार पर ग़ौर करता रहा। वह भी सन्देहात्मक दृष्टि से मुझे देखते हुए मेरी गति-विधि पर बड़ी सावधानी से ध्यान दे रहा था। जहाँ तक सम्भव हो सकता था, वह स्वयं मुझसे कोई बात नहीं छेड़ता था; और जब मैं कोई प्रश्न करता था तो वह बड़े रूखे ढङ्ग से, अशिष्टतापूर्वक उसका उत्तर देता था। रात्रि-भोजन के बाद वह आग के निकट बैठकर अपने साथ के आदमियों को बड़ी भयङ्कर-भयङ्कर कहानियाँ सुनाता था।

एक बार उसने उन लोगों से कहा--"मनुष्य का शरीर झाँवाँ की तरह अथवा एक स्पञ्ज या पावरोटी की तरह है,—अर्थात् उसमें असंख्य अदृश्य छिद्र रहते हैं। और रक्त उन सब छिद्रों से होकर बहता रहता है। रक्त एक ऐसा तरल पदार्थ है जिसमें करोड़ों अदृश्य कण तैरते रहते हैं, पर वे कण सब सजीव होते हैं।" इसके बाद अपनी आवाज को ऊँचा उठाते हुए—प्रायः चीखते हुए--उसने कहा--"उन अदृश्य कणों में शैतान के अनुचर भूत-प्रेत या दानव रहा करते हैं।"

मैं स्पष्ट देख रहा था कि उसके क़िस्से सुन कर उसके साथी लोग अत्यन्त भय मालूम करने लगते थे। मैं इस सम्बन्ध में उससे तर्क करना

चाहता था, पर जब मैं इस विषय में कोई प्रश्न उससे करता तो वह कभी उत्तर न देता, और उसके श्रोतागण अपने कुहनों से मुझे ठसकाते हुए प्रायः गुर्राकर कहते––" चुप करो !"

जब पत्थरका कोई छोटा-सा तीखा टुकड़ा उचककर किसी मज़दूर के मुँहपर अथवा पाँव पर जा लगता, तो कुबड़ा कुछ रहस्यात्मक मन्त्र फुसफुसाते हुए उसके घावकी मरहम पट्टी करता। एक बार जब जवान मज़दूर का मुँह दाँत की पीड़ा के कारण सूज उठा, तो कुबड़ा पहाड़ी पर चढ़कर वहाँ से कुछ जड़ी-बूटियाँ ले आया, और उन्हें चाय बनाने की केतली में उबालकर उनसे पुल्टिस-तैयार करके मन्त्र-पाठ और शूलीका पवित्र साङ्केतिक चिन्ह अङ्कित करने के बाद उसे पीड़ित व्यक्ति के मुँह पर लगा दिया।

इसके बाद उसने पीड़ित व्यक्ति से कहा––"अब तुम्हें आराम हो गया !"

मैंने उसे कभी मुस्कराते हुए नहीं देखा, हालाँकि वह निश्चय अपने मूर्ख साथियों की गति-विधि से अच्छी दिल्लगी का अनुभव करता होगा। उसके मुँहपर सभय सन्देह की एक छाया घिरी रहती थी और उसके कान सब समय खड़े रहतें थे। सुबह वह घाटी के उस हिस्से में चला जाता जहाँ धूप रहती, और वहाँ एक चट्टान के ऊपर चढ़कर एक काले रङ्गकी चिड़ियाकी तरह बैठ जाता, और सिगरेट पीते हुए नीचे काम में व्यस्त मज़दूरोंकी गति-विधिका निरीक्षण करता था। बीच-बीच में कभी कोई व्यक्ति पुकार उठता––"बाश्का !" वह तत्काल उतार में लुढ़कते हुए नीचे चला जाता और बड़े-बड़े ढीले पत्थरों के ऊपर से होकर इस फुर्ती से निकल जाता था कि मुझे आश्चर्य हुए बिना न रहता। वह मज़दूरों के बीचमें होनेवाले झगड़ोंका फ़ैसला करता था, और मजूरी बाँटनेवाले व्यक्ति

से मज़दूरोंकी तरफ़ से तर्क करता था। उसकी पतली आवाज़ उस कर्म-कोलाहल के बीचमें भी साफ़ सुनाई देती थी। क्वार्टर मास्टर, जो एक मोटे क़द का और एक सिपाहीकी तरह गठे चेहरे का व्यक्ति था, बड़े सम्मान के साथ उसकी बातें सुनता था।

एक बार जब क्वार्टर मास्टर आग के पास बैठा हुआ अपनी पाइप जला रहा था, तो मैंने उससे पूछा——"यह आदमी कौन है?" मेरे प्रश्न-का उत्तर देनेके पहले उसने एक बार चौकन्नी दृष्टि से चारों ओर देखा।

उसने कहा——"शैतान ही जानता होगा कि वह कौन है। वह एक जादूगर या इसी तरह का कोई आदमी है। एक प्रकारका भेड़िया——"

कुछ भी हो, अन्त में एक बार कुबड़े से बातें करने का अवसर मुझे मिल गया। एक दिन जब वह प्रतिदिन की तरह भूत-प्रेतों, कीटाणुओं, रोगों और दुष्कर्मों के सम्बन्ध में अपना लेकचर समाप्त कर चुका था, और आग के पास अकेला बैठा हुआ था, तो मुझे मौका मिला।

मैंने उससे प्रश्न किया——" तुम इन लोगों से इस तरह की बातें क्यों करते हो?"

उसने आँखें फाड़ कर मेरी ओर देखा, और अपनी नाक को इस क़दर सिकोड़ लिया कि वह पहले से बहुत तीखी और नोकदार दिखाई देने लगी। इसके बाद उसने अपनी छड़ी के जलते हुए सिरे को मेरी टाँग पर घुसेड़ने की चेष्टा की, पर मैंने तत्काल अपना पाँव हटा लिया और उसकी ओर अपनी मुट्ठी तानी।

उसने विश्वासपूर्वक कहा——"कल तुम्हें ख़ूब पिटवाया जायगा!"

"किस लिये?"

"तुम देख लेना, तुम पीटे जाओगे।"

उसकी विचित्र आँखें क्रोध के कारण चपक रही थीं, और उसका

ढीला ओठ नीचे को खिसकता जाता था, जिससे उसके दाँत साफ़ दिखाई देते थे। वह गुर्राते हुए कहने लगा—"तुम—तुम जहन्नुम में जाओ!"

मैंने कहा—"पर सचमुच, तुम इन सब बातों पर स्वयं विश्वास नहीं करते होगे? या करते हो?"

वह बहुत देर तक चुप बैठा रहा, और अपनी छड़ी से आगको खरोंचता रहा। छड़ी के सिरों के जल उठने पर वह उसे अपने चारों ओर घुमाने लगा और फिर एक बार प्रकाश की गोल रेखा उसके सिर के ऊपर चक्कर लगाने लगी।

इसके बाद सहसा उसने कहा—"भूत-प्रेतों पर विश्वास करने की बात करते हो? मैं ऊनपर क्यों न विश्वास करूँ?" उसने अपने स्वरमें यथा-शक्ति कोमलता लाने की चेष्टा की थी, पर वह अपने वास्तविक मनोभाव को छिपाने में असमर्थ रहा, और उसने क्रोधपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखा।

मैंने मन में सोचा—"निश्चय ही यह व्यक्ति अपने आदमियों से मुझे पिटवाएगा।"

बहरहाल वह उसी कोमल स्वर में मुझसे बातें करने लगा और उसने मुझसे पूछा कि मैं कौन हूँ, मैंने शिक्षा कहाँ पाई है और कहाँ जाने के इरादे से मैं आया हूँ। उसका भाव अकस्मात् अज्ञात रूप से बदल गया था। उसके कण्ठस्वर में मैंने एक बड़प्पन का-सा भाव पाया—एक ऐसी अवहेलना का अनुभव किया जैसी एक उच्च पद के व्यक्ति की बातों में पाई जाती है, जब वह अपने से छोटे पद के व्यक्ति से बोलता है। जब मैंने फिर एक बार पूछा कि वह क्या वास्तव में भूत-प्रेतों पर विश्वास करता है? तो वह मुस्कराने लगा।

उसने कहा—"तुम भी तो किसी-न-किसी बात पर विश्वास करते होगे? ईश्वर पर? या अलौकिक घटनाओं पर?" और तत्काल आँखें

मटकाते हुए वह बोला—"शायद तुम प्रगति पर भी विश्वास करते होगे ?"

उसके पीले गालों पर आग की रक्ताभा झलक उठी, और उसके ऊपरवाले ओठ में उसकी कटी हुई मूँछ के सुइयों की तरह तीखे बाल भी चमकते हुए दिखाई दिए।

वह कहता चला गया—"तुम कोरे सिद्धान्तवादी मालूम होते हो। तुम साधारण जनता के बीच में 'अनन्त, बुद्धि और करुणा'* के बीज बोना चाहते हो; है न ?" इसके बाद अपना सिर हिलाते हुए वह बोला—"वाह रे मूर्खराज ! ज्योंही मैंने तुम्हें पहली बार देखा त्योंही मैं तुम्हें ताड़ गया था। मैं तुम्हारी चालबाज़ियों को अच्छी तरह समझे बैठा हूँ !"

पर ऐसा करते हुए वह सन्देह-भरी दृष्टि से चारों ओर देख रहा था, और एक विचित्र प्रकार की अशान्ति उसे घेरे हुए थी।

जलती हुई लकड़ियों की सुनहरी चमक के ऊपर बैंजनी रंग की जीभें नाच रही थीं और खिले हुए नीले फूल-से दिखाई देते थे। चारों ओर के घने अन्धकार के बीच जली हुई उस आग के ऊपर प्रकाश का एक गुम्बद-सा छाया हुआ था ! शरत्काल की रात्रिकी स्तब्ध नीरवता सारे वातावरण को भाराक्रान्त किए हुए थी, और जिस स्थान पर आग का प्रकाश मन्दा पड़ गया था वहाँ पाषाण के टूटे हुए टुकड़े ठण्ड से जमे हुए कुहरे के टुकड़ों की तरह जान पड़ते थे।

कुबड़ा बोला—"आग में कुछ और लकड़ियाँ झोंको।"

मैंने पेड़ की टूटी हुई शाखाओं का एक गट्ठा उठा कर आग में डाल दिया, जिसके कारण प्रकाश का वह गुम्बद घने धुँए से ढक गया और आस-पास के स्थान और अधिक अन्धकारमय और तङ्ग दिखाई देने लगे। कुछ देर बाद चटखने की आवाज़ करनेवाली पीली-पीली लपटें

* रूसी कवि नेक्रासोफ़ की कविता से लिए गए शब्द।

साँपों की तरह उन टूटी टहनियों के ऊपर रेंगने लगीं और लपेटें मारती हुई अकस्मात् एक विस्फोट के साथ तीव्र प्रकाश से प्रज्वलित हो उठीं। ठीक उसी क्षण कुबड़ेकी आवाज गूँज उठी। उसके प्रारम्भिक शब्द अत्यन्त अस्पष्ट थे और मेरे समझने के पहले शून्य में विलीन हो गए; इसका कारण यह था कि वह ऐसे स्वर में बोल रहा था जैसे उसे नींद आ रही है।

इसके बाद मैंने सुना—"हाँ हाँ, यह कोई दिल्लगी की बात नहीं है। वे ठीक उसी तरह वास्तविक हैं जैसे मनुष्य, तिलचट्टे और कीटाणु होते हैं। भूत-प्रेत और दानव-पिशाच भिन्न-भिन्न आकृतियों और कदों के होते हैं।"

मैंने कहा—"क्या तुम सचमुच आन्तरिक विश्वास से यह बात कह रहे हो?"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया, केवल अपना सिर हिला दिया, जैसे अपना माथा किसी अदृश्य, शब्द-रहित, किन्तु वास्तविक वस्तु पर पटक रहा हो। आग की ओर देखते हुए वह धीमे स्वर में बोला—

"उदाहरण के लिये, कुछ पिशाच बैंजनी रङ्ग के होते हैं, वे घोंघों की की तरह होते हैं, उनका कोई निश्चित आकार नहीं होता; वे घोंघों की तरह ही धीमी चाल में चलते हैं और पारदर्शी होते हैं। जब उनका दल का दल एक स्थान पर इकट्ठा हो जाता है, तो वे एक बादल की तरह दिखाई देते हैं। वे करोड़ों की संख्या में होते हैं। उनका काम उचाट और उदासीनता फैलाने का होता है। उनसे एक खट्टी गन्ध निकलती है, जिसके कारण आत्मा दुःखी और उदास हो जाती है, और एक थकान का-सा अनुभव करती है। मनुष्य की सब आकांक्षाएँ उनके विरुद्ध होती हैं—सब आंकांक्षाएँ···"

मैं मन-ही-मन सोचने लगा—क्या वह परिहास कर रहा है? पर यदि वह वास्तव में परिहास कर रहा था, तो वह आश्चर्यजनक रूप से, एक बड़े ही सूक्ष्मदर्शी कलाकार की तरह उस परिहास को व्यक्त कर रहा था। उसकी आँखें एक विचित्र भौतिक प्रकाश से चमक रही थीं, और उसका दुबला-पतला चेहरा अधिकाधिक तीखा और नुकीला होता जाता था। अपनी छड़ी के सिरे से उसने जलती हुई लकड़ियों को फिर एक बार हिलाया-डुलाया और अङ्गारों को धीरे से तोड़ने लगा। ऐसा करते हुए वह उन अङ्गारों को चिनगारियों की बौछार में परिणत कर देता था।

वह कहता चला गया—"हालैण्ड देश के प्रेत और पिशाच गेरुवा रङ्ग के छोटे से जीव होते हैं। वे गेंद की तरह गोल और चमकदार दिखाई देते हैं। उनके सिर मिर्चें के बीज की तरह सूखे, सिकुड़े और मुरझाए हुए होते हैं। उनके पञ्जे तागे की तरह लम्बे और पतले होते हैं। उनकी उङ्गलियाँ एक झिल्ली के सहारे एक-दूसरे से सटी होती हैं और प्रत्येक उङ्गली के सिरे पर एक लाल रङ्ग का 'हुक' (काँटा) होता है। वे मनुष्यों के मन में विचित्र आकांक्षा और भयङ्कर वासनाएँ जगाते हैं। उनके प्रभाव में आकर आदमी किसी उच्च पदवाले राज-कर्मचारी से कह सकता है—'अरे मूर्ख!' वह अपनी लड़की का धर्म तक नष्ट कर सकता है, या गिरजे के भीतर सिगरेट जलाने की हिमाकत कर सकता है। ऐसे प्रेत और पिशाच अकारण पागलपन को उभाड़नेवाले होते हैं।

"एक ऐसे प्रकार के भूत-प्रेत होते हैं जो टेढ़ी-मेढ़ी लकीरों की तरह विचित्र आकार धारण किए रहते हैं। वे हवा में उन्मुक्त और उच्छृङ्खल भाव से फिरते रहते हैं, और ऐसा करते हुए विचित्र आकार-

प्रकार और विकार धारण करते रहते हैं, और क्षण-क्षण में अपना रूप-रङ्ग बदलते रहते हैं। मानवीय आँखों को थकानेवाली माया-मरीचिका के समान होते हैं। उनका उद्देश्य पग-पग पर मनुष्य की प्रगति में बाधा पहुँचाने का होता है।

"कपड़े के प्रेत-पिशाचों का आकार लोहे की तीखी पर चिपटी कीलों की तरह होता है। वे काली टोपियाँ पहनते हैं, उनके चेहरे का रङ्ग हरा होता है, और उनके शरीर से चमकते हुए बादलों का-सा प्रकाश व्यक्त होता है। वे शतरञ्ज की विशेष-विशेष गोटियों की तरह छलाँगें भरते हुए चलते हैं। मनुष्य के मस्तिष्क में वे पागल-पन की नीली ज्योति जलाते रहते हैं। वे शराबियों के मित्र होते हैं।"

कुबड़ा अपनी आवाज़ को धीमा करता चला गया, और इस ढङ्ग से बोलने लगा जैसे वह कोई सबक़ याद कर रहा हो। मैं अत्यन्त उत्सुकतापूर्वक उसक बातों को सुनते हुए विस्मय-पूर्वक यह सोच रहा था कि मैं एक छटे हुए धूर्त्त की बातें सुन रहा हूँ या एक सन्निपात-ग्रस्त व्यक्ति का प्रलाप ?

वह कहता चला गया—"गिरजे के घण्टे में निवास करनेवाले भूत-बैताल बड़े भयङ्कर होते हैं। उनके डैने होते हैं—भूत-बैतालों के लोक में केवल वे ही डैनेवाले जीव होते हैं। वे मनुष्यों को कुकर्म की ओर प्रेरित करते हैं। वे गौरैयों की तरह इधर-उधर उड़ते और फुदकते रहते हैं, और मनुष्य के भीतर तीर की तरह प्रवेश करके उसके हृदय को वासना की आग से जलाते और दाघते रहते हैं। सम्भवतः वे गिरजों के बुर्ज़ों पर निवास करते हैं, क्योंकि वे विशेष रूप से घण्टे के बजने के समय मनुष्य को भयङ्कर रूप से सताते हैं।

"पर सब से अधिक भयङ्कर चाँदनी रात के भूत-बैताल होते हैं।

वे साबुन के बुद्बुदों की तरह होते हैं, जिनमें एक रूप-रङ्ग का चेहरा निरन्तर प्रकट और अन्तर्धान होता रहता है। उस चेहरे का रङ्ग नीला, पारदर्शी और विषादपूर्ण होता है; उसकी गोल-गोल आँखें पुतलियों से रहित होती हैं, और भौंहों के स्थान में उस पर प्रश्न के साङ्केतिक चिह्न अङ्कित रहते हैं। वे आड़ी या तिरछी चाल में नहीं चलते, केवल सीधी, लम्ब रेखा में ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर-चलते रहते हैं। वे मनुष्य के भीतर अनन्त एकान्त का भाव भरते हैं। वे प्रतिक्षण उसके कानों में फुसफुसाते रहते हैं। जिस व्यक्ति पर वे आक्रमण करते हैं वह अपने मन में सोचता है--'मैं आदमियों के बीच में केवल एकान्त की भावना लेकर जीता हूँ; पूर्ण एकान्त मुझे मृत्यु के बाद प्राप्त होगा, जब मेरी आत्मा अनन्त शून्य में उड़ चलेगी, और वहाँ एक निश्चित स्थान में मैं बँध जाऊँगा, और अपने सामने शून्य के अतिरिक्त और कुछ नहीं पाऊँगा। वहाँ मैं अनन्त काल तक केवल अपने को ही देखता रहूँगा, और अपने पृथ्वी पर के जीवन की व्यर्थता का स्मरण करता रहूँगा। युग-युगान्त तक केवल उसी एक स्मृति को मन में लिये रहना होगा—अपने विगत जीवन के सकरुण अज्ञान की भावना को याद करते हुए अन्तहीन काल बिताना होगा। और केवल स्तब्ध नीरवता! और केवल शून्य!......"

कुबड़ा अपनी छड़ी को जलती हुई लकड़ियों के ऊपर निश्चल अवस्था में रखे हुए था और आग की नुकीली लपटें धीरे-धीरे उस छड़ी पर रेंगती हुई ऊपर, उसके हाथ की ओर उठती चली गईं। जब गरमी उसके हाथ तक पहुँची, तो वह चौंक उठा, और छड़ी को हिलाकर उसने चिनगारियों को उड़ाया और फिर उसके जलते हुए सिरे को एक पत्थर से रगड़ा। उससे बहुत धुँआ निकल रहा था।

इसके बाद उसने अङ्गारों को उसी छड़ी से तोड़-तोड़कर चिनगारियों को हवा में उड़ाया और स्वयं मौन धारण किए रहा।

एक मिनट बीता, फिर दूसरा, और फिर तीसरा भी बीत चला। सारे वातावरण में एक विचित्र लोमहर्षक भौतिक भाव छा गया था।

अन्त में मैंने साहस करके फिर एक बार पूछा--"तुम क्या वास्तव में इन सब बातों पर विश्वास--"

उसने मेरा वाक्य पूरा नहीं होने दिया, और सहसा एक बड़ी तीखी आवाज़ में चीख़ते हुए बोला--"जाओ यहाँ से!" और अपनी जलती हुई छड़ी दिखाकर मुझे धमकी जताने लगा। उसने कहा--कल तुम्हें वे लोग पीटेंगे, तुम देख लेना!"

मैं नहीं चाहता था कि उसकी वह धमकी वास्तविकता में परिणत हो जाय। मेरे मन में यह विश्वास-सा जमने लगा कि वह वास्तव में मुझे पिटवाएगा। इसलिये जब कुबड़ा सोने चला तो मैं उस स्थान से ब्लाडीकाकेशस की ओर चल पड़ा।

मकड़ा या भूत ?

बुड्ढा एर्मोलाइ मार्कोफ़ एक कबाड़ी था। वह एक लम्बे क़द का दुबला-पतला और खम्भे की तरह सीधे आकार का व्यक्ति था। वह इस तरह चलता था जैसे एक सिपाही परेट के समय चलता है। अपनी साँड़ की-सी बड़ी-बड़ी आँखों से वह सब चीज़ों को बड़े ग़ौर से देखता रहता था। पर उन आँखों की धुँधली, भूरी और नीली चमक में एक विचित्र विषादपूर्ण भाव झलकता था। मेरी ऐसी धारणा थी कि वह पूरा लण्ठ है—और उसके स्वभाव की एक विशेष सनक के कारण यह धारणा मेरे मन में और अधिक बद्ध-मूल हो गई थी। उदाहरण के

लिये, वह किसी गाहक को कोई पुराना क़लमदान, प्राचीन सिक्का या और कोई इसी तरह की चीज़ दिखाता, उसके दामों के बारे में अत्यन्त हठपूर्वक तकरार करता, और फिर अकस्मात् गुरु-गम्भीर स्वर में बोल उठता--"नहीं, मैं इसे नहीं बेचूँगा।"

"क्यों नहीं बेचोगे?"

"मैं नहीं चाहता।"

"तब तुमने पूरा एक घण्टा दामों के लिये तकरार करने में बरबाद किया?"

पर वह उत्तर में कुछ न कहकर चुपचाप उस चीज़ को अपने ओवरकोट की अतल जेब में डालते हुए एक लम्बी साँस लेता, और यह भाव जताते हुए कि उसे बहुत बुरा लगा है, बिना अभिवादन किए वहाँ से चल देता।

पर एक या दो दिन बाद—और कभी-कभी एक घण्टे के भीतर ही--वह फिर अप्रत्याशित रूप से चला आता और उस चीज़ को मेज़ पर रखते हुए कहता--"लीजिए"।

"पिछली बार तुमने क्यों बेचने से इनकार कर दिया?"

"मैं नहीं चाहता था।"

जहाँ तक रुपये-पैसे का सवाल था, वह तनिक भी लोभी नहीं था। वह अक्सर ग़रीबों की सहायता करता रहता था, पर अपने सम्बन्ध में वह बिलकुल उदासीन रहता था। चाहे जाड़ा हो या गर्मी, वह एक पुराना, गरम ओवरकोट, मुड़ी और सिकुड़ी हुई पुरानी गरम टोपी और फटे-पुराने जूते पहने बाहर निकलता। उसका कोई घर द्वार नहीं था, और किसी एक स्थान में स्थिर न रहकर वह इधर-उधर भटकता फिरता था—निजनी से मुरोम और मुरोम से मुज़दल, बोस्टोफ़,

यारोस्लाव जाता और-फिर निजनी को वापस चला आता। वहाँ वह बुग्नाफ़ के गन्दे कटरे में रहता था। उस कटरे में चिड़िया-फ़रोश, जालसाज़, जासूस तथा और भी इसी तरह के लोग सुख की खोज के उद्देश्य से रहते थे। वे लोग टूटे सोफ़ाओं में बैठकर सिगरेट के धुँए के बादल उड़ाते हुए प्रतिपल इस अनुसन्धान में लगे हुए से जान पड़ते थे कि सुख कहाँ और कैसे प्राप्त होगा।

मानवता के इस कूड़ाखाने में माकोफ़ के प्रति वहाँ के निवासियों का ध्यान सब से अधिक जाता था, क्योंकि वह क़िस्से सुनाने की कला में निपुण था, और इस ढङ्ग से बातें करता था जैसे वह प्रत्येक घटनास्थल पर मौजूद रहता हो। उसके क़िस्से अधिकतर रईसों और जमीन्दारों के घरों के उजड़ने और बड़ी बड़ी ज़मीन्दारियों के नष्ट-भ्रष्ट होने के सम्बन्ध में होते थे। इस विषय को वह एक विषादपूर्ण हिंस्र भाव से तूल देता था, और निरन्तर इस बात पर गहरा रङ्ग चढ़ाता जाता था कि ज़मीन्दार लोग बड़े लापरवाह और मूर्ख होते हैं।

वह कहता—"वे लोग केवल गेंदों को लुढ़काते चले जाते हैं। वे लकड़ी के हथौड़ों से गेंदों का लुढ़काना पसन्द करते हैं—यह एक विशेष प्रकार का खेल उन लोगों ने सीख रखा है। और वे स्वयं भी उन गेंदों की तरह बन गए हैं—वे पृथ्वी पर निरुद्देश्य भाव से इधर-उधर लुढ़कते रहते हैं।"

एक बार शरत्काल की एक कुहरे से आच्छन्न रात में काज़ान को जाते हुए जहाज़ पर माकोफ़ से मेरी मुलाक़ात हो गई। जहाज़ पानी के बहाव के साथ अन्धभाव से, किन्तु बड़ी सावधानी से रेंगते हुए चला जा रहा था। उसमें जलनेवाली बत्तियों का प्रकाश भूरे रङ्ग के पानी और भूरे रङ्ग के कुहरे से मिलकर धुँधला हो गया था, और

उसका भोंपू निस्तेज भाव से निरन्तर बजता जाता था। सारा वातावरण हृदय को एक प्रकार के चिन्ता-जनक अवसाद से एक दुःस्वप्न की तरह जकड़े हुए था।

माकोफ़ जहाज़ के सिरे पर एक कोने में अकेला बैठा हुआ था, जैसे अपने को किसी से छिपाना चाहता हो। जब मैं उसके पास पहुँचा तो हम दोनों में बातचीत का सिलसिला ज़ारी हो गया। इसी सिलसिले में उसने अपने जीवन का जो एक विचित्र किस्सा था सुनाया वह इस प्रकार है—

उसने कहा—"मैं बीस वर्ष से एक ऐसे भय से जकड़ा हुआ हूँ जिससे पिण्ड छुड़ाने का कोई उपाय मुझे नहीं दिखाई देता। और, जनाब, यह भय एक विचित्र प्रकार का है—वह यह है कि मेरे शरीर के भीतर किसी एक दूसरे व्यक्ति की आत्मा प्रवेश कर गई है।

"मैं जब तीस वर्ष का था तो एक ऐसी स्त्री से मेरा प्रेम-सम्बन्ध स्थापित हो गया जो निश्चय ही जादूगरनी थी। उसका पति मेरा मित्र था और दयालु स्वभाव का व्यक्ति था। पर वह बीमार था और मरने पर था। जिस रात उसकी मृत्यु हुई तब मैं सोया हुआ था, और उस डायन स्त्री ने मेरी आत्मा को जादू के मन्त्र से मुझसे खींच कर उसके स्थान पर अपने मृत पति की आत्मा मेरे भीतर डाल दी। ऐसा उसने अपने स्वार्थ के लिये किया, क्योंकि उसका पति उसे मेरी अपेक्षा अधिक चाहता था। कुछ भी हो, उसके पति की मृत्यु होते ही मैंने यह अनुभव किया कि मैं पहले का माकोफ़ नहीं रह गया। मैं खुले-ख़ज़ाने यह कह सकता हूँ कि मैंने उस स्त्री के प्रति कभी प्रेम का अनुभव नहीं किया; इतने दिनों तक मैं उसके साथ केवल खेल रहा था—और अब मुझे यह पता लगा कि मेरी आत्मा उसके प्रति आकर्षित हो उठी

है। यह कैसे सम्भव हुआ ? वह अब भी मुझे घृणित मालूम होती थी, पर फिर भी उसके आकर्षण से मैं अपने को छुड़ा नहीं पाता था।

"तब से मेरे हृदय की सब सुन्दर भावनाएँ धुँए की तरह उड़कर गायब हो गईं; एक अस्पष्ट उदासी ने मुझे घेर लिया, और मैं उसके साथ बड़ी नम्रता से पेश आने लगा। उसका चेहरा मुझे आग की तरह चमकता हुआ मालूम होता था, पर मेरे आसपास की और सब चीजें राख से ढकी हुई-सी मालूम होती थीं।

"दिन में वह मेरे साथ क्रीड़ा-कौतुक की बातें करती थी और रात में मुझे पाप-कर्म के लिये खींच ले जाती थी। अन्त में मैं समझ गया कि उसने मेरी आत्मा बदल डाली है, और मैं किसी दूसरे व्यक्ति की आत्मा धारण किए हुए हूँ। पर मेरी निजी आत्मा—जिसे सृष्टि-कर्ता ने मुझे दिया था, वह कहाँ गई ? सोच-सोचकर मैं आतङ्क से सिहर उठता था........."

भोंपू का भौतिक शब्द बज उठा पर उसका विषादपूर्ण विकार घने कुहरे में विलीन हो गया। जहाज़ इस तरह से बिछलता हुआ-सा चला जा रहा था जैसे वह कुहरे के जाल में फँस गया हो, और पानी जो कि चीड़ के पेड़ से निकलनेवाले चेप की तरह गाढ़ा और मटमैला दिखाई देता था, जहाज़ के नीचे गड़गड़ शब्द से बहा चला जा रहा था। बुड्ढे माकोफ़ ने अपने मोटे जूते से ढके हुए पैरों को फ़र्श पर पटका, और अपने हाथों से हवा में विचित्र ढङ्ग से कुछ टटोलते हुए धीमी आवाज़ में वह कहने लगा—

"मैं इस क़दर घबरा उठा कि एक दिन मैं ऊपर छतवाले कमरे में गया, और एक फन्दा करके उसे छत पर की धरनों से बाँध दिया। मैं गले में फाँसी लगाकर आत्महत्या करना चाहता था। पर मेरे दुर्भाग्य

से धोबन ने मुझे इस चेष्टा में देख लिया और समय रहते सबने मिल कर मुझे फन्दे से छुड़ा लिया। उस दिन से एक अजीब, अवर्णनीय जन्तु प्रतिपल मेरे साथ लगा रहता है—वह जन्तु एक छः टाँगोंवाले मकड़े की तरह है और अपनी पिछली टाँगों के बल चलता है; वह एक छोटे-से बकरे के बराबर बड़ा है; उसके दाढ़ी और सींग भी हैं; उसके दो स्तन हैं जो ठीक एक स्त्री के कुचों की तरह हैं; और उसके तीन आँखें हैं—दो सिर पर और तीसरा दो स्तनों के बीच—जिनसे वह प्रतिक्षण मेरी गतिविधि की निगरानी करता रहता है। मैं जहाँ भी जाता हूँ, वह भद्दा और बड़े-बड़े बालोंवाला जन्तु वहीं मेरा पीछा करता है—ठीक चन्द्रमा की छाया की तरह। उसे मेरे सिवा और कोई नहीं देख पाता। वह देखो, वह इस समय भी यहाँ उपस्थित है!"

अपना हाथ बाँई ओर को बढ़ाते हुए माकोफ़ डेक से प्रायः अठारह इञ्च ऊपर शून्य स्थल पर हाथ फेरने लगा, और इसके बाद अपनी हथेली को अपने घुटने पर पोंछकर बड़बड़ाते हुए बोला—"मैंने अभी हाथ लगाकर देखा है, उसका शरीर बिलकुल भींगा हुआ है।"

मैंने कहा—"तो तुम बीस वर्ष से मकड़े के साथ रहते हो?"

"तेईस वर्ष से। शायद आप सोचते होंगे कि मैं पागल हूँ? यह देखिये, यह है मेरा रखवाला; देखिये, वह दुबका हुआ बैठा है; देखते हैं?"

"इस सम्बन्ध में तुमने किसी डाक्टर की सलाह क्यों नहीं ली है?"

"मैं डाक्टर से क्या सलाह लेता, साहब? इस सम्बन्ध में कोई डाक्टर कर ही क्या सकता है? यह कोई फोड़ा थोड़े ही है, जिसे वह चाकू से चीर सके; न किसी प्रकार के 'लोशन' लगाने या मरहम पट्टी करने से इसका इलाज हो सकता है। डाक्टर तो मकड़े को देख भी नहीं सकता; या देख सकता है?"

"क्या मकड़ा तुम्हारे साथ बातें भी करता है ?

उसने कहा--"क्या आप मज़ाक कर रहे हैं ? मकड़ा कैसे बात कर सकता है ? यह केवल मुझे भय दिखाते रहने के लिये भेजा गया है—मुझे यह याद दिलाते रहने के लिये कि मैं अपने भीतर छिपी हुई किसी दूसरे व्यक्ति की आत्मा की हत्या करने का अधिकारी नहीं हूँ। यह बात न भूलिए कि इस समय जो आत्मा मेरे भीतर है, यह मेरी नहीं है—वह इस तरह है जैसे मैंने इसे किसी से चुराया हो।

"प्रायः दस वर्ष पहले मैंने डूब मरने का निश्चय किया। मैं माल ढोनेवाली एक नाव से पानी में कूद पड़ा, पर इस मकड़े ने तत्काल अपने पञ्जे मेरे शरीर पर गड़ा दिए, और मैं बीच में लटका-सा रह गया। मैंने लोगोंसे बात छिपाने के लिये यह भाव जताया कि वह केवल एक आकस्मिक घटना थी; पर मल्लाहों ने बाद में मुझसे कहा कि मेरा ओवरकोट किसी चीज़ से फँस गया था, और यही कारण था कि मैं लटका रह गया। यह है वह ओवरकोट जिसने मुझे आत्मघात करने में रोका।" यह कहते हुए माकोफ़ फिर एक बार नमी से तर हवा में स्थित किसी काल्पनिक चीज़ को हाथ से सहलाने लगा।

मैं चुप रहा। मेरी कुछ समझ ही में नहीं आता था कि उस आदमी को क्या कहकर सान्त्वना दूँ जो अपनी कल्पना द्वारा सृष्ट किसी एक विचित्र जीवके साथ इतने वर्षों से रहता है पर और सब बातों में जिसके होश हवास दुरुस्त हैं।

उसने धीमी आवाज में बड़बड़ाते हुए कहा—"मैं बहुत दिनों से इस विषय पर आप से बातें करने की इच्छा रखता था। आप प्रत्येक विषय पर ऐसे साहस के साथ बातें करते हैं कि मुझे आप पर विश्वास हो गया है। कृपा करके बताइए, इस सम्बन्ध में आप क्या सोचते हैं ?

यह मकड़ा ईश्वर का भेजा हुआ है या शैतान का ?"

"मैं कुछ नहीं जानता ।"

"आप सोचकर इस सम्बन्ध में मुझे राय दीजिए । मेरी तो यह धारणा है कि इसे ईश्वर ने भेजा है । ईश्वर ही मेरे भीतर स्थित दूसरे की आत्मा की निगरानी करता है । इस काम के लिये उसने किसी देवदूत को नहीं भेजा, क्योंकि मैं इस योग्य नहीं हूँ । पर एक मकड़ा भेजकर उसने बड़ी चतुराई की है । और वह मकड़ा भी ऐसा-वैसा नहीं--बड़ा भयंकर है ! बड़े अर्से के बाद मैं उसके साथ में अपनी बुद्धि को स्थिर रख सकने में समर्थ हो सका हूँ ।

अपनी टोपी उतारकर माकोफ़ ने शूली का सांकेतिक चिह्न शून्य में अंकित किया और धीमे, किन्तु भक्ति के आवेग से पूर्ण, शब्दों में बड़बड़ाने लगा—"हे परम पिता परमात्मा तू महान और करुणा-निधान है; तू बुद्धि का प्रेरक और हमारी आत्माओं का संरक्षक है ।"

इसके कुछ सप्ताह बाद फिर एक बार चाँदनी रात में निजनी की एक निर्जन सड़क में माकोफ़ से मेरी मुलाक़ात हुई । वह दीवार के लगे-लगे कुछ दबता हुआ-सा चल रहा था, जैसे किसी के लिये रास्ता छोड़ रहा हो ।

मैंने पूछा--"कहो, क्या हाल है ? वह मकड़ा क्या अभी तक जीता है ?"

बुड्ढा मुस्कराया, और कुछ नीचे झुककर शून्य को हाथ से सहलाने लगा ।

उसने धीरे से कहा—"वह मेरे साथ चल रहा है ।"

तीन वर्ष बाद, सन् १९०५ में, मैंने सुना कि बल्ख के पास किसी स्थान में माकोफ़ का सब माल चोरी हो गया और वह मार डाला गया ।

कब्रिस्तान का मजूर

जब मैंने क़ब्र खोदने का काम करनेवाले काने बोद्रियागिन को एक विशेष प्रकार का बाजा (कान्सर्टाइना) दिया, जिसे वह बहुत दिनों से चाहता था, तो उसने अपना दाहिना हाथ अपनी छाती पर रखा, और प्रसन्नता से पुलकित होकर अपनी करुण, और कभी-कभी भौतिक रहस्य से पूर्ण, एक मात्र आँख मूँद ली।

वह गद्गद भाव से केवल बोला—"आ–ऽ–ऽ–ह !"

इसके बाद अपने आवेश को दबाकर उसने अपने गञ्जे सिर को हिलाया और प्रायः एक साँस में बोल उठा—"एलेक्से मैक्सिमिच, मैं सच कहता हूँ, तुम्हारे मरने पर मैं तुम्हारी अच्छी सेवा करूँगा।"

वह क़ब्र खोदने के समय भी मेरे दिए हुए उस बाजे को अपने पास रखता था, और जब काम से उसका जी उकता जाता, तो अत्यन्त मधुर भाव से, कोमल स्वर में एक विशेष प्रकार का राग उसपर बजाता। वह एक मात्र उसी विशेष राग को बजाना जानता था। उस राग का नाम कभी वह फ्रेंच उच्चारण के साथ "त्राँ–ब्लाँ" बताता और कभी "दार्न–ब्लार्न।"

एक दिन जब वह वही राग बजा रहा था, तो पास ही एक जनाज़े के सत्कार के लिये एक पादड़ी खड़ा था। जब वह राग बजा चुका, तो पादड़ी ने उसे अपने पास बुलाकर उसे खूब डाँट बताई और कोसा। पादड़ी बोला—"मृत व्यक्तियों का अपमान करता है, सुअर कहीं का !"

बोद्रियागिन मेरे पास आया और उसने पादड़ी की शिकायत करते हुए कहा—"मैं स्वीकार करता हूँ कि मैं ग़लती पर था, पर वह यह कैसे जानता है कि मेरे बाजा बजाने से मृत व्यक्तियों का अपमान हुआ ?"

उसे इस बात पर पूर्ण विश्वास था कि नरक नाम का कोई स्थान नहीं है। उसकी धारणा के अनुसार धर्मात्मा लोगों की मृत्यु के बाद उनकी आत्माएँ शरीर छोड़कर एक "पवित्र स्वर्ग" में उड़कर चली जाती हैं, और पापियों की आत्माएँ उनके शरीर में ही बद्ध रहती हैं, और जब तक कीड़े उनके मृत शरीर को चाट कर साफ़ नहीं कर लेते तब तक वे उनकी क़ब्रों में ही निवास करती हैं। "इसके बाद पृथ्वी आत्मा को हवा में उड़ा देती है, और मिट्टी उसे सूक्ष्म धूलिकणों में बिखेर देती है।"

जब छः वर्ष की लड़की निकोलेवा जिससे मैं बहुत स्नेह करता था, मर गई और उसकी लाश क़ब्र में गाड़ दी गई, तो बोद्रियागिन फावड़े से क़ब्र के ऊपर मिट्टी डालते हुए मुझे सान्त्वना देने की चेष्टा करने लगा। उसने कहा--"भाई साहब, कुछ दुःख न कीजिए। बहुत सम्भव है, उस दूसरी दुनिया में बच्चे यहाँ की भाषा से अधिक सुन्दर और सुख उपजानेवाली किसी दूसरी भाषा में बातें करते होंगे। या यह भी हो सकता है कि वे कुछ बोलते ही न हों, और केवल वायलिन बजाते हुए आनन्द से दिन बिताते हों।"

उसका सङ्गीत-प्रेम बड़ा विचित्र और किसी हद तक ख़तरनाक भी था। सङ्गीत के मोह में पड़कर वह और सब-कुछ भूल जाता था। जब वह कहीं सैनिकों का बैण्ड बजते सुनता, या सड़क पर भीख माँगने वाले किसी व्यक्ति को "आर्गन" (एक विशेष प्रकार का बाजा) बजाते सुनता, या कहीं से पियानों के बजने का शब्द उसके कानों में जाता, वह कानों को खड़ा करके उस ओर अपनी गर्दन लचकाता जहाँ से शब्द आता हो। अपने हाथों को एक-दूसरे से मिलाकर वह उन्हें अपनी पीठ की ओर कर लेता और निश्चल भाव से खड़ा होकर अपनी एकमात्र

आँख को फाड़-फाड़कर उस ओर देखता रहता, जैसे उस आँख से वह शब्द को और अच्छी तरह सुनने में समर्थ हो। अधिकतर ऐसा अवसर तब आता जब वह सड़क पर होता। वह सङ्गीत का शब्द सुनकर सड़कपर अपनी सब सुध-बुध खोकर पुलकित भाव से निश्चल अवस्था में खड़ा हो जाता, और ऐसे अवसर पर कोचवानों की हाँक का शब्द उसके कानों में क़तई नहीं जा पाता था। फलस्वरूप कई बार इस अवस्था में वह घोड़ों के धक्के और कोचवानों के कोड़े खा चुका था।

एक बार उसने अपनी उस अवस्था का वर्णन करते हुए कहा—"जब मैं किसी के गाने या बजाने का शब्द सुनता हूँ तो मुझे यह अनुभव होने लगता है जैसे मैं गोता खाकर नदी के तल पर पहुँच गया होऊँ।"

क़ब्रिस्तान की भिखारिन सोरोकिना से उसका प्रेम-सम्बन्ध हो गया था। सोरोकिना एक शराबी बुढ़िया थी, और आयु में बोद्रियागिन से पन्द्रह वर्ष बड़ी थी। वह स्वयं चालीस वर्ष का हो चला था।

मैंने एक दिन इस सम्बन्ध में उससे पूछा—"तुम ऐसा काम क्यों करते हो?"

उसने उत्तर दिया—"उसे इस बुढ़ौती में दिलासा देने वाला कौन है? मेरे सिवा ऐसा व्यक्ति कोई नहीं है। और मैं—मैं असहाय और अभागे व्यक्तियों को दिलासा देना पसन्द करता हूँ। मुझे स्वयं किसी प्रकार का दुःख नहीं है, इस लिये मैं दूसरों के दुःखों को हलका करने में सहायता पहुँचाता हूँ।"

हम लोग एक भोजपत्र के पेड़ के नीचे खड़े बातें कर रहे थे। सहसा जून मास की आकस्मिक वर्षा ने हम लोगों को भिगा कर तर कर

दिया। बोद्रियागिन की गञ्जी खोपड़ी पर पानी की धारा पड़ने से वह अत्यन्त प्रफुल्ल हो उठा। उसने कहा—"मैं दूसरों के आँसू पोंछने के योग्य होना चाहता हूँ।"

वह पेट के नासूर से पीड़ित जान पड़ता था, क्योंकि उसके मुँह से सड़ी हुई लाश की-सी गन्ध आती थी, वह कुछ खा नहीं सकता था, और बीच-बीच में उसे उल्टियाँ आती रहती थीं; पर यह सब होते हुए भी वह नियमित रूप से परिश्रम पूर्वक काम करता था। क़ब्रिस्तान में, अत्यन्त प्रसन्न-चित्त होकर टहला करता था, और उसकी मृत्यु ऐसे समय हुई जब वह अपने साथियों के साथ ताश खेल रहा था।

जल्लाद का पेशा

निजनी के ख़ुफ़िया पुलिस-विभाग का प्रधान कर्मचारी ग्रेशनर कवि भी था। उसकी कविताएँ कुछ रूढ़िपन्थी सामयिक पत्रों में छपा करती थीं।

उसकी कविताओं में से कुछ पंक्तियाँ मुझे याद हैं—

* चूल्हों से वासना रेंगती हुई चली जाती है,
वह प्रत्येक दरवाज़े से भी रेंगती है,
पर; यद्यपि वह हमारी आत्मा को पङ्गु बना देती है,

तथापि जब वह उन स्थानों में होती है तो जीवन अधिक सुखकर बन जाता है।

मैं अपनी वासना के बिना अपने को अकेला और उदास अनुभव करता हूँ।

मनुष्यों और जन्तुओं के बिना यह पृथ्वी सिसकियाँ भरती रहती है।

एक बार उसने किसी महिला के 'अलबम' में कुछ कामुकतापूर्ण पद लिखे थे, जिनकी प्रारम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार थीं—

केन्द्र द्वार के सामने, एक स्तम्भ पर
एक तीन वर्ष का बालक गर्दन झुकाए खड़ा है;
उसका मुख मुझे विशेष परिचित-सा लगता है,
दुत ! इसे शैतान उठा ले जाय !—यह तो स्वयं मैं हूँ !

इसके बाद अश्लील उपमाओं और रूपकों की भरमार थी।

एलेग्ज़ेन्डर निकिफोरोव नामक एक उन्नीस वर्ष के लड़के ने, जो टाल्सटायन साहित्य से सुप्रसिद्ध आलोचक और विश्लेषक लिओ निकिफोरोव का लड़का था, एक दिन ग्रेशनर को जान से मार डाला। लिओ निकिफोरोव के दुर्भाग्य की सीमा न रही, क्योंकि उसके चार लड़के थे, और वे चारों एक-एक करके विनाश को प्राप्त हो गए। सबसे बड़ा लड़का समाजवादी होने के कारण दीर्घ कारावास और देश-निकाले की सजा भुगतकर हृदय के रोग से मर गया, दूसरा लड़का अपने शरीर पर मिट्टी का तेल डालकर जल मरा; तीसरे ने विष खाकर आत्म-हत्या कर ली, और चौथा लड़का, साशा, ग्रेशनर की हत्या करने के अपराध में फाँसी पर लटकाया गया।

साशा ने दिनदहाड़े खुफ़िया पुलिस के आफ़िस के दरवाजे पर ग्रेशनर की हत्या की थी। ग्रेशनर एक महिला की बाँह-से-बाँह मिलाए चला जा रहा था। साशा ने उसका पीछा करते हुए उसे पकड़ लिया और पीछे से बोला—"ऐ पुलिसवाले !" ग्रेशनर ज्योंही उसकी हाँक सुनकर मुड़ा, निकिफोरोव ने उसके मुख पर और उसकी छाती पर गोली चला दी।

साशा को तत्काल पकड़कर गिरफ़्तार कर लिया गया, और उसे

फाँसी की सज़ा हुई। पर अब यह प्रश्न उठा कि जल्लाद का काम कौन करेगा, क्योंकि निजनी के क़ैदखानों के क़ैदियों में से एक भी व्यक्ति उस घृणित कार्य के लिये राजी न हुआ। अन्त में पुलिस का प्रधान कर्मचारी प्वारे, जो किसी ज़माने में गवर्नर बारानोफ़ का रसोइया था, और बड़ा शराबी और शेख़ीबाज़ था, ग्रिश्का नेरकुलाफ़ नामक एक चिड़ीमार को पचीस रूबल रिश्वत देकर साशा को फाँसी देने के लिये राज़ी कर सका।

ग्रिश्का भी शराब का प्रेमी था। उसकी उम्र ३५ वर्ष के क़रीब थी; उसका क़द लम्बा था, और वह दुबला-पतला लगता था, किन्तु उसके पुट्ठे मज़बूत थे। उसके घोड़े के-स जबड़े पर काले बालों के छोटे से गुच्छे दिखाई देते थे, और सुई की नोक के समान तीखे बालोंवाली भौंहों के नीचे उसकी नींद से अलसाई हुई-सी आँखें जैसे स्वप्न में झूमती रहती थीं। निकिफोरोव को फाँसी पर लटकाने के बाद उसने एक लाल रङ्ग का गुलूबन्द ख़रीदा, और बड़ी घुटकी से युक्त अपने गले के चारों ओर उसे लपेटे रहता। उसने शराब पीना छोड़ दिया और दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के उद्देश्य से एक विशेष प्रकार से खाँसने की आदत डाल ली।

उसके मित्रों ने पूछा—ग्रिश्का, तुम्हें किस बात का गर्व हो गया है ?"

उसने उत्तर दिया—"मुझे सरकार ने एक गुप्त कार्य के लिये नियुक्त कर लिया है !"

पर जब एक दिन वह भूल से अपने मित्रों के आगे यह प्रकट कर बैठा कि उसने एक आदमी को फाँसी पर चढ़ाया है, तो उसके मित्रों ने उसकी घोर निन्दा की, यहाँ तक कि उसे ख़ूब पीटा। इस घटना के

बाद उसने पुलिस के गुप्त विभाग के प्रधान अफ़सर केवडिन को इस आशय की एक अर्ज़ी लिखकर दी कि उसे एक लाल रङ्ग का कोट और लाल धारियोंवाला प्रैंट पहनने की आज्ञा दी जाय, ताकि (उसने स्थिति को समझाते हुए लिखा) "सब नागरिक यह जान जावें कि मैं कौन हूँ, और अपने गन्दे हाथों से मुझे छूने का साहस न कर सकें—क्योंकि मैं सरकारी जल्लाद हूँ।"

केवडिन ने उसे और भी बहुत-से हत्याकारियों को फाँसी पर चढ़ाने के काम पर नियुक्त किया। इस कार्य में ग्रिश्का ने यहाँ तक तरक्की की कि वह मास्को में एक व्यक्ति को फाँसी पर चढ़ाने के लिये बुलाया गया। जब वह मास्को से लौटकर आया, तो अपने महत्त्व के सम्बन्ध में उसका आत्म-विश्वास बहुत बढ़ गया था। पर जब वह निजनी पहुँचा, तो डा० स्मिरनाफ़ नामक एक प्रसिद्ध चिकित्सक के पास गया और उससे इस बात की शिकायत की कि उसकी छाती के भीतर 'हवा का एक बुद्‌बुदा'-सा उठा करता है जो उसे ऊपर आकाश में उठाने के लिये ढकेलता रहता है।

उसने कहा—"यह धक्का ऐसा ज़बर्दस्त होता है कि मुझे ज़मीन पर अपने पाँवों को जमाए रहने के लिये प्रबल चेष्टा करनी पड़ती है, और इस चेष्टा में मैं किसी-न-किसी चीज़ को पकड़े रहने के लिये बाध्य होता हूँ, ताकि मैं बरबस ऊपर उछलने को विवश होकर लोगों की हँसी का पात्र न बनूँ। इस रोग के लक्षण पहले-पहल तब प्रकट हुए जब मैंने एक बदमाश को फाँसी पर चढ़ाया—मुझे ऐसा मालूम होने लगा जैसे कोई चीज़ मेरी छाती के भीतर फड़क रही है और फूलती चली जाती है। अब यह बीमारी इस हालत को पहुँच गई है कि मैं सो नहीं पाता। रात के समय मुझे लेटे-लेटे ऐसा मालूम होने लगता

है जैसे कोई मुझे बरबस ऊपर छत की ओर खींच रहा हो। अब इसका क्या इलाज किया जाय, कुछ समझ ही में नहीं आता। अपने सब कपड़ों को उठाकर अपने ऊपर रख लेता हूँ, और अपना वज़न भारी करने के इरादे से अपनी जेबों और आस्तीनों को ईंटों से भर लेता हूँ। पर इससे कोई लाभ नहीं होता। मैंने यहाँ तक किया है कि अपनी छाती और पेट पर एक मेज़ रखकर अपने पाँवों को पलङ्ग से बाँध दिया, पर फिर भी कोई शक्ति मुझे ऊपर को खींचती रहती है। कृपा करके मेरी छाती को औज़ार से चीरकर हवा के इस बुद्बुदे को बाहर निकाल दीजिए, नहीं तो मैं शीघ्र ही इस दशा को पहुँच जाऊँगा कि पृथ्वी पर मेरे पाँव ठहरने ही नहीं पावेंगे।"

डाक्टर ने उसे सलाह दी कि वह किसी स्नायु-विशेषज्ञ के पास जावे। पर ग्रिश्का ने क्रोधपूर्वक ऐसा करने से इनकार कर दिया। उसने कहा—"यह रोग मेरी छाती में उपजा है, सिरपर नहीं।"

इसके कुछ ही समय बाद वह एक छत पर से नीचे जा गिरा, जिसके फलस्वरूप उसकी रीढ़ टूट गई और खोपड़ी फट गई। जब वह मृत्यु-शय्या पर पड़ा हुआ था, तो वह डा० निफोन्ट डाल्गोपोलाफ़ से बार-बार पूछता था—"क्या मेरे जनाज़े के साथ बैन्ड रहेगा?"

मरने के चन्द मिनट पहले उसने एक आह भरकर अस्पष्ट स्वर में कहा—"यह लो, अब मैं ऊपर की ओर उड़ा चला जा रहा हूँ..."

सौभाग्य का अभिशाप

सेस्त्रोरीत्सक के स्वास्थ्यप्रद स्नानागार में स्टीपेन प्रोखोराफ़ नामक एक प्रायः साठ वर्ष का, तगड़े शरीरवाला नौकर रहता था। उसकी आँखें गुड़िया की आँखों की तरह बाहर को निकली हुई थी, और जब बुड्ढा उन आँखों से किसी चीज़ पर ग़ौर करता, तो उसकी दृष्टि बड़ी विचित्र लगती थी। यद्यपि उन आँखों की चमक बड़ी तेज़ थी और उनमें एक प्रकार की कठोरता का-सा आभास पाया जाता था, तथापि उनके भीतर एक ऐसी मुस्कान भरी रहती थी जो मधुर और कुछ सदय लगती थी। उसकी इस मुसकान से यह भाव झलकता था कि प्रत्येक व्यक्ति में उसे कुछ ऐसी बात दिखाई देती है जो करुणा के योग्य है।

मनुष्यों के साथ उसका व्यवहार ऐसा रहता था जिससे प्रकट हो जाता था कि वह अपने को संसार में सबसे अधिक बुद्धिमान व्यक्ति समझता है। वह सावधान पगों से चलता था और धीमी आवाज़ में बोलता था—जैसे उसके चारों ओर के सब व्यक्ति सोए हुए हों और वह उन्हें जगाना न चाहता हो। वह दृढ़-स्वभाव और कर्मठ था और दूसरों का काम करने के लिये सब समय तैयार रहता था। जब कभी स्नानागार को कोई कर्मचारी उससे किसी काम के लिये कहता, तो प्रोखोराफ़ तत्काल तैयार हो जाता, और कहता—"अच्छी बात है, भाई, अच्छी बात है। मैं यह काम कर दूँगा, तुम इसकी बिलकुल चिन्ता न करो।"

वह बिना किसी प्रकार की नाराज़गी प्रकट किए या शेखी बघारे

सब का काम कर दिया करता था, जैसे वह आलसी व्यक्तियों को भीख बाँट रहा हो।

वह लोगों से बहुत-कम मेल-मिलाप रखता था। प्रायः अकेला ही रहना पसन्द करता था। मैंने कभी उसे अपने साथियों से बात करते नहीं देखा—न काम के समय, न फ़ुर्सत के समय। उसके साथी उसके सम्बन्ध में कोई निश्चित धारणा नहीं रखते थे, पर इतना स्पष्ट था कि वे उसे विशेष चतुर नहीं समझते थे। जब मैं उन लोगों से पूछता—"प्रोखोराफ़ किस प्रकार का व्यक्ति है?" तो वे उत्तर देते—"उसमें कोई खास बात नहीं है।" पर एक बार होटल के नौकर ने मेरे प्रश्न के उत्तर में कुछ सोचकर कहा—"वह घमण्डी है, बड़ा खुर्राट है।"

एक दिन सन्ध्या के समय मैंने प्रोखोराफ़ को अपने कमरे में चाय पीने का निमन्त्रण दिया। मेरा कमरा एक खलिहान के बराबर बड़ा था और उसमें गरम भाप के नल लगे हुए थे जिनसे कमरा गरम रहता था। उसकी दो बड़ी-बड़ी खिड़कियों से सामने पार्क का दृश्य दिखाई देता था। प्रत्येक रात, प्रायः नौ बजे के समय भाप के नल सिसकारने और फुसफुसाने लगते थे, और ऐसा मालूम होता था जैसे कोई निरन्तर कोई धीरे से मेरे कानों में कहता जाता हो—"क्या रबर बड़ा जबर है?" "किसमिस का रस कैसा है?"

बुड्ढा प्रोखोरोफ़ सजधजकर मेरे पास आया। वह एक गुलाबी रङ्ग की नयी कमीज़, मटमैले रङ्ग की नयी 'सूट', और नये 'फेल्ट' जूते पहने था। अपनी मिर्चे के रङ्ग की चौड़ी दाढ़ी पर उसने बड़े मनोयोग पूर्वक कङ्घा और ब्रुश फेरे होंगे, और एक तीव्र गन्ध-युक्त पोमेड से उसने अपने बाल स्निग्ध किए थे। वह बड़ी गम्भीरता के साथ घूँट-घूँट करके चाय पीते हुए मुझसे बातें करने लगा।

उसने कहा––"आपने निष्पक्ष भाव से अपना यह मत प्रकट किया है कि मैं एक सदय व्यक्ति हूँ। पर मैं आज आपके आगे यह स्वीकार करना चाहता हूँ कि मैं जन्म से दूसरों के प्रति उदासीन रहा हूँ और अपना आधा जीवन मैंने इसी उदासीनता के साथ बिताया है। मैं सदय केवल तब बन पाया जब ईश्वर से मेरा विश्वास हट गया।

"प्रारम्भिक जीवन में मुझे प्रत्येक विषय में सफलता-पर-सफलता मिलती चली गई। मेरे जन्म से सौभाग्य ने मेरा साथ दिया। मेरा बाप, जो एक लुहार था, अक्सर कहा करता था—'स्टीपेन केवल सौभाग्य के लिये ही पैदा हुआ है।' इसका कारण यह था कि जिस वर्ष मेरा जन्म हुआ उस वर्ष मेरे बाप के व्यवसाय ने ऐसी उन्नति की कि उसने अपना एक निजी कारख़ाना खोल लिया।

"खेल-कूद में मैं बड़ा भाग्यशाली सिद्ध हुआ, और लिखना-पढ़ना मेरे लिये मुझे बच्चों के खेल की तरह आसान लगता था। मुझे कभी किसी प्रकार की बीमारी नहीं हुई। जब मैंने स्कूल की पढ़ाई समाप्त कर ली, तो मुझे बिना विलम्ब के किसी एक ज़मींदारी के दफ़्तर में नौकरी मिल गई, जहाँ के कर्मचारी बड़े अच्छे स्वभाव के व्यक्ति थे। जिस व्यक्ति ने मुझे अपने यहाँ नौकर रखा वह मुझे चाहता था और उसकी स्त्री मुझसे कहा करती थी—'स्टीपेन, तुम में बड़ी योग्यता है; तुम्हें अपनी इस योग्यता के प्रति ध्यान देते रहना चाहिये।' उसकी यह बात सत्य थी। मुझमें कुछ ऐसे असाधारण गुण थे कि मुझे स्वयं उनके सम्बन्ध में आश्चर्य होने लगता था। मैं घोड़ों की चिकित्सा तक करने लगा था, हालाँकि उनके रोगों का कारण मैं नहीं जानता था। अपने सदय व्यवहार से—बिना छड़ी का इस्तेमाल किए—मैं किसी भी कुत्ते को पिछली टाँगों के बल चलना सिखा सकता था।

"स्त्रियों के सम्बन्ध में भी मैं बड़ा भाग्यशाली था। जिस किसी भी स्त्री की ओर मैं एक बार आँख उठाकर देखता वह निश्चय ही मेरे प्रति आकर्षित होकर मेरे पास चली आती।

"छब्बीस वर्ष की अवस्था में मैं हेडक्लार्क के पदपर नियुक्त हो गया। यदि मैं चाहता तो मैं बड़ी आसानी से ज़मींदारी का मैनेजर बन सकता था। मार्केविच नाम के एक साहब थे जो आप ही की तरह किताबें लिखा करते थे। वह अत्यन्त गद्गद भाव से मेरे सम्बन्ध में कहते—"प्रोखोराफ़ एक वास्तविक रूसी है, वह द्वितीय पुरसाङ्ग है।" मुझे नहीं मालूम कि यह पुरसाङ्ग कौन था, पर इतना निश्चित है कि मार्केविच साहब ज़्यादातर लोगों की कड़ी आलोचना किया करते थे। इसलिये उनके मुख से निकली हुई प्रशंसा कोई दिल्लगी की बात नहीं थी। मुझे अपने पर बड़ा नाज़ था, और बड़ी अच्छी तरह से मेरे दिन कट रहे थे। मैंने विवाह करने के उद्देश्य से कुछ रुपया जमा करके अलग रख लिया था, और एक सुन्दरी और हर तरह से योग्य स्त्री भी मैंने ढूँढ़ ली थी; पर सहसा, प्रायः अज्ञात रूप से, मैं यह अनुभव करने लगा कि एक घातक सङ्कट ने मुझे घेर लिया है। एक अत्यन्त विचित्र प्रश्न मेरे मन को आग की तरह जलाने लगा। वह प्रश्न यह था—मेरे प्रत्येक विषय में भाग्यशाली होने का कारण क्या है? मुझे यह सौभाग्य क्यों प्राप्त है? इस प्रकार के प्रश्न प्रतिक्षण मेरे मस्तिष्क में मँड़राते रहते थे, और उनके कारण मैं रात में सो नहीं पाता था।

जब मैं दिन के काम से हल जोतने वाले घोड़े की तरह थका हुआ होता था, तो मैं लेटे-लेटे, आँखें फाड़-फाड़कर सोचता रहता—"क्यों भाग्य बराबर मेरा साथ देता रहता है? मुझमें योग्यता है, सन्देह नहीं; मैं एक धार्मिक व्यक्ति हूँ, बड़ा शिष्ट हूँ, कभी शराब नहीं

पीता, और मूर्ख भी नहीं हूँ। यह सब सही है। पर मैं प्रतिदिन ऐसे व्यक्तियों को देखता हूँ जो मुझसे अधिक धार्मिक और सदाचारी हैं, और फिर भी भाग्य उन पर क़तई प्रसन्न नहीं है।"

"मैं इस तरह की बातें सोचता रहता और इस बात पर विचार करता रहता कि ईश्वर की यह कैसी माया है! मैं इस क़दर सुख और चैन में हूँ, जैसे कोई मक्खी शहद के बर्तन में। कौन ऐसा व्यक्ति है जो मुझे किसी तरह की भी हानि पहुँचा सकता है? यह विचार मेरे दिमाग़ से किसी प्रकार हटता ही न था। मुझे ऐसा अनुभव होने लगा कि जीवन में मेरी सफलता के पीछे कोई रहस्य अवश्य है; कोई गुप्त मन्त्र मेरे भीतर छिपे-छिपे अपना काम कर रहा है। पर उस रहस्य का लक्ष्य क्या है? मैं बार-बार भगवान से यह प्रश्न करता था कि उसका क्या उद्देश्य है, और वह मुझे किधर ले जा रहा है?

"पर ईश्वर बिलकुल मौन साधे बैठा था। वह मेरे प्रश्न के उत्तर में एक शब्द भी नहीं बोलता था।

"अन्त में मैंने एक निश्चय किया। मैंने सोचा—यदि मैं कोई बेईमानी का काम करूँ तो देखें, उसका क्या परिणाम होता है। यह सोचकर मैंने दफ्तर की तिजोरी से चार सौ बीस रूबल निकाल लिए। मैं जानता था कि तीन सौ से उपर की कोई भी रक़म चुराने पर बड़ी कड़ी सजा दी जाती है। कुछ भी हो, मैंने रुपया चुरा लिया। तत्काल इस बात का पता लग गया कि चोरी हुई है। ज़मींदारी के मैनेजर फिलिप कार्लोविच ने, जो बड़े सहृदय स्वभाव का व्यक्ति था, मुझसे पूछा कि मामला क्या है, क्योंकि मैंने ऐसे ढङ्ग से रुपया चुराया था कि मेरे सिवा और किसी व्यक्ति पर सन्देह नहीं किया जा सकता था। मैंने देखा कि फिलिप कार्लोविच बड़े पशोपेश में पड़ गया है। मैंने

सोचा कि इस भले आदमी को क्यों नाहक़ तङ्ग किया जाय ? इसलिये मैंने स्पष्ट शब्दों में उससे कह दिया कि मैंने रुपया चुराया है, पर उसने फिर भी मेरी बात पर विश्वास नहीं किया। उसने कहा कि मैं मज़ाक कर रहा हूँ। बहरहाल अन्त में उसे विश्वास करना ही पड़ा। उसने मेरा बयान मेरे मालिक की पत्नी के आगे पेश कर दिया। उस नेक स्त्री को इस बात का अत्यन्त आश्चर्य हुआ और गहरा धक्का पहुँचा। उसने मुझसे कहा—'स्टीपेन, तुम्हें क्या हो गया है ?' मैंने कहा—'यदि आप चाहें तो मुझे गिरफ़्तार करवा सकती हैं।' मेरा यह उत्तर सुनकर वह बहुत नाराज़ हो उठी, और घबराहट के कारण अपने ब्लाउज़ के सिरे को पकड़कर खींचते हुए बोली—'मैं तुम्हें गिरफ़्तार नहीं करवाऊँगी; पर तुम्हारा व्यवहार ऐसा अशिष्ट है कि तुम्हें गिर्जे में जाकर पुरोहित के आगे अपना यह पाप स्वीकार करना होगा।' मैंने ऐसा ही किया, और इसके बाद उन लोगों को छोड़कर मैं मास्को चला गया। वहाँ से मैंने चुराया हुआ रुपया डाक से वापस भेज दिया, अपने नाम का उल्लेख नहीं किया।"

बुड्ढे का क़िस्सा सुनने के बाद मैंने उससे पूछा—"तुमने ऐसा क्यों किया ? क्या तुम्हारे मन में दुःख झेलने की इच्छा उत्पन्न हुई थी ?"

उसने अपनी घनी, मोटी भौंहें ऊपर को तान कर आश्चर्य का भाव प्रकट किया, और उसके बाद उसके चेहरे पर एक अव्यक्त मुसकान का भाव झलक उठा। पर शीघ्र ही वह मुसकान तिरोहित हो गई, और वह अपने सिर के घुँघराले बालों पर हाथ फेरते हुए कहने लगा—

"नहीं, मेरे मन में यह भाव तनिक भी नहीं था। मैं क्यों दुःख

झेलना चाहूँगा ? मैं जीवन में शान्ति चाहता हूँ। वह केवल एक कुतूहल था जिसने मुझे धर दबाया। मैं अपने सौभाग्य का भेद जानना चाहता था। मैं इस बात की परीक्षा करना चाहता था कि मेरा सौभाग्य किस हद तक ठोस है। चूँकि मैं नौजवान था, इसलिये शायद स्वयं अपने साथ खेल रहा था। हालाँकि मैंने जो कुछ किया वह मेरे लिये केवल एक साधारण खेल नहीं था। मेरा जीवन-चक्र अत्यन्त असाधारण रूप से चला था। मैं एक गोद में लिये जानेवाले कुत्ते की तरह लाड़-प्यार और सुख-सन्तोष के बीच में रह चुका था। मेरे आस-पास के लोग रोते और झीखते रहते थे, पर मुझे ईश्वर ने जैसे मरते दम तक सुखशान्तिपूर्ण जीवन बिताने का अभिशाप दे रखा था। प्रत्येक व्यक्ति को दुःख-कष्टों का सामना करने की सुविधा उसने दे रखी थी, पर मेरे पास किसी प्रकार की विपत्ति फटक नहीं पाती थी, जैसे मैं मनुष्य-जगत् की रात-दिन की साधारण बातों की योग्यता ही न रखता होऊँ।

"मास्को में मैं अपने होटल के कमरे में लेटे-लेटे यह सोचा करता कि मेरी जगह पर यदि कोई दूसरा आदमी होता तो वह केवल एक रूबल की चोरी के लिये भी पुलिस के हवाले कर दिया जाता, और मुझे चार सौ रूबल चुराने पर भी किसी प्रकार का दण्ड नहीं दिया गया ! इस बात पर मैं हँसा, क्योंकि यह मेरा दुर्भाग्य था, जिसे मैं इतने दिनों से चाह रहा था।

"पर फिर मैंने अपने मन में कहा—'नहीं, यह बात नहीं है; स्टीपन, अभी ज़रा ठहरो !' मैं होटल के निवासियों की चाल-ढाल और रङ्ग-ढङ्ग पर ग़ौर करता रहता। होटल बड़ा गन्दा था और उसमें अधिकतर जालसाज़, साधारण श्रेणी के ऐक्टर और अभागिनी,

चरित्रहीन स्त्रियाँ रहती थीं। उनमें से एक ने यह स्वाङ्ग रचा कि वह रसोइया है, पर वह एक पेशेवर चोर निकला। मैंने एक दिन उससे पूछा—'तुम्हारा कारोबार कैसा चलता है?' उसने उत्तर दिया—'अच्छा ही चलता है; वैसे सभी व्यवसायों में तेज़ी और मन्दी रहती ही है।' जब धीरे-धीरे हम दोनों में घनिष्ठता हो गई तो वह मुझसे अधिक खुलकर बातें करने लगा। एक बार उसने कहा—'मेरे दिमाग़ में एक ऐसी बात समाई हुई है, जो काम में लाए जाने पर बड़े लाभ की हो सकती है। पर उसके लिये मुझे कुछ अच्छे औज़ारों की आवश्यकता है जो क़ीमती हैं; पर उन्हें ख़रीदने के लिये मेरे पास पैसे नहीं हैं।' उसकी बात सुनकर मैंने अपने मन में कहा—'आख़िर यह एक ऐसी बात मेरे सामने आई है, जो मेरी इतने दिनों की इच्छा पूरी कर सकती है।' मैंने पूछा—वह सूझ किस प्रकार की है? क्या किसी की जान लेने की बात है?' उसने कहा—'ऐसे काम से ईश्वर बचावे! मैं अपने निज के प्राणों को बहुत मूल्यवान समझता हूँ!'

"कुछ भी हो, मैंने उस आदमी को औज़ारों के लिये रुपये दे दिए। पर यह शर्त रखी कि वह अपने काम में मुझे भी शरीक करेगा। मेरी शर्त सुनकर उसने मुँह बिचकाया और कतराने लगा। पर अन्त में राज़ी हो गया। उसका 'उद्योग' मुझे क़तई पसन्द नहीं आया। वह इस प्रकार था—हम दोनों एक मकान में गए और यह बहाना बताया कि हम घरवालों से किसी काम से मिलने के लिये आए हैं। यह बात पहले से मालूम थी कि उस समय घर पर कोई नहीं है। मकान का दरवाज़ा एक सुन्दरी लड़की ने खोला—जो स्पष्ट ही मेरे साथी की मित्र थी। मेरे साथी ने तत्काल उस लड़की के हाथ पाँव कसकर बाँध दिए और इसके बाद भीतर जाकर चीज़ों की तलाश करने

लगा। हम लोग माल मत्ता लेकर बिना किसी बाधा के बड़ी आसानी से बाहर चले आए। इसके कुछ ही समय बाद वह आदमी मास्को छोड़कर चला गया। मैं अकेला रह गया।

"मैंने सोचा—'तो यह है बात! फिर सौभाग्य! यह सारा मामला बड़े मज़े का रहा, और साथ ही उसने मेरे मन में क्रोध भी भड़का दिया।

मुझे अपने ऊपर और साथ ही ईश्वर के ऊपर भी बड़ा ग़ुस्सा आ रहा था, जिसे निश्चय ही मेरी करतूतों का हाल मालूम रहना चाहिये था। मैंने सोचा कि यदि वह सब-कुछ जानता है, तो मुझे दण्ड क्यों नहीं देता? क्यों मैं फिर भी भाग्यशाली बना हुआ हूँ। इस प्रकार के विचार मन में लेकर एक रात मैं एक थियेटर में जा पहुँचा। ज्योंही मैं ऊपर 'बैल्कनी' की एक सीट पर बैठा, त्योंही वह सुन्दरी लड़की मुझे बिलकुल पास ही बैठी हुई दिखाई दी, जिसके हाथ-पाँव हम लोगों ने बाँधे थे। वह स्टेज की ओर देख रही थी और एक रूमाल से अपनी आँखें पोंछ रही थी।

"बीच में जब 'इन्टरवल' हुआ तो मैं उसके पास जाकर बैठ गया। मैंने कहा—'मेरा यह खयाल है कि आपको मैंने इसके पहले कहीं देखा है।' 'चूँकि वह मुझसे बातें करने को उत्सुक नहीं जान पड़ती थी, इसलिए मैंने उसे दो-एक बातों की याद दिलाई।

"उसने कहा—"चुप! चुप! शोर न मचाओ!'

"मैंने पूछा—'आप रो क्यों रही हैं?'

'मुझे राजकुमार की दशा देखकर रूलाई आ रही है।' (स्टेज पर एक राजकुमार की बड़ी दुर्दशा हो रही थी।) खेल समाप्त होने पर वह मेरे साथ पान-गृह में गई और वहाँ से मैं उसे अपने डेरे पर ले आया। तब से हम दोनों प्रेमिक-प्रेमिका के बतौर रहने लगे।

"उसका विश्वास था कि मैं एक पेशेवर चोर हूँ, और समय-समय पर वह पूछा करती थी कि कोई नया काम और नया स्थान मैंने ढूँढ़ा है या नहीं।

"मैं उत्तर देता—'नहीं, कोई नहीं।'

" 'अच्छी बात है, मैं तुम्हारा परिचय कुछ लोगों के साथ करा दूँगी।' और वास्तव में उसने मेरा परिचय कुछ चोरों के साथ कराया। चोर होने पर भी वे सब लोग भले आदमी थे। उनमें से एक विशेष व्यक्ति, जिसका नाम कोस्टिया बाश्माकाफ़ था, मुझे ख़ास तौर से पसन्द आया। वह बड़ा निष्कपट और ख़ुशमिजाज़ आदमी था। उससे शीघ्र ही मेरी घनिष्ठ मित्रता हो गई।

"एक दिन मैंने उसे अपने हृदय की असली बात बता दी। मैंने उससे कहा कि जिस प्रकार का जीवन मैं बिता रहा हूँ, वास्तव में उससे मुझे घृणा है, और मैंने केवल कुतूहल के कारण चोरी का पेशा अख़्तियार किया है।

"उसने कहा—'ठीक यही हाल मेरा भी है। मेरे मन में जो ऊँची भावनाएँ उठती रहती हैं उन्हीं के उसकाने से मैंने यह पेशा स्वीकार किया है। इस संसार में बहुत-सी सुन्दर बातें भरी पड़ी हैं, और जीते रहने में बड़ा सुख है! कभी-कभी मुझे बीच सड़क में आनन्द के कारण यह चिल्लाने की इच्छा होती है—'देखो लोगो, मैं एक चोर हूँ, मुझे गिरफ़्तार कर लो!'

"वास्तव में वह बड़ा विचित्र आदमी था। एक दिन एक तेज़ रफ़्तार से चलनेवाली रेलगाड़ी पर से कूदकर उसने अपनी बाँह तोड़ डाली; इसके बाद उसे क्षय रोग ने घर दबाया; वह 'स्टेप्स' में हवा-बदली के लिये चला गया और वहाँ 'क्यूमिस' (घोड़ी का दूध) पीने लगा।

"मैं अपने दूसरे चोर साथियों के साथ चौदह महीने तक रहा। हम लोगों ने बड़े-बड़े मकानों पर डाका डाला, रेलगाड़ियों में चोरी की, और प्रतिबार मैं इस प्रत्याशा में रहता कि दूसरे दिन कोई अत्यन्त आश्चर्यजनक और भयानक घटना अवश्य ही घटेगी। पर हम लोगों की सब कारसाज़ियाँ बिना किसी विघ्न के सफल होती चली गईं।

"एक दिन हमारे दल के मुखिया मिखेल पेट्रोविच बोरोखाफ़ ने, जो एक आदरणीय और बुद्धिमान व्यक्ति था, हम सब लोगों को अपने पास बुलाया और कहा—'जिस दिन से स्टीपन हम लोगों के बीच आया उस दिन से भाग्य ने बराबर हम लोगों का साथ दिया है।' ये शब्द सुनकर मैं अपने होश में आया। मेरे मन में फिर से वे पुराने विचार उथल-पुथल मचाने लगे जिन्हें मैं उत्तेजनापूर्ण जीवन बिताने के कारण भूल गया था। मैं भ्रान्त भाव से सोचने लगा—'अब' इसके बाद, मुझे क्या करना चाहिये ? क्या किसी की हत्या की जाय ?'

" 'इस विचार ने मेरे भीतर कील ठोंकना शुरू किया। मैं किसी प्रकार अपने को उससे मुक्त नहीं कर सका। वह मेरे भीतर गड़ गया और विष का-सा असर दिखाने लगा। मैं रात के समय पलङ्ग पर लेटे-लेटे, दो घुटनों के बीच में अपने हाथों को लटकाकर सोचता—क्यों ईश्वर, तुम्हारी क्या मंशा है ? तुम्हें इस बात की तनिक भी परवा नहीं है कि मैं किस प्रकार का जीवन बिताता हूँ। तुम इस बात के प्रति उदासीन मालूम होते हो कि मैं एक मनुष्य को, अपने ही समान एक जीव को, जान से मार डालने की बात सोच रहा हूँ। कुछ भी हो, यह काम बहुत आसान रहेगा।'

"पर ईश्वर ने मेरी बात का कोई उत्तर नहीं दिया।"

यह कहकर बुड्ढे ने एक सर्द आह भरी और अपनी रोटी को मुरब्बे से मीठा करने लगा।

मैंने कहा—"तुम बड़े अभिमानी मालूम होते हो।"

अपनी मोटी भौंहों को फिर एक बार ऊपर उठाकर वह ग़ौर से मेरी ओर देखने लगा। उसकी गुड्डे की-सी आँखों में एक शून्य भाव झलक उठा, और साथ ही एक वीभत्स प्रकाश से वे जगमगा उठीं। उसने कहा—"मैं अभिमानी कैसे हो सकता हूँ? मेरी तो यह धारणा है कि मनुष्य के पास अभिमान करने के लिये कुछ भी नहीं है।"

रोटी के छोटे-छोटे टुकड़ों को बालों से ढके मुँह के भीतर डालते हुए वह धीमी आवाज़ में ऐसे भाव से कहता चला गया जैसे वह किसी अपरिचित व्यक्ति के सम्बन्ध में बोल रहा हो, जिसकी तनिक भी परवा उसे नहीं है।

उसने कहा—"हाँ, तो ईश्वर चुप्पी साधे बैठा रहा। और शीघ्र ही एक ऐसा उपयुक्त अवसर आया जिसका लोभ मैं न सँभाल सका। हम लोग रात के समय किसी देहाती मकान के भीतर माल चुराने के कार्य में जुटे हुए थे। सहसा अन्धकार में किसी एक स्थान से यह आवाज़ आई—'चचा, क्या तुम हो?' मेरा साथी उस आवाज़ से घबराकर बाहर बरामदे में जा कूदा, पर मैंने स्थिर भाव से चारों ओर देखा। मुझे एक दरवाज़ा दिखाई दिया, और उसके पीछे किसी व्यक्ति को हिलते-डुलते हुए मैंने देखा। मैंने धीरे से उसे खोला, और देखा कि कमरे के भीतर एक कोने में एक प्रायः बारह वर्ष का लड़का पलङ्ग पर लेटा हुआ अपने सिर के लम्बे बालों को खुजला रहा था। उसने फिर एक बार पूछा—'चचा—क्या तुम हो?' मैंने ग़ौर से उसकी ओर देखा। मेरे हाथ-पाँव एक अनोखे ढङ्ग से काँपने लगे और मेरा हृदय

बेतहाश धड़कने लगा। जिस अवसर की खोज में मैं इतने दिनों से था, वह आ पहुँचा।

"मैंने मन-ही-मन अपने को सम्बोधित करते हुए कहा—"स्टीपन, इस अवसर को हाथ से न जाने दो, जुट पड़ो!" पर शीघ्र ही मैं सँभल गया। मैंने सोचा—'नहीं, मैं इस प्रकार की कुचेष्टा कभी नहीं करूँगा! ईश्वर, तो क्या तुम इतने दिनों तक मुझे भाग्यशाली बनाकर और सब कामों में सफलता प्रदान करके इसी पाप के लिये उसकाना चाहते थे? एक निर्दोष बालक की हत्या! इतने दिनों तक तुम मुझे इस भयङ्कर पाप की ओर ढकेले लिए जाते थे! नहीं, नहीं, नहीं! मैं ऐसा कभी नहीं कर सकता।'

"अपनी इस भावना में मैं इस क़दर क्रुद्ध हो उठा कि मैं बिलकुल अनमने भाव से उस स्थान से बाहर जङ्गल की ओर चला गया। कुछ समय बाद मैं अपने साथी के साथ एक पेड़ के नीचे जा बैठा। मेरा साथी सिगरेट का धुँआ उड़ाते हुए धीमी आवाज़ में न जाने क्या बड़बड़ा रहा था। रिमझिम पानी बरस रहा था, जङ्गली पेड़ों के पत्ते हवा से खड़खड़ा रहे थे, और उस अन्धकार में मैं अपनी आँखों के आगे उस नींद से अलसाए बालक को देख रहा था, जो निपट निस्सहाय था और पूर्ण रूप से मेरे वश में था। यदि एक क्षण पहले मेरी भावना बदल न गई होती, तो वह लड़का समाप्त हो गया होता। उफ़!.........

"यह विचार मेरे दिल और दिमाग़ पर ऐसे भयङ्कर रूप से चोट करने लगा कि मैं स्वयं अपने को उस असहाय बालक की तरह समझने लगा। मैंने स्वयं अपने मनमें कहा—'तुम चुपचाप बैठे हो, और यह नहीं जानते कि एक मिनट के भीतर मैं क्या कर सकता हूँ, ठीक

जिस प्रकार मैं नहीं जानता कि तुम न जाने क्या कर सकते हो। सहसा तुम मुझ पर टूट सकते हो, या मैं तुमपर टूट सकता हूँ। इस प्रकार की दोनों ओर की असहाय अवस्था कैसी लोभनीय होती है! और यह भी आश्चर्य में डालनेवाली बात है कि हमारे इस प्रकार के कार्यों के लिये कौन प्रेरित करता है?' इस प्रकार के ऊटपटाँग विचार मेरे मन में उठने लगे।

"सुबह होते ही मैं शहर को वापस चला गया और सीधे जज स्वियातुखिन के पास पहुँचा। मैंने उससे कहा—'साहब, मुझे गिरफ़्तार करने की कृपा कीजिए; मैं एक चोर हूँ।' जज बड़े भले स्वभाव का आदमी जान पड़ा। वह शान्त-प्रकृति का था, पर था मूर्ख।

"उसने पूछा—'तुम क्यों अपनी चोरी स्वीकार करना चाहते हो? क्या अपने साथियों से तुम्हारा झगड़ा हो गया है? या चोरी के माल के हिस्सा-बाँट के सिलसिले में उनसे तुम्हारी खटपट हो गई है?'

"मैंने कहा—'मेरा कोई साथी नहीं था; मैंने अकेले ही चोरी की है।' इसके बाद मैंने अपने जीवन की सारी कथा उसके आगे कह सुनाई, ठीक जिस प्रकार मैं इस समय आपको सुना रहा हूँ। मैंने उसे बताया कि ईश्वर ने कैसा निष्ठुर खेल मेरे साथ खेला है।"

यहाँ पर मैंने उसकी बात बीच ही में काटते हुए कहा—"पर स्टीपन इलिच, तुम इस बात के लिये ईश्वर को क्यों दोषी ठहराते हो? शैतान का दोष क्यों नहीं बताते?"

बुड्ढे ने अत्यन्त शान्त भाव से निश्चित विश्वास पूर्वक उत्तर दिया—"शैतान कहीं नहीं है। लोगों ने अपनी नीचता की सफ़ाई के लिये उसे गढ़ डाला है। शैतान किसी चालबाज़ की बुद्धि की उपज है। ईश्वर का लाभ भी इस उद्देश्य के भीतर छिपा है, ताकि किसी अन्याय

के लिये उसपर किसी प्रकार का दोष आरोपित न किया जा सके। ईश्वर और मनुष्य-इन दोनों के बीच में तीसरा कोई नहीं है। जिन-जिन व्यक्तियों की तुलना शैतान से की गई है—युदास, केन, ज़ार, प्रचण्ड आइवान—वे सब मनुष्य की बुद्धि की उपज के सिवा और कुछ नहीं हैं; उनका आविष्कार इस उद्देश्य से किया गया है कि जन-साधारण के पाशविक कर्मों और सञ्चित पापों का उत्तरदायी एकमात्र व्यक्ति को बनाया जाय। मैं ठीक कहता हूँ, आप विश्वास करें। हाँ, हम लोग, जो कि घोर नीच और पापी हैं, अपने पापों से स्वयं जकड़े जाते हैं, और तब हम किसी ऐसे व्यक्ति का आविष्कार करने लगते हैं जो हम से भी अधिक नीच हो—अर्थात् शैतान। हम सोचते हैं कि हम बुरे हैं, पर बहुत बुरे नहीं—ऐसे लोग भी वर्तमान हैं जो हमसे भी अधिक नीच हैं।

"पर मैं अपने जज के सम्बन्ध में कह रहा था। उसके कमरे की दीवारों पर कुछ चित्र टँगे थे और सारा-कमरा बहुत अच्छे ढङ्ग से सजा हुआ था। उसके मुख में दया का भाव वर्तमान था, हालाँकि इस बात से कुछ बनता-बिगड़ता नहीं, क्योंकि अक्सर सड़ी-गली चीज़ें शानदार साइनबोर्ड की आड़ में बिकती हैं। कुछ भी हो, जब मैं उसे अपना क़िस्सा सुना रहा था, तो ऊपर के कमरे में कोई पियानो बजा रहा था। पियानो की आवाज मेरे कानों को बहुत खटक रही थी। मैंने मन-ही-मन कहा—"यह देखो ईश्वर, तुमने यह सब कैसा गड्डबड्ड कर डाला है।"

"मैं बहुत देर तक बोलता रहा, और जज इस प्रकार ध्यानमग्न होकर सुन रहा था, जिस तरह कोई धार्मिक बुढ़िया गिर्जे में पादड़ी की बातें सुनती है। पर वह मेरी बातें समझ नहीं पाया।

"उसने कहा—'मुझे तुम्हें अवश्य ही गिरफ़्तार करना पड़ेगा,

और अदालत में तुम्हारा मामला चलेगा। पर मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि तुमने जो बातें मुझसे कही हैं, यदि ठीक उसी तरह तुम 'ज्यूरी' के आगे भी अपना बयान दो, तो तुम निश्चय ही छूट जाओगे। मैं तुम्हारे आगे जेल नहीं, बल्कि एक धार्मिक मठ देख रहा हूँ।'

"मुझे जज की इस तरह की बात सुनकर दुःख हुआ। मैंने कहा—'आप मेरी रामकहानी का एक अक्षर भी नहीं समझ पाए हैं, और अब इसके आगे मैं कुछ कहना भी नहीं चाहता।'

"कुछ भी हो, उसने मुझे पुलिस-स्टेशन में भेज दिया, और वहाँ खुफिया पुलिस के आदमियों ने मुझे घेर लिया। उन्होंने कहा—'हमें अच्छी तरह मालूम है कि जो चोरियाँ स्वीकार की हैं उनमें अकेले तुम्हारा हाथ नहीं था। हमें ठीक-ठीक बताओ कि तुम्हारे साथी कहाँ हैं। तब—आओ और हमारे साथ काम करो।'

मैं इन दो में से किसी भी बात पर राज़ी न हुआ। फल यह हुआ कि वे लोग मुझे बुरी तरह परेशान करने लगे। उन्होंने मुझे खाने को कुछ भी नहीं दिया और भूखों मरने के लिये छोड़ दिया। यह स्वीकार करना पड़ेगा कि यहाँ मैंने जीवन में पहली बार थोड़ा बहुत कष्ट का अनुभव किया।

इसके बाद अदालत में मामला चला। मुझे अदालत की कारवाई तनिक भी पसन्द नहीं आई, और मैंने वहाँ एक शब्द भी अपने मुँह से नहीं निकाला। 'ज्यूरी' मेरे मौन से बहुत क्रुद्ध हो उठे और मुझे जेल भेज दिया गया। वहाँ मैं ऐसे लोगों के बीच पड़ा रहा जो कीड़ों और जानवरों से बेहतर नहीं थे।

"मैंने फिर एक बार मन-ही-मन कहा—'हाय ईश्वर, तुमने यह सब कैसा गड़बड़झाला कर दिया है! कैसा गुड़-गोबर!' यह भावना

बार-बार मेरे मन में उठने लगी। मैं इस बात पर कुछ भी महत्त्व नहीं देना चाहता था कि मनुष्य क्या कर सकता है और क्या नहीं, क्योंकि मेरे मन में यह विश्वास जम गया था कि मनुष्य के जीवन का परिचालन केवल ईश्वर द्वारा होता है।

"उस जेलखाने के सम्बन्ध में कोई अच्छी बात मुझे याद नहीं आती, जब मैं क़ैद से छूटकर बाहर आया, तो मैं इधर-उधर अपने चारों ओर के जीवन पर ग़ौर करने लगा। इसके बाद मैं कई स्थानों में चक्कर लगाते हुए भटकता रहा, और कुछ समय बाद एक लोहे की 'फौण्ड्री' में मैंने काम किया––पर शीघ्र ही वह काम छोड़ दिया। वहाँ मुझे बहुत गरम मालूम होता था। इसके अलावा मैं लोहा या और किसी धातु का प्रेमी, नहीं हूँ––मेरा विश्वास है कि जीवन की सब परेशानियाँ और सब प्रकार की गन्दगियाँ उन्हीं से पैदा होती हैं। यदि संसार में धातु न होते तो मनुष्य अधिक आराम से जीवन बिताता।

"इसके बाद मैंने एक-एक करके सब प्रकार के कामों पर हाथ लगाया––यहाँ तक कि भङ्गी का काम भी किया। कोई एक अज्ञात प्रवृत्ति मुझे गन्दे-से-गन्दे कामों की ओर आकर्षित करने लगी। अन्त में मैंने किसी ऐसे स्नानागार में काम करने का निश्चय किया जहाँ लोग स्वास्थ्य सुधारने को आते हों। प्रायः सत्रह वर्षों से मैं लोगों को नहलाने का काम कर रहा हूँ, और उन्हें भरसक किसी बात का कष्ट न पहुँचाने की चेष्टा किया करता हूँ। लोगों को तङ्ग करने में लाभ ही क्या है? उससे किसी का कुछ नहीं बनता। मैं अब बिना ईश्वर के जीवन बिताता हूँ। मुझे यह सोचकर लोगों पर तरस आता है कि वे इस क़दर अनाथ और असहाय हैं––और कुल मिलाकर जीवन मुझे नीरस मालूम होता है।"

विचित्र हत्यारा

जज एल. एन. स्वियातुखिन ने अपनी मृत्यु के प्रायः दो मास पहले एक दिन मुझसे कहा—

"विगत तेरह वर्षों के भीतर जितने भी खूनी मेरे सामने आए हैं उनमें से केवल एक व्यक्ति मेरे मन में, मनुष्य के आगे और मनुष्य के लिये, भय की भावना जगाने में समर्थ हुआ है। वह व्यक्ति है लद्दू घोड़ा हाँकनेवाला, मर्कुलाफ़। साधारण खूनी अत्यन्त निस्तेज और जड़-जीव होता है; वह आधा मनुष्य और आधा पशु होता है, और अपने दुष्कर्म के विशेषत्व को समझने में असमर्थ होता है; या वह एक नीच और चालाक व्यक्ति होता है——जाल में फँसी हुई कातर लोमड़ी की तरह; या वह एक असफल, हताश हिस्टीरिया-ग्रस्त, प्रतिपल केवल एक ही बात पर विचार करते रहनेवाला, दिलजला होता है। पर जब मर्कुलाफ़ 'विचार के तख़्त पर मेरे सामने खड़ा हुआ तो मुझे तत्काल ऐसा भान हुआ कि उसका व्यक्तित्व किसी असाधारण भौतिक रहस्य से घिरा हुआ है।"

स्वियातुखिन ने अपनी आँखें आधी मूँद लीं, जैसे वह उस चित्र की स्मृति स्पष्ट रूप से अपने मन की आँखों के आगे लाना चाहता हो।

वह कहता चला गया——"एक दीर्घकाय, चौड़े कन्धोंवाला, प्रायः पैंतालीस वर्ष का किसान, पतला किन्तु सुन्दर चेहरा, ऐसा चेहरा जैसा पवित्र मूर्तियों में पाया जाता है। एक लम्बी, अधपकी दाढ़ी, सिर के बाल घुँघराले, कपाल के दोनों सिरे गञ्जे, और कपाल के बीच में सींग की तरह लटका हुआ क़ज़्ज़ाक फ़ैशन का भड़कदार बालों का गुच्छा।

दो छोटे-छोटे गहरे गढ़ों से, जो कपाल पर लटके हुए बालों के गुच्छे से ठीक मेल खाते थे, एक जोड़ा मटमैले रङ्ग की आँखों का मुझ मार्मिक दृष्टि से घूर रहा था। उन आँखों में कोमल और करुण भाव झलकता था।"

अपनी साँस से एक सड़ी गन्ध निकालते हुए—वह पेट के नासूर से पीड़ित था—जज स्वियातुखिन ने अपने मिट्टी के-से रङ्ग के मुरझाए हुए चेहरे को चञ्चल भाव से सिकोड़ा। इसके बाद कहने लगा—

"सबसे अधिक आश्चर्य मुझे उसकी आँखों के करुण भाव से हुआ—मैं सोचने लगा कि वह भाव उसमें कहाँ से आया होगा ? और मैं स्वीकार करता हूँ कि उसे देखकर मेरी पेशागत उदासीनता काफ़ूर हो गई, और एक प्रकार के आशंकापूर्ण कुतूहल ने मुझे धर दबाया—यह अनुभव मेरे लिये एक़दम नया और अरुचिकर था।

"उसने मेरे प्रश्नों का उत्तर ऐसे जड़ भाव से दिया जिससे यह अनुभव होने लगता था कि वह बहुत बोलने का न आदी है न इच्छुक। उसके उत्तर बहुत संक्षिप्त और स्पष्ट होते थे। ज़ाहिर था कि वह स्पष्ट शब्दों में सब-कुछ स्वीकार करने को तैयार है। मैंने प्रश्नों के बीच में एक ऐसी बात उससे कही जैसी मैं उस स्थिति में कभी किसी दूसरे व्यक्ति से नहीं कह सकता था। मैंने कहा—"मर्कुलाफ़, तुम देखने में बहुत सुन्दर लगते हो; तुम्हारा चेहरा खूनी की तरह नहीं दिखाई देता।

"मेरी इस तरह की बात सुनकर उसने तख़्त पर एक कुर्सी ऊपर को खींच ली, और उस पर जमकर बैठ गया, जैसे वह अभियुक्त नहीं बल्कि अतिथि बनकर आया हो। उसने अपनी हथेलियों को अपने घुटनों पर दबाकर रखा, और एक अनोखे मीठे स्वर में बोलने लगा, जैसे वह नरकुल की बाँसुरी बजा रहा हो। शायद मैंने यह ठीक उपमा

नहीं दी, क्योंकि नरकुल की बाँसुरी की आवाज़ में कुछ नीरसता होती है।

"उसने कहा—'शायद आप यह सोचते होंगे कि यदि मैंने ख़ून किया है तो मैं एक निरा जानवर हूँ ? नहीं, मैं जानवर नहीं हूँ, और चूँकि आप मुझ में दिलचस्पी लेते हुए जान पड़ते हैं, इसलिये मैं आपको अपनी रामकहानी सुनाऊँगा।'

"यह कहकर वह मुझे अपनी कहानी सुनाने लगा। वह अत्यन्त शान्त भाव से सिलसिलेवार सुना रहा था और अपनी सफ़ाई देने की तनिक भी चेष्टा नहीं करता था, न करुणा उभाड़ने का ही प्रयत्न कर रहा था।"

जज बहुत धीरे-से अस्पष्ट शब्दों में बोल रहा था; उसके सूखे हुए ओठ, जिनपर मटमैले रङ्ग की काई लगी हुई थी, बड़ी कठिनाई से हिलते थे, और वह आँखें बन्द करके अपनी ज़बान से उन्हें तर करता जाता था। वह कहता चला गया—

"मैं स्वयं उन शब्दों को याद करके दुहराने की चेष्टा करूँगा। उसके शब्दों में एक विशेष महत्त्व था। वे ऐसे शब्द थे, जो मुझे चकित और विभ्रान्त कर रहे थे। उसकी वह करुणा-भरी दृष्टि भी मेरे हृदय को रौंद-सी रही थी। आप समझ रहे हैं ? वह दृष्टि कातर नहीं बल्कि करुणा से पूर्ण थी। उससे ऐसा भाव प्रकट होता था जैसे वह मुझसे करुणा की प्रार्थना करने के बजाय उलटे मुझपर तरस खा रही थी, हालाँकि उन दिनों मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा था।

"उसने पहली हत्या इस परिस्थिति में की थी—शरत्काल की एक रात वह बन्दरगाह से चीनी के कुछ बोरों को उठाकर अपनी गाड़ी में भर रहा था। सहसा उसने देखा कि एक व्यक्ति गाड़ी के

पीछे चल रहा है। वह व्यक्ति एक बोरे को चीरकर उसमें से चीनी निकाल कर अपनी जेबें उससे भरने लगा। मर्कुलाफ़ गाड़ी से नीचे उतरा और उसके कपाल पर एक ऐसा ज़बर्दस्त घूँसा जमाया कि वह आदमी नीचे गिर पड़ा।

"मर्कुलाफ़ ने मुझसे यह क़िस्सा बताते हुए कहा—'जब वह आदमी नीचे गिर गया तो मैंने फिर उसके एक लात जमाई, और इसके बाद फटे हुए बोरे को बाँधने लगा। वह आदमी मेरे पाँवों के नीचे पड़ा हुआ था; उसका चेहरा ऊपर की ओर मुड़ा हुआ था, और उसकी आँखें पूरी खुली हुई थीं और वह मुँह बाए था। उसका वह रूप देखकर मैं डर गया। मैं घुटने टेक कर बैठ गया और उसका सिर अपने दोनों घुटनों पर रखा; पर वह सिर एक स्थान पर स्थिर नहीं रह पाता था, और कभी इस ओर लुढ़कता था, कभी उस ओर और सीसे से भी भारी लग रहा था। उसकी आँखें मेरी ओर जैसे तिरछी निगाह से देख रही थीं और नाक से मेरे हाथों पर खून टपक रहा था। मैं उचकता हुआ खड़ा हुआ और चिल्ला उठा—हा भगवान! मैंने इसे जान से मारडाला है!

"इसके बाद मर्कुलाफ़ को पकड़ कर पुलिस स्टेशन में ले गए और वहाँ से वह जेल भेज दिया गया।

उसने कहा—'जेल में बन्द रहकर अपने आसपास के अपराधियों का जीवन देखते हुए मुझे ऐसा जान पड़ने लगा जैसे मैं कुहरे के पर्दे से सब चीजों को देखता होऊँ। मैं बड़ी घबराहट मालूम करने लगा; न ठीक से सो पाता था न खाने की इच्छा होती थी; केवल दिन-रात सोचा करता कि यह कैसे सम्भव हुआ? एक आदमी सड़क पर चल रहा था, मैंने उसपर हाथ चलाया—और—वह समाप्त हो

गया ! इसका अर्थ क्या हो सकता है ? आत्मा—वह कहाँ है ? वह कोई भेड़ या बछिया नहीं था—वह काम कर सकता था, सोच सकता था, और निश्चय ही ईश्वर पर विश्वास करता रहा होगा; इसके अलावा, उसकी प्रकृति भले ही मुझसे भिन्न रही हो, पर वह ठीक उसी तरह का जीव था जैसा कि मैं। और मैंने—आप विचार कीजिए—उसे इस तरह जान से मार डाला जैसे वह एक साधारण जानवर हो ! यदि बात इस तरह की है, तो एक दिन मेरी भी ऐसी ही गति हो सकती है—मुझे कोई आदमी एक घूँसा तानकर मारेगा और मुझमें जीवन का कोई चिह्न शेष नहीं रह जायगा ! इस प्रकार के विचार मुझे इस क़दर भयभीत करने लगे, साहब, कि अपने सिर के बालों के बढ़ने की आवाज़ तक मुझे सुनाई देने लगी।'

"जब मर्कुलाफ़ अपनी कहानी मुझे सुना रहा था तो वह सीधे मेरे मुख की ओर देख रहा था; पर यद्यपि उसकी कोमल आँखें गति-हीन थी, तथापि उसकी मटमैली पुतलियों में मुझे गहरे आतङ्क की झलक दिखाई दे रही थी। उसने अपने हाथों को एक दूसरे से मिला लिया था और अपने घुटनों के बीच स्थापित करके उन्हें बड़े ज़ोरों से दबा रहा था। उस आकस्मिक अपराध के लिये, जिसे उसने पहले से सोचकर, जानबूझकर नहीं किया था, उसे बहुत साधारण दण्ड दिया गया, और एक मठ में प्रायश्चित्त करने के उद्देश्य से भेज दिया गया।

"मर्कुलाफ़ कहता चला गया—'उस मठ में एक छोटे कद का बुड्ढा संन्यासी मेरी देख-रेख के लिये नियुक्त किया गया। उसे मुझे यह सिखाने का काम सौंपा गया कि जीवन किस प्रकार बिताना चाहिये। उसका स्वभाव बहुत शिष्ट और शान्त था। वह ईश्वर के सम्बन्ध में

बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से बातें करता था। मेरे लिये वह पिता के समान था और सब समय मुझे "बेटा! बेटा!" कहकर पुकारा करता था। उसकी बातें सुनकर कभी-कभी मेरे मन में बरबस यह प्रश्न उठने लगता—हे ईश्वर! मनुष्य इतना असहाय क्यों है? इसके बाद मैं संन्यासी से कहता—मेरे आदरणीय पिता, पाल! आप अपने को ही लीजिए; आप ईश्वर से प्रेम करते हैं और वह भी निश्चय ही आप से प्रेम करता होगा; यह होने पर भी यदि मैं आपको एक घूँसा तानकर मारूँ, तो आप एक मक्खी की तरह ख़तम हो जावें। तब आपकी सदय आत्मा कहाँ जावेगी? और इस बात का तत्त्व आपकी आत्मा में नहीं, बल्कि मेरी दुष्ट कल्पना में वर्तमान है; मैं किसी भी क्षण आपकी हत्या कर सकता हूँ। और सच बात यह है कि मेरी इस प्रकार की कल्पना कुछ हीन भी नहीं है, क्योंकि मैं आपको बड़े मीठे ढंग से, बड़ी कोमलता से मार सकता हूँ—आपको प्रार्थना करने का समय देकर तब आपकी हत्या कर सकता हूँ। इसका आपके पास क्या उत्तर है?—पर वह मेरी इस बात का कोई उत्तर न दे सका। वह केवल यही कहता रहा—शैतान तुम्हारे भीतर पशुत्व की भावना जगाता है; वह सब समय तुम्हें उसकाता रहता है। मैंने उसे समझाया कि कौन मुझे उसकाता है और कौन नहीं, इस बात से कुछ आता-जाता नहीं, मैं केवल यह जानना चाहता हूँ कि इस प्रकार उसकाये जाने से मैं किस प्रकार अपने को बचा सकता हूँ। मैंने उसे समझाया—मैं पशु नहीं हूँ, मुझ में पशु की कोई भावना वर्तमान नहीं है; बात केवल यह है कि मेरी आत्मा अपने लिये अत्यन्त आशङ्कित हो उठी है।

" 'उसने कहा—तुम दिन-रात प्रार्थना करते रहो, जब तक कि तुम बिलकुल थक न जाओ। मैंने ऐसा ही किया, और प्रार्थना करते-

करते मैं बहुत दुबला हो चला, और मेरे बाल भी पकने लगे, हालाँकि उस समय मेरी आयु केवल अट्ठाईस वर्ष की थी। पर प्रार्थना से मेरा भय तनिक भी दूर नहीं हुआ। प्रार्थना के समय भी मैं इस प्रकार सोचता रहता--ईश्वर! यह कैसी बात है? मैं किसी भी क्षण किसी भी आदमी की हत्या कर सकता हूँ, और कोई भी व्यक्ति जिस क्षण चाहे मेरी हत्या कर सकता है। मैं यदि सो रहा होऊँ तो कोई भी व्यक्ति एक छुरे से मेरा गला काट सकता है, या मेरे सिर पर एक ईंट या लट्ठ फेंक सकता है, या और किसी भारी चीज़ से चोट पहुँचा सकता है। आदमी को ख़तम कर डालने के बहुत से उपाय हैं!—इस प्रकार के विचार मुझे सोने नहीं देते थे, और भयभीत कर डालते थे। आरम्भ में मैं नये भरती हुए व्यक्तियों के साथ सोया करता था, और जब उनमें से कोई आदमी कुछ हिलता-डुलता तो मैं तत्काल उचककर उठ खड़ा होता और चिल्लाता--यह कौन खड़बड़ कर रहा है? चुपचाप लेटे रहो, खूँख़ार कुत्ते कहीं के!--प्रत्येक व्यक्ति मुझसे घबराता था और मैं प्रत्येक व्यक्ति से भयभीत रहता था। उन लोगों ने मेरी शिकायत की और मुझे अस्तबल में रहने के लिये भेज दिया गया। वहाँ मैं घोड़ों के बीच में शान्त भाव से रहने लगा--मैं जानता था कि पशुओं के आत्मा नहीं होती, इसलिये उनसे मुझे कोई भय नहीं था। पर फिर भी मैं केवल एक आँख बन्द करके सोता था।'

"जब मर्कुलाफ़ का प्रायश्चित्त समाप्त हो गया तो उसने गाड़ीवान की हैसियत से एक दूसरी नौकरी प्राप्त कर ली, और शहर के बाहर किसी बाग़ में एकान्त भाव से रहने लगा।

"उसने मुझसे कहा--'मैं स्वप्न की दुनिया में रहनेवाले आदमी

की तरह जीवन बिताता था। दूसरे गाड़ीवान मुझसे पूछा करते--वेसिली तुम इस तरह उदास क्यों रहते हो ? क्या तुम संन्यास धारण करने की तैयारी कर रहे हो ?--मैं क्यों संन्यास धारण करना चाहूँगा ?

मठों में भी लोग रहते हैं और उसके बाहर भी—और जहाँ कहीं भी आदमी रहते हों वहीं भय है। मैं लोगों को देखता और सोचता—ईश्वर तुम्हारी सहायता करे ! तुम्हारा जीवन अनिश्चित है और मुझसे अपनी रक्षा करने का कोई साधन तुम्हारे पास नहीं है, ठीक जिस तरह तुमसे अपनी रक्षा करने का कोई उपाय मेरे पास नहीं है !—ज़रा आप ही सोचें, जनाब, कि इस प्रकार का भार अपने हृदय पर लिए मेरे लिये जीना कैसा कठिन हो गया होगा !"

स्वियातुखिन ने एक आह भरी और काले रेशम की टोपी को अपनी गञ्जी खोपड़ी पर; जो एक पुरानी, सफ़ेद हड्डी की तरह दिखाई देती थी, सजाने लगा। इसके बाद वह बोला—

"मर्कुलाफ़ स्वयं अपनी उस बात पर मुस्कराया। और उस अप्रत्याशित मुसकान ने उसके सुन्दर, सुडौल चेहरे को इस क़दर विकृत रूप दिया कि तत्काल मेरे मन में यह विश्वास जम गया कि यह आदमी पूरा पिशाच है। बहुत सम्भव है, उसने उसी विचित्र मुसकान के साथ हत्याएँ की होंगी। मेरे मन में एक अनोखे भौतिक भय की-सी भावना जग उठी। वह अपने मुख पर कुछ खीझ का-सा भाव प्रकट करते हुए कहता चला गया—'इस प्रकार मैं एक मुर्गी की तरह अपने पेट में अण्डा लिए जीवन बिताने लगा। मैं जानता हूँ कि वह अण्डा सड़ा हुआ है, और किसी भी क्षण ऐसा हो सकता है कि मेरे भीतर का वह अण्डा फूट पड़ेगा। तब मेरी क्या दशा होगी ? मैं नहीं जानता, और न इस सम्बन्ध में कुछ अनुमान करने का साहस ही कर सकता हूँ।

पर इतना अनुमान मैं अवश्य कर सकता हूँ कि जो-कुछ भी होगा, बड़ा भयावना होगा।'

"मैंने मर्कुलाफ़ से पूछा कि कभी उसने आत्महत्या करने की भी चेष्टा की है या नहीं। मेरा यह प्रश्न सुनकर क्षण-भर के लिये वह चुप रहा; इसके बाद उसकी भौंहें डोलने लगी, और उसने उत्तर दिया—'मुझे याद नहीं आता—नहीं—मेरा ऐसा खयाल है कि मैंने कभी इस प्रकार की चेष्टा नहीं की।'

"इसके बाद वह विस्मित और प्रश्न-भरी दृष्टि से मेरी ओर देखता हुआ, सम्भवतः सच्चे हृदय से बोला—'यह कैसे सम्भव हुआ मैंने कभी आत्महत्या की बात नहीं सोची ? सचमुच यह बड़े आश्चर्य की बात है।'

"यह कहकर उसने अपने घुटने पर अपनी हथेली से आघात किया, और अदालत के एक कोने की ओर शून्यभाव से देखते हुए बोला—'हाँ, हाँ, ठीक है; आपको मालूम होना चाहिये कि मैं अपनी आत्मा को स्वतन्त्रता नहीं देना चाहता था। मैं दूसरे लोगों के सम्बन्ध में अपना कुतूहल और अपनी आत्मा की कायरता के कारण अत्यन्त पीड़ित रहता था। अपने सम्बन्ध में मैं भूल गया; पर मेरी आत्मा सब समय एक मात्र इस विचार में मग्न रहती थी—यदि मैं इस व्यक्ति की हत्या कर डालूँ तो उसका क्या परिणाम होगा ?'

"दो वर्ष बाद मर्कुलाफ़ ने मात्रेश्का नाम की एक माली की लड़की की हत्या की। उस हत्या का वर्णन मर्कुलाफ़ ने बड़े अस्पष्ट ढङ्ग से किया, जैसे वह स्वयं अपने उस दुष्कर्म के उद्देश्य से परिचित न हो। उसकी बातों से मैं यह अनुमान लगा पाया कि वह लड़की कुछ सिड़ी-सी थी। उसने कहा—'उसे एक विशेष प्रकार के "फिट" आया करते

थे, जो उसकी बुद्धि को लोप कर देते थे। ऐसे अवसरों पर वह बाग़ का काम छोड़कर मुँह बाए केवल मुस्कराती रहती जिससे ऐसा अनुभव होने लगता जैसे कोई अदृश्य व्यक्ति उसे अपने पास चले आने के लिये सङ्केत कर रहा है। उस समय स्पष्ट ही वह चारों ओर केवल शून्य के सिवा और कुछ न देखती, और पेड़ों, झाड़ियों और दीवारों से टकराती हुई आगे को बढ़े चलने की चेष्टा करती। एक दिन उसने इसी हालत में एक उलटाए हुए पाँचे पर पाँव रख दिया; फल यह हुआ कि उसके पाँव पर चोट आ गई और ख़ून का फ़व्वारा फूट पड़ा; पर वह फिर भी चलती ही रही--स्पष्ट ही उसे चोट के कारण कुछ भी दर्द महसूस नहीं हो रहा था और उसके चेहरे पर एक बल तक नहीं पड़ा था। वह बड़ी बदसूरत और मोटी थी, और अपने सिड़ीपन के कारण अपने चरित्र के सम्बन्ध में लापरवाह थी। वह बुरे काम के लिये किसानों को अपने पास बुलाती, और वे उसके सिड़ीपन का पूरा लाभ उठाते थे। उसने मुझे भी अपनी ओर आकर्षित करने की चेष्टा करके बहुत तङ्ग किया, पर मुझे बहुत सी दूसरी बातों पर सोच-विचार करने से इन सब बातों के लिये फ़ुर्सत नहीं थी। फिर भी उसके स्वभाव की एक विशेष बात ने मुझे प्रभावित किया—वह यह कि उस पर किसी भी बात का कोई असर नहीं होता था--चाहे वह किसी ख़न्दक में जा गिरती चाहे किसी ढालुवाँ छत पर से उसके पैर फ़िसल पड़ते, हर हालत में वह सही-सलामत निकल आती। और कोई दूसरा होता तो या तो उसके पाँव में मोच आ जाती या उसकी कोई हड्डी-पसली टूट जाती; पर उसे कुछ भी नहीं होता था। इसमें सन्देह नहीं कि उसका चमड़ा जगह-जगह खुरच जाता, पर उससे उसे चलने-फिरने में किसी प्रकार की असुविधा न होती। ऐसा मालूम होता था जैसे

उसके लिये संसार में कहीं किसी प्रकार का ख़तरा नहीं है। मैंने इतवार के रोज़ खुले-आम उसकी हत्या की। मैं बाग़ के फाटक के पास एक बेञ्च पर बैठा हुआ था, और वह घृणित रूप से मुझे प्रेमपूर्ण हाव-भाव जताने लगी--इसलिये मैंने एक लकड़ी उठाकर उसके सिर पर ऐसा मारा कि लड़खड़ाती हुई नीचे गिरी और फिर न हिली न डुली। मैंने ग़ौर से देखा—वह मर चुकी थी। मैं सिर पर हाथ रखकर उसके पास बैठ गया और मेरे मुँह से यह चीख़ निकल पड़ी--हे ईश्वर! मुझे हो क्या गया है? यह दुर्बलता, यह बेबसी क्यों?--'

"मकुंलाफ़ झटके के साथ बोल रहा था, जैसे सन्निपात की हालत में बड़बड़ा रहा हो। मनुष्यों की बेबसी पर काफ़ी देर तक वह लेकचर बघारता रहा, और उसकी आँखों में एक विषादपूर्ण भय का भाव निरन्तर झलक रहा था। धीरे-धीरे उसके वैरागी के समान रूखे और उदासीन चेहरे में एक घनी छाया घिर आई और वह अपने दाँतों के बीच से प्रायः फुफकारते हुए बोला--'ज़रा इस बात पर ग़ौर कीजिए, साहब, मैं इसी क्षण एक चोट से आपकी हत्या कर सकता हूँ! ज़रा सोचिए! कौन मुझे ऐसा करने से रोक सकता है? कौन ऐसी बात है जो इस काम में बाधा पहुँचा सकती है? कोई भी नहीं!—'

"उस लड़की की हत्या के लिये उसे तीन साल की क़ैद की सजा हुई। उसका कहना था कि उसे कड़ी सजा न मिलने का कारण उसके वकील की दक्षता है। उसने अपने उस वकील की निन्दा करते हुए कहा—'वह एक जवान छोकरा था, उसके सिर के बाल बिखरे हुए थे और वह बड़ा बक्काल था। वह ज्यूरी से बार-बार कहता था—इस आदमी के विरुद्ध एक शब्द भी कोई कैसे कह सकता है? एक भी गवाह उसके खिलाफ बोलने का साहस न कर सका। इसके अलावा,

यह बात सब लोग स्वीकार कर चुके हैं कि मृत स्त्री अधपगली और चरित्रहीन थी। ये वकील भी क्या ख़ूब होते हैं! यह केवल पागलपन और समय की बरबादी है। दुष्कर्म करने के पहले मैं अपने से अपनी सफ़ाई दे सकता हूँ, पर एक बार जहाँ अपराध कर लिया, फिर किसी की सहायता मैं नहीं चाहता। जब तक मैं स्थिर खड़ा हूँ तब तक आप मुझे पकड़ सकते हैं, पर जहाँ मैंने दौड़ना शुरू किया, आप फिर किसी भी हालत में मुझे नहीं पकड़ सकते! यदि मैं दौड़ने लगूँ तो मैं तब तक दौड़ता चला जाऊँगा जब तक मैं थकान के कारण गिर न पड़ूँ। पर जेलख़ाना!—यह केवल मूर्खता और निकम्मापन है।

" 'मैं जेल से जब लौटा, तो ऐसा अकचकाया हुआ था कि कोई भी बात मेरी समझ में नहीं आती थी। लोग इधर उधर पैदल चलते थे, गाड़ियों में जाते थे, काम करते थे, मकान बनाते थे, पर मैं सब समय केवल यही सोचता रहता—मैं किसी भी समय किसी भी आदमी की हत्या कर सकता हूँ, और कोई भी आदमी मेरी हत्या कर सकता है! यह कैसी भयङ्कर बात है!—और मुझे ऐसा जान पड़ता था कि मेरी बाँहें प्रतिपल बढ़ती चली जाती हैं, और वे मेरी अपनी बाँहें नहीं बल्कि किसी ग़ैर की हो गई हैं। मैंने शराब पीना शुरू किया, पर अधिक समय तक पी न सका; क्योंकि उसे पीने से मेरा जी मचलाने लगता था। जब-कभी मैं थोड़ी-सी अधिक पी लेता, तो मैं रोने लगता, और एक कोने में छिपकर रोते हुए कहता—मैं एक मनुष्य नहीं बल्कि मनहूस हूँ, और जीवन मेरे लिये नहीं है।—मैं शराब पीने पर नशे में नहीं आता था पर जब न पीता था तब मुझे पियक्कड़ों का-सा नशा मालूम होता था। मैं प्रत्येक व्यक्ति पर पागल कुत्ते की तरह भूँकने लगा और लोगों को डराकर अपने पास से भगा देता। और स्वयं मैं लोगों

से भयभीत रहता। सब समय मैं केवल सोचता रहता--या मैं इस आदमी की हत्या कर डालूँगा या वह मेरी हत्या करेगा।—मन की इस दशा में मैं खिड़की के शीशे पर छटपटानेवाली मक्खी की तरह चलता रहा—शीशा किसी भी समय टूट सकता था, और उसके टूटने पर मैं अवश्य ही गिर पड़ता; कहाँ गिरता, ईश्वर ही जाने!

" 'अपने मालिक, आइवान किरिलिच, की हत्या भी मैंने उसी कारण से की--कुतूहल। वह बड़ा प्रसन्न चित्त और दयालु था, और था आश्चर्यजनक रूप से साहसी। जब उसके किसी पड़ोसी के घर आग लगी थी, तो उसने एक अमर वीर की तरह साहस का काम किया था। वह सीधे आग की लपटों के बीच से होकर प्रायः रेंगते हुए भीतर चला गया और बूढ़ी दाई को उठाकर बाहर ले आया; इसके बाद फिर एक बार वह उसी तरह जाकर दाई का बक्स उठा लाया, क्योंकि बुढ़िया अपने बक्स के लिये बहुत रो रही थी। आइवान किरिलिच बड़ा भला आदमी था, ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति दे! यह सच है कि मैंने उसे जान से मार डालने के पहले पीड़ित किया। दूसरे व्यक्तियों को मैंने तत्काल मार डाला, पर आइवान को मैंने सताकर मारा--मैं यह देखना चाहता था कि वह भयभीत होता है या नहीं। पर चूँकि उसका शरीर बहुत क्षीण था, इसलिये उसका दम घुटने में बहुत देर न लगी। उसकी चीख़ सुनकर लोग दौड़े चले आए, और मुझे पीटकर मेरे हाथ-पाँव बाँधना चाहते थे, पर मैंने उन लोगों से कहा—मूर्खो! मेरे हाथ बाँधकर क्या करोगे, मेरी आत्मा को बाँधो!--'

"मर्कुलाफ़ जब अपना क़िस्सा समाप्त कर चुका, तो उसने अपने मुँह का पसीना पोंछा, और प्रायः हाँफते हुए बोला--'जज साहब, मुझे

ख़ूब कड़ी सज़ा दीजिए, मौत की सज़ा, वर्ना सब बेकार है। मैं लोगों के बीच में रह नहीं सकता—जेल में भी नहीं। मैंने अपनी आत्मा के विरुद्ध अपराध किया है। अब मैं उससे ऊब उठा हूँ, और मुझे भय है कि कहीं फिर मैं उसकी परीक्षा लेना शुरू न कर दूँ, जिसका फल यह होगा कि कुछ और व्यक्तियों को उसका शिकार बनना पड़ेगा। मुझे हमेशा के लिये अलग कर दीजिए, साहब, अवश्य कर दीजिए...!"

यहाँ पर जज ने अपनी मृतप्राय आँखें मींच लीं, और फिर कहा—"उसने स्वयं अपने हाथ से अपने को समाप्त कर डाला। काल कोठरी में जिस जञ्जीर से उसके हाथ-पाँव बँधे थे उससे उसने अपना गला घोंट डाला—शैतान जाने, किस तरह! मैंने अपनी आँखों से नहीं देखा, पर जेलर ने मुझे बताया। जेलर ने यह भी कहा कि इस प्रकार के अत्यन्त कष्टकर और कठिन उपाय से आत्महत्या करने के लिये बड़ी प्रबल इच्छाशक्ति की आवश्यकता है।"

इसके बाद अपनी दोनों आँखें बन्द करके स्वियातुखिन बड़बड़ाते हुए बोला—"सम्भवतः मैंने मर्कुलाफ़ को आत्महत्या के लिये प्रेरित किया था......हाँ......देखा मित्र, एक साधारण रूसी किसान होने पर भी उसके रङ्ग-ढङ्ग......हाँ......इस विषय पर तुम्हारी क्या राय है?"

"आत्मा का भोजन"

जब मैं ए. ए. जे. से मिलने गया तो मालूम हुआ कि वह मकान पर नहीं है। मकान की मालकिन ने कहा—"वह बड़े तेज़ क़दम रखता हुआ कहीं चला गया है।"

मकान की मालकिन एक प्रिय-दर्शन बुढ़िया थी। वह चश्मा लगाए थी और उसके बाएँ गाल पर एक बालों से युक्त तिल था। उसने मुझसे कुछ देर बैठकर आराम करने का अनुरोध किया, और फिर मन्द-मन्द मुस्कराती हुई बोली––

"मुझे ऐसा लगता है कि तुम सब लोग, जो आजकल के नौजवान हो, ऐसी तेज़ चाल से अपना जीवन बिताते हो जैसे किसी ने तुम्हें तोप से गोले की तरह छोड़ दिया हो। पिछले ज़माने के लोग बड़ी धीमी रफ़्तार से जीवन बिताते थे। उनके चलने का ढङ्ग भी कुछ दूसरा ही था। इनके जूते इतनी जल्दी घिसते नहीं थे––इसलिये नहीं कि चमड़ा अधिक मज़बूत होता था, बल्कि इसलिये कि वे बड़ी सावधानी से, सँभल-सँभल कर चलते थे।

"उदाहरण के लिये, तुम्हारे मित्र जे. के यहाँ आने के पहले इस कमरे में एक हस्तलिपि-कला का शिक्षक रहता था, जिसका नाम एलेक्से एलेक्सेविच कुज़मिन था। वह आश्चर्यजनक शान्त प्रकृति का आदमी था। वह कितना शान्त रहता था, इस बात की कल्पना ही आश्चर्य में डाल देती है। वह सुबह उठकर अपने जूते साफ़ करता, अपने कपड़ों पर ब्रश फेरता, इसके बाद नहा-धोकर कपड़े पहनता, और ये सब काम ऐसे शान्त भाव से करता कि ऐसा मालूम होता जैसे उसकी कल्पना में सारे शहर के निवासी सोए हुए हों, और उसे यह भय हो कि कहीं कोई जग न जाय। वह प्रतिदिन प्रार्थना करता था, और फिर उसके बाद एक ग्लास चाय पीता, और चाय के साथ एक अण्डा और एक टुकड़ा रोटी का खाता था। इसके बाद युनिवर्सिटी जाता। युनिवर्सिटी से लौटकर खाना खाता, कुछ देर आराम करता और तब या तो चित्र खींचने बैठ जाता या चित्रों के लिये 'फ्रेम'

तैयार करता। यहाँ जो ये चित्र टँगे हैं वे सब उसीके बनाए हुए हैं।"

मैंने देखा कि उस छोटे-से कमरे की दीवारें पेन्सिल से खींचे हुए चित्रों से सजी हुई हैं, और उनपर घर के बने हुए 'फ्रेम' चढ़ाए गए हैं। प्रायः सभी चित्रों में वेद-मजनूँ और भोजपत्र के पेड़ अङ्कित थे--कुछ में क़ब्रों के ऊपर, कुछ में तलैयों के ऊपर और कुछ में पुरानी पनचक्कियों के अगल-बगल में उगे हुए दिखाए गए थे। केवल एक छोटा-सा चित्र कुछ भिन्न था। उसमें बड़ी सावधानी से एक तङ्ग रास्ता अङ्कित किया गया था, जो एक पहाड़ी के ऊपर तक जाता था; सारा रास्ता किसी एक पेड़ की विशाल जड़ से, जो एक दीर्घ सर्प की तरह दिखाई देती थी, घिरा हुआ था, और उस पेड़ की चोटी टूटी-हुई थी, और उसकी कुछ सूखी टहनियाँ दिखाई देती थीं।

उन चित्रों पर एक स्निग्ध दृष्टि फेरते हुए बूढ़ी मकान-मालकिन स्नेहपूर्वक कहने लगी—"शाम को जब अन्धेरा होने लगता तब वह बाहर निकलता, और जिस दिन बदली छाई रहती या वर्षा होती उस दिन वह ख़ास तौर पर बाहर निकलना पसन्द करता। इसका फल यह हुआ कि एक दिन उसे सर्दी ने पकड़ लिया। मैं उससे पूछा करती—'तुम ऐसे मौसम में बाहर निकलना क्यों पसन्द करते हो?' वह उत्तर देता--'ऐसे मौसम में सड़क पर बहुत कम लोग चलते-फिरते हैं। मैं संकोची प्रकृति का आदमी हूँ और लोगों से मिलना-जुलना विशेष पसन्द नहीं करता। जब मैं लोगों से मिलता हूँ तो मेरे मन में उनके सम्बन्ध में बुरी धारणा उत्पन्न होने लगती है, और मैं इस तरह की भावना से बचना चाहता हूँ।'

"वह अपनी टोपी और लबादा पहन कर एक छाता हाथ में लिए हुए चुपचाप एक किनारे से होकर चलता। जब कोई व्यक्ति उस

तरफ से होता हुआ आता, तो वह चुपचाप अलग हट जाता और उसके लिये रास्ता छोड़ देता। वह बड़े हलके क़दमों से चलता, जैसे मिट्टी पर पाँव ही न रखता हो। वह बड़ा करुण व्यक्ति था। दुबला-पतला था, बाल उसके उज्ज्वल रङ्ग के थे, नाक उसकी सिरे पर कुछ मुड़ी हुई-सी थी, दाढ़ी-मूँछ सफ़ाचट रहती थी, और चालीस वर्ष के क़रीब आयु होने पर भी वह जवान दिखाई देता था। जब उसे खाँसी आती तो वह मुँहपर रूमाल डाल लेता, ताकि खाँसने का शब्द अधिक न सुनाई पड़े। मैं कभी-कभी उसकी ओर बड़ी प्रशंसा की दृष्टि से देखती और सोचती—काश कि संसार के सभी पुरुष इसी तरह होते!

"एक दिन मैंने उससे पूछा—'इस तरह अकेले जीवन बिताने से तुम्हारा जी क्या कभी नहीं उकताता?' उसने उत्तर दिया—'नहीं, क़त्तई नहीं। मैं अपनी आत्मा के सङ्ग में रहता हूँ, और आत्मा यह नहीं जानती कि ऊब क्या बला है। जी ऊबना एक शारीरिक पीड़ा है।' वह सदा इसी ढङ्ग से बात करता था—बड़े गम्भीर भाव से, एक सयाने आदमी की तरह?

"मैंने पूछा—'क्या यह सम्भव है कि स्त्रियों से तुम्हें कोई दिलचस्पी नहीं है, और गृहस्थ-जीवन के सम्बन्ध में तुम कभी कुछ नहीं सोचते?' उसने उत्तर दिया—'नहीं, इस ओर मेरी प्रकृति नहीं है। गृहस्थ-जीवन से आदमी की चिन्ताएँ बहुत बढ़ जाती हैं; इसके अतिरिक्त मेरा स्वास्थ्य भी उसके योग्य नहीं है।'

"प्रायः तीन वर्ष तक मेरा किरायेदार रहा—एक छोटे से निरीह चूहे की तरह—इसके बाद अपना स्वास्थ्य सुधारने के उद्देश्य से उसने घोड़ी के दूध का कल्प करने का विचार किया, और यह मकान छोड़कर चला गया। कुछ समय बाद मैंने सुना उसकी मृत्यु हो गई। मैं

बहुत दिनों तक इस प्रतीक्षा में रही कि कोई व्यक्ति उसकी सम्पत्ति के हक़दार की हैसियत से आकर उसकी चीजें इस मकान से उठा ले जाय। पर शायद उसके न तो कोई रिश्तेदार थे न मित्र, क्योंकि कोई व्यक्ति मेरे पास नहीं आया, और उसकी चीजें अभी तक यहीं पड़ी हुई हैं—एक छोटा-सा जांघिया, ये तसवीरें और एक कापी, जिसमें उसके हाथ के लिखे नोट हैं।"

मैंने बुढ़िया से वह कापी दिखाने की प्रार्थना की। वह एक दराज़वाली मेज़ के भीतर से एक मोटी कापी निकाल लाई, जिसकी जिल्द काले रङ्ग के 'केलिको' से बँधी थीं। जिल्द के उपर एक टुकड़ा ग़त्ते का चिपकाया हुआ था जिसपर गोथिक अक्षरों में लिखा था—

आत्मा का भोजन

स्मृति के लिये लिखित नोट

ए. ए. के.—मेरा

ईस्वी सन्

१८८९, ३ जनवरी

प्रथम पृष्ठ पर एक अलङ्कार चित्र क़लम से अङ्कित किया गया था। चित्र इस प्रकार था—बलूत तथा 'मेयल' वृक्ष के पत्तियों से बने हुए ढाँचे के भीतर एक ठूँठ, जिस पर एक सर्प कुण्डली के आकार में घेरा बाँधे था; उस सर्प का सिर हवा में था और उसके खुले मुँह के भीतर विष-भरे दन्त दिखाई देते थे। उसी पन्ने पर प्रारम्भिक प्रवचन के रूप में बड़ी सुन्दर हस्तलिपि में गोल अक्षरों में लिखा हुआ था—

"शीघ्र ही यह भेद खुला कि उस काण्ड में बहुत-से ईसाई शरीक थे,—जब कभी किसी .जुर्म की जाँच की जाती है, अक्सर ऐसा ही पाया जाता है।"

—सम्राट् त्राजान को प्लाइनियुस के पत्र से]

इसके बाद अकस्मात् एक दूसरी ही क़िस्म की हस्तलिपि पर नज़र पड़ती थी, जिसके अक्षर कुछ बड़े थे और थे सजे-मँजे और छल्लेदार। उन छल्लेदार अक्षरों में लिखा था—

मैं कोरिन्थियन एपोलो की तुलना में बहुत अधिक चतुर हूँ, इसके अलावा वह पियक्कड़ था।*

प्रायः प्रत्येक पन्ने पर किसी-न-किसी प्रकार चित्र अङ्कित था, जिनमें ज़्यादातर एक नकटी स्त्री का चेहरा रहता था। कापी में नोट अधिक नहीं थे, ज़्यादातर कुछ पंक्तियों में ही प्रत्येक नोट समाप्त हो जाता था। पर यह बात ध्यान देने योग्य थी कि प्रत्येक नोट बड़े सुन्दर और सजे हुए अक्षरों में सावधानी से लिखा गया था। कहीं एक छोटा-सा भी धब्बा नहीं पाया जाता था, न किसी प्रकार की ग़लती ही नज़र आती थी। सारी चीज़ में एक प्रकार की सम्पूर्णता का भाव पाया जाता था, जिससे यह स्पष्ट हो जाता था कि मज़मून पहले किसी दूसरे कागज़ पर लिखकर तैयार किए जाने के बाद उस कापी पर उतारा गया है।

उस कापी में लिखी गई बातों के सम्बन्ध में दिलचस्पी बढ़ती चली जाती थी। मैंने उसे अपने पास रख लिया और उसे लेकर घर चला गया। उस काली कापी में लिखी गई कुछ बातें इस प्रकार हैं—

तथाकथित कला प्रधान रूप से भिन्न-भिन्न प्रकार के जुर्मों और दुष्कर्मों के निरूपण और वर्णन से अपना खुराक जुटाती है, और मैंने इस बात पर ग़ौर किया है कि दुष्कर्म जितना ही अधिक हीन होता है उसके वर्णन से सम्बन्धित पुस्तक भी उतनी ही

*एक रूसी लेखक का छद्मनाम।

अधिक दिलचस्पी के साथ पढ़ी जाती है, और उस दुष्कर्म की प्रशंसा भी उसी परिमाण में होती है। सब बातों पर ध्यान देने के बाद यह कहा जा सकता है कि कला में दिलचस्पी लेना दुष्कर्म की प्रवृति में दिलचस्पी लेने के समान है। इस बात से स्पष्ट है कि नौजवानों पर कला का अस्वास्थ्य कर प्रभाव पड़ना अनिवार्य है।

* * * *

'कार्प' जाति की मछली को बनाते समय उसमें गाजर ठूँसना चाहिये, पर कोई इस बात पर ध्यान नहीं देता।

* * * *

गालिख़ का राजकुमार व्लादीमीर हङ्गरी के राजा की सेवा में चार वर्ष तक नियुक्त रहा। इसके बाद गालिख़ वापस आकर उसने अपना समय गिर्जों के निर्माण में बिताया।

* * * *

प्रत्येक प्रकार के दुष्कर्म के लिये एक अन्दरूनी दक्षता की आवश्यकता होती है—विशेष करके नरहत्या के लिये।

* * * *

एप. आफ कोर.* ने कुछ वीभत्स पंक्तियों में मुझ पर परिहास-पूर्ण छींटे कसे हैं। कुछ भी हो मैं उसके विद्वेषात्मक भाव के प्रति पूर्णतः उदासीन होकर उन पंक्तियों को नीचे उद्धृत करता हूँ—

आत्मा को अधिक लचीला होना चाहिये;
अर्थात्, अधिक नमनीय, एक औजार की तरह;

---

*सम्भवतः कोरिन्थियन एपोलो से आशय है जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है। अनुवादक—

प्रत्येक व्यक्ति को आध्यात्मिक कसरत करना चाहिये; अर्थात्, स्पष्ट सरल शब्दों में चोंचलेबाजी का मज़ा लेना चाहिये।

* * * *

सफल, अर्थात् अदण्डित, हत्या वह हो सकती है जो अप्रत्याशित रूप से की जाय।

इस प्रकार के अत्यन्त विचित्र विचार उस शान्त, सौम्य व्यक्ति द्वारा विभिन्न प्रकार की हस्तलिपियों में लिखे गए थे, जिनसे उसके लिपि-कौशल का परिचय मिलता था। पर हत्या-सम्बन्धी जितनी भी बातें उसने उस कापी में लिखी थीं वे ठीक उसी प्रकार के सुन्दर, सुडौल, गोल अक्षरों में लिखी गई थीं, जिनमें सम्राट् त्राजन के नाम प्लाइनी के पत्र का उद्धरण लिखा गया था।

सुन्दर छल्लेदार अक्षरों में उसने लिखा था--

सोच-विचार करना प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति का कर्तव्य है।

आलङ्कारिक, स्लेवानिक अक्षरों में लिखा था—

मैं कभी अपमानों को नहीं भुलाना चाहूँगा।

और सुडौल, गोल अक्षरों में उसने लिखा था—

अप्रत्याशित रूप से हत्या करने का आशय यह नहीं है कि उद्दिष्ट व्यक्ति के जीवन का अध्ययन पहले से बड़ी सावधानी के साथ न किया जाय। विशेष रूप से महत्वपूर्ण बातें ये हैं—उसके घूमने-फिरने के स्थान और समय; उद्दिष्ट व्यक्ति किन-किन समयों में लेकचर देकर लौटता है; रात में वह ठीक किस समय क्लब से लौटता है।

दो पेज बोल्गा नदी में 'बोटिङ्ग पार्टी' के नीरस वर्णन में खर्च किए गए थे। इसके बाद ढालुवाँ अक्षरों में लिखा गया था--

पाल. पेट्र. की यह गन्दी आदत है कि वह अपने घुटने के निचले हिस्से को अपनी उँगली से खुजाती रहती है। एक टाँग को दूसरी टाँग पर रखकर बैठना पसन्द करती है, इसीसे घुटने के नीचे खुजली मालूम होती है। इस प्रकार बैठने से रक्त का प्रवाह रुक जाता है। उसका मूर्ख साथी इस बात पर ग़ौर नहीं करता। वह बिलकुल लण्ठ है। और उसकी सङ्गिनी को बार-बार यह कहने की बुरी आदत पड़ी हुई है—'नहीं तो! सचमुच?"—उसके ओठों पर इस प्रकार की बात बड़ी व्यङ्गपूर्ण लगती है।

पोलीन—अर्थात् पेलेजिया, पेलेजिया—यह एक गँवारू नाम लगता है।

इसके बाद फिर गोल अक्षरों में—

शहर छोड़कर अप्रत्याशित रूप से वापस आने का ढङ्ग—एक गाड़ी पकड़ ली जाय—"गाड़ी पकड़ ली जाय" ऐसा कहना मूर्खतापूर्ण है—कहना चाहिये कि "एक गाड़ी किराये पर ली जाय"—इसके बाद घर की ओर लौटते हुए रास्ते में अकस्मात् पेट में दर्द का बहाना बता कर गाड़ी पर से बाहर कूद पड़ना चाहिये, और फिर नियत स्थान की ओर लपक कर निर्दिष्ट व्यक्ति की हत्या करके फिर गाड़ी में बैठकर वापस जाना चाहिये!

एक स्थान पर एक स्त्री और एक छोटे पाँववाले कदाकार पुरुष का चित्र था। उस व्यक्ति का चेहरा छोटे आकार का था और उसकी आँखो के स्थान पर प्रश्न के चिह्न बने हुए थे। उसकी एक घनी दाढ़ी भी उभरी हुई दिखाई गई थी।

इसके बाद 'आलङ्कारिक अक्षरों में लिखा हुआ था—

वह उस बुढ़िया डायन, निस्सोव्सकी नाम की कवयित्री, के

यहाँ हाजिरी बजाने लगा। उस डायन के यहाँ सभी स्थानीय क्रान्तिकारी इकट्ठा होते हैं।

और फिर गोल अक्षरों में—

कार्य की आकस्मिकता सफलता की 'गारन्टी' है। एक बुड्ढे गाड़ीवान की,—हो सके तो क्षीण दृष्टिवाले की—गाड़ी किराये पर कर ली जाय। उसके बाद दोनों हाथों से पेट दाबते हुए यह भाव जताया जाय कि पेट में बहुत दर्द है, और तब अकस्मात् गाड़ी पर से कूद पड़े। जिस गली पर वह विशेष व्यक्ति हो वहाँ जाकर सीधे उसके पास पहुँचा जाय, साथ ही यह भाव जताया जाय जैसे उसे पहचाना ही नहीं। इससे वह अकचका उठेगा। उससे कुछ आगे बढ़कर फिर सहसा लौटा जाय और ठीक स्थान पर चोट किया जाय। (यहाँ पर कापी में किसी लैटिन शब्द का संक्षिप्त रूप उल्लिखित है।) इसके बाद शीघ्र गति से गाड़ीवाले के पास वापस चले जाना चाहिये, और अपने वेस्टकोट का बटन लगाते हुए उसके साथ एक गन्दा मज़ाक करना चाहिये। घर पहुँचते ही पेट के दर्द के लिये क्लोरोडीन मँगाना होगा। यदि भण्डाफोड़ हो जाय तो कौतूहल का भाव जताना चाहिये और चिन्ता का लेश भी पास में नहीं फटकने देना चाहिये। मृतक के सत्कार के अवसर पर सहायता देनी चाहिये।

इस विषय पर इसके बाद फिर कोई नोट नहीं था। अन्तिम नोट के बाद एक कब्र का चित्र अङ्कित था, जिसमें 'क्रास' का कोई चिह्न वर्तमान नहीं था; उस क़ब्र के ऊपर एक ठूँठ दिखाया गया था; और ऊपर आकाश में चन्द्रमा के स्थान पर एक स्त्री का डबडबाई हुई, करुण आँखों से युक्त चेहरा अङ्कित किया गया था।

इसके बाद चार नोट विभिन्न विषयों पर थे, जिनमें से तीन इस प्रकार थे—

आज सूर्यास्त के समय एक चिड़िया ने बाग़ में आश्चर्यजनक रूप से गाना गाया। उसने इस ढङ्ग से गाया जैसे वह अन्तिम बार गा रही हो, और जानती हो कि फिर उसे कभी नहीं गाना है।

किसी व्यक्ति से मिलने पर सब समय ख़तरा रहता हो ऐसी बात नहीं है; फिर भी अपने मुलाक़ाती व्यक्तियों के चुनाव के सम्बन्ध में विशेष सावधान रहना चाहिये। मैं लाल बालवाले व्यक्तियों से इस जीवन में अब कभी हेल-मेल नहीं रखूँगा।

* * * *

दाँत का दर्द क्या चीज़ है यह केवल वहीं व्यक्ति जान सकता है जिसे कभी उसे भुगतना पड़ा हो, और वह भी तब जिस समय दाँत दर्द कर रहा हो। जब दाँत का दर्द दूर हो जाता है, तो लोग भूल जाते हैं कि वह कैसा कष्टप्रद होता है। यदि प्रति मास एक बार लगातार कुछ घण्टों तक संसार के सब आदमियों को एक ही समय दाँत का दर्द हुआ करे, तो बड़ा मज़ा आ जाय। तभी लोग एक-दूसरे की वेदना को समझने की शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

इस प्रकार उस शान्त-प्रकृति हस्तलिपि-कला-कुशल शिक्षक की डायरी समाप्त होती है, जिसका नाम उसने 'आत्मा का भोजन' रखा है। ऐसा जान पड़ता है कि उसने इस डायरी को अपने पास नौ वर्ष और चार मास तक रखा।

क्षयरोगी की प्रेमिका

सेनेटोरियम में क्षयरोग से पीड़ित आठ व्यक्ति अपना इलाज करा रहे थे। सब प्रकार के रोगियों में क्षयरोगी सबसे अधिक अस्थिर-प्रकृति और चञ्चल-चित्त होते हैं। उनका टेम्परेचर विन्दुमात्र बढ़ा नहीं कि वे भय, खीझ और झुँझलाहट के कारण प्रायः उत्तरदायित्वशून्य बन जाते हैं।

क्षयरोग का कीटाणु एक विचित्र व्यङ्ग और विडम्बनापूर्ण शक्ति रखता है—जब कि वह किसी मनुष्य को मृत्यु की ओर ढकेलता जाता है, ठीक उसी समय उसके मन में जीवन के प्रति प्रबल तृष्णा का भाव भी जगाता रहता है। इस प्रकार का मनोभाव क्षयरोगी की प्रबल कामुकता और स्वस्थ होने के सम्बन्ध में उसके चरम विश्वास से प्रकट होता है। डाक्टर लोग जिस क्षयरोगी को बिलकुल लाइलाज समझते हैं उसमें भी इस प्रकार की आशा और विश्वास का भाव पाया जाता है। डा० स्ट्राम्पेल को इस प्रकार की मनोवृत्ति के लिये 'क्षयरोगी की आशा'—यह नाम दिया है।

क्रीमिया के एक बोर्डिङ्ग हाउस में (अर्थात् ऐसे सेनेटोरियम में जहाँ डाक्टरी इलाज के अतिरिक्त रहने और खाने-पीने का भी प्रबन्ध था) जो पूर्वोक्त आठ रोगी रहते थे, उनकी परिचर्या डोरा नाम की एक नर्स बड़े अच्छे ढङ्ग से करती थी। वह इसके पहले कहाँ थी और क्या करती थी, इसका ठीक-ठीक पता किसी को भी नहीं था। कभी वह कहती कि वह ईस्थोनिया की रहनेवाली है, और कभी कहती कि

करेलिया उसका जन्मस्थान है। पर उसके बोलने के ढङ्ग से यह प्रकट होता था कि वह टारीड नामक स्थान से आई होगी। कभी उसकी बोली में तातारी उच्चारण का आभास पाया जाता और कभी आर्मीनियन। वह लम्बे-चौड़े क़द की और मोटी थी, पर उसके चलने-फिरने और काम करने के ढङ्ग से पता चलता कि उसमें स्फूर्ति और दक्षता की कमी नहीं है। उसके चेहरे से घोड़े की सी सरलता और सहृदयता का भाव टपकता था; उसके लाल ओठों पर एक प्रकार का सुमधुर, स्निग्ध हास अङ्कित रहता था, और उसकी बड़ी-बड़ी आँखें, जिनका बैजनी रङ्ग बड़ा विचित्र-सा लगता था, उस मुस्कान की स्निग्धता से भरी हुई थीं। जब वह किसी चिन्ता में रहती तो उसकी आँखों में घनी छाया घिर आती और उनकी झलक सीसे के रङ्ग की तरह फीकी पड़ जाती। वह अशिक्षित और मूर्ख थी; उसकी मूर्खता उस समय विशेष रूप से प्रकट होती जब वह चतुर बनते की चेष्टा करती। यही कारण था कि रोगियों ने उसका नाम 'डोरा' के बदले 'ड्यूरा' रख दिया था, जिसका अर्थ रूसी भाषा में 'लण्ठ' होता है। पर वह इस बात से तनिक भी नाराज़ नहीं होती थी, और मुस्कराती जाती थी। रोगियों के प्रति वह ठीक उसी प्रकार सहनशील थी, जिस प्रकार एक माँ अपने बच्चों के प्रति होती है। और जब कोई पुरुष रोगी कामवश होकर अपने जीर्ण, जर्जर और साथ ही कमजोरी के कारण नमी से चिपचिपे पञ्जे को उसपर गड़ाने की चेष्टा करता, तो वह अपने बड़े-बड़े पञ्जों से उस अभागे मुमूर्षु का हाथ छुड़ाते हुए कहती---"ऐसा मत करो, इससे तुम्हारे स्वास्थ्य को हानि पहुँचेगी।"

कई व्यक्ति निरन्तर उसके प्रति अपना प्रेम जताते रहते थे, कुछ दुकानदार, ठेकेदार और एक बार एक हट्टा-कट्टा विधुर मछुवा भी,

उसके पीछे पागल रह चुके थे। लोग उसके रूखे सौन्दर्य, शारीरिक शक्ति, अथक परिश्रम और मुक्त स्वभाव के कारण आकर्षित होते थे। प्रत्येक व्यक्ति उस शान्त और नम्र स्वभाव की युवती को अपनी जीवन-सङ्गिनी बनाने के लिये उत्सुक रहता था। पर पुरुषों के प्रति उसका रूख एक ऐसे स्वाधीन और धनी व्यक्ति की तरह रहता था जो अच्छी तरह जानता है कि कब और कैसे अपनी पूँजी का सदुपयोग किया जा सकता है। वह विवाह के प्रस्तावों को उसी अबोधगम्य किन्तु स्निग्ध मुस्कान से अस्वीकृत कर देती थी, जिससे वह रोगियों की कभी समाप्त न होनेवाली बेतुकी बातें सुनती रहती थी और उनके ढीठ स्नेह स्पर्शों से अपने को बचाती जाती थी।

वह जाड़े के मौसम में गरमी से बेचैन रहती थी, जब कि पहाड़ी की चोटी पर स्थित उस छोटी सी आरोग्यशाला को एक घना कुहरा चारों ओर से छाए रहता, और सब रोगी अपने-अपने शरीर को गरम कपड़ों से खूब अच्छी तरह से ढककर मौसम के सम्बन्ध में शिकायत करते रहते थे। रात में सब को सुलाने के बाद डोरा एक काले रङ्ग के रूमाल से अपना सिर-ढक लेती, और बाहर छज्जे पर जाकर ठीक मेरी खिड़की के नीचे घुटने टेककर आकाश की ओर देखती, और आह भरकर प्रार्थना करती—"हे ईश्वर की पवित्र माता! मेरे प्रभु ईसा! ईश्वर के नम्र सेवक सेन्ट निकोलस!......"

डोरा में कवित्वमय भाव का तनिक भी आभास मुझे नहीं मिलता था। फूलों की वह अत्यन्त अवहेलना किया करती थी। उसकी यह राय थी कि कमरे में फूल सजाकर रखने से केवल कूड़ा फैलता है। एक बार रात के समय किसी पुरोहित की एक स्त्री, जो क्षयरोग से पीड़ित होकर मौत का इन्तज़ार कर रही थी, आकाश में तारों की

शोभा देखकर पुलकित हो उठी और कवित्वपूर्ण उद्‌गार प्रकट करने लगी। डोरा ने उसके उत्साह को तत्काल ठण्ढा करते हुए कहा—"आकाश एक आयलेट की तरह है।"

एक दिन नवाँ रोगी उस आरोग्यशाला में आ पहुँचा। वह बड़ी चेष्टा के बाद, हाँफते हुए, छज्जे को जानेवाली सीढ़ियों पर चढ़कर किसी तरह ऊपर पहुँचा और जँगले की चोटी के सहारे खड़ा होकर डोरा को लक्ष्य करके बोला—"देखती हो, मैं कैसे मजे का आदमी हूँ!"

यह बात रोगी ने खीझ और परिहास से मिश्रित स्वर में कही थी। इसके बाद मन्द-मन्द मुस्कराता हुआ वह डोरा के स्वस्थ शरीर को, विशेष करके उसके उभरे हुए वक्षस्थल को, बड़े गौर से देखने लगा, और फिर बोला—"वाह, तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा सुन्दर है! तुम मेरे स्वास्थ्य के सुधरने में सहायता करोगी न? क्यों?"

"क्यों नहीं! अवश्य!"—डोरा ने अपने आर्मीनियन उच्चारण के साथ कहा।

इस नवागत रोगी के चेहरे की बनावट ठीक उल्लू की तरह जान पड़ती थी। उसकी गोल आँखें बिल्ली की तरह कञ्जी थीं, नाक सिरे पर कुछ मुड़ी हुई थी और मूछें छोटी और कुछ काली थीं। कुल मिलाकर उसके मुख के भाव से विद्वेषपूर्ण व्यङ्ग का भाव, व्यक्त होता था।

पर डोरा ने जिस दिन पहले-पहल उसे देखा, उसी समय से वह इस क़दर बदल गई, जैसे किसी ने उसपर जादू कर दिया हो। उसके इस परिवर्तन से हम लोगों की असुविधाओं का अन्त न रहा। वह हम लोगों की सब इच्छाओं की अवज्ञा करने लगी। हमारे कमरों में आते ही वह हड़बड़ी का-सा भाव जताती थी और बड़ी लापरवाही के

साथ कमरों को साफ़ करती। जब हम उससे किसी बात की शिकायत करते, तो वह क्रुद्ध होकर केवल एक बार झिड़क कर चली जाती। उसकी घोड़े की-सी आँखों में एक अजीब नशे की-सी चमक दिखाई देने लगी थी। उसकी गतिविधि से ऐसा अनुभव होने लगता था जैसे वह अकस्मात् अन्धी और बहरी हो चली है, और अक्सर वह चिन्तित भाव से छज्जे की ओर एकटक देखती रहती थी, जहाँ नवागत रोगी——उल्लू की-सी शक्लवाला फिलिपाफ़ नाम का छात्र——खाँसते-खाँसते दम नहीं ले पाता था। दिन में एक भी क्षण अवकाश मिलते ही डोरा उसके पास दौड़ी चली जाती थी, और सन्ध्या होने पर उसके कमरे में जाकर छिपी रहती। किसी भी उपाय से उसे अपना यह कार्यक्रम बदलने के लिये राज़ी नहीं किया जा सकता था।

इधर फिलिपाफ़ का बुरा हाल था। उसे रोग ने इस बुरी तरह पकड़ लिया था कि वह दिन पर दिन मृत्यु की ओर लुढ़कता चला जा रहा था। और एक विचित्र रूप से वह मरने जा रहा था। वह कभी हँसता कभी-व्यङ्ग करता। उसके हास्य और व्यङ्ग के बीच में मौत नङ्गा नाच कर रही थी। अक्सर वह किसी सङ्गीतमूलक चुटीले नाटक के गीत का स्वर सीटी के रूप में बजाने की चेष्टा करता रहता। यह क्रिया निश्चित रूप से खाँसी के दौरे में परिणत होकर रहती। उसके प्रत्येक रङ्ग-ढङ्ग और बात-व्यवहार में बनने का-सा भाव पाया जाता था। वह ऐसा भाव जताता जैसे वह तीसमारखाँ हो, और मौत की कुछ भी परवा न करता हो, बल्कि उसके साथ खेलना चाहता हो।

अपनी बिल्ली की-सी आँखों के कोनों से मेरी ओर देखते हुए वह मुझसे कहता——"इन सब पचड़ों के सम्बन्ध में आपकी क्या राय है, मित्र! दिन और रात, प्रेम और ज्ञान, जन्म और मरण——इनके

विषय में आप क्या सोचते हैं ? ये सब बड़े मज़े की बातें हैं—क्यों, है न ? ख़ासकर छब्बीस वर्ष के एक युवक के लिये तो ये और भी मज़े की हैं——मेरा आशय अपने से है ।......डोरा !"

तत्काल चम्मचों के खड़खड़ाने और मेज़-कुर्सियों के भड़भड़ाने का शब्द मुझे सुनाई देता और डोरा आकर वहाँ चुपचाप खड़ी दिखाई देती । उस समय उसकी आँखों से यह भाव प्रकट होता कि वह उस नवागत रोगी के आदेश की प्रतीक्षा अत्यन्त उत्सुकता से कर रही है ।

फिलिपाफ़ आदेश देते हुए उससे कहता——"मेरी भली-सी बूढ़ी हथिनी, मेरे लिये कुछ अँगूर ले आओ, जल्दी !" इसके बाद डोरा के चले जाने पर मुझसे कहता—"यह निहायत नासमझ और बुद्धू है।"

वह आरोग्यशाला के सब रोगियों को घृणा की दृष्टि से देखता था और उनकी ख़ामख़यालियों का मज़ाक बड़ी निर्दयता के साथ उड़ाया करता । दूसरे रोगी भी उससे घृणा करते थे । मेरे साथ उसकी मैत्री केवल इस कारण हो गई कि वह साहित्य का प्रेमी था, और स्वभावतः यह एक बात हम दोनों को एक-दूसरे के निकट ले आई ।

एक बार उसने अपनी स्याह ज़बान को ओठों पर फेरते हुए कहा——"मनुष्य के सब आविष्कारों में साहित्य सर्वोत्तम है । और वह जीवन से जितना ही दूर रहे उतना ही अच्छा है ।"

मुझे ऐसा अनुभव होने लगा था कि वह क्षयरोग से उतना पीड़ित नहीं है जितना किसी गहरे मानसिक आघात से ।

आरोग्यशाला में पहुँचने के उनसठवें दिन उसकी मृत्यु हो गई । मरने के पहले वह सन्निपात की अवस्था में बड़बड़ा रहा था—"फीमा... मैं जीवन भर.....तुम्हें चाहता रहा.....केवल तुम्हें.......सदा के लिये, फीमा......प्यारी......"

मैं उस समय उसके पलङ्ग के पैताने पर बैठा हुआ था, और डोरा उसकी बग़ल में खड़ी थी, और अपने विशाल पञ्जे से उसके रूखे बालों को सहला रही थी। बग़ल के नीचे वह एक बण्डल दबाए हुए थी। मुमूर्षु फिलिपाफ़ का बड़बड़ाना सुनकर उसने आशङ्कित भाव से मेरे निकट आकर पूछा—"वह क्या कह रहा है ? यह 'फ़ीमा' कौन है ?"

मैंने कहा—"स्पष्ट ही वह कोई लड़की या स्त्री है, जिसे वह चाहता था और अब भी चाहता है।"

डोरा विस्मय से विभ्रान्त होकर ज़ोर से चिल्लाती हुई बोली—"वह ! इस—फ़ीमा को ? नहीं, नहीं, वह उसे नहीं, बल्कि मुझे चाहता है। जिस दिन पहले-पहल उसने इस मकान पर क़दम रखा तभी से वह मुझे चाहने लगा था।"

पर जब उसने फिर एक बार फिलिपाफ़ को प्रायः उसी रूप में बड़बड़ाते सुना, तो वास्तविकता से परिचित होकर अपनी पीली भौंहों को ऊपर चढ़ाते हुए उसने अपने गीले चेहरे को झाड़न में पोंछा, और बण्डल को मेरे घुटने पर फेंककर बोली—"यह उसका कफ़न है—उसके मोजे, एक कमीज़ और चप्पल।" और यह कहकर वह चुपचाप कमरे से चली गई।

बीस मिनट बाद फ़िलिपाफ का प्रलाप बन्द हो गया। उसने अत्यन्त गम्भीरता-पूर्वक सफेद दीवार पर की चौकोर और काले रङ्ग की खिड़की की ओर देखा, और फिर एक आह भरी। स्पष्ट ही वह कुछ कहना चाहता था, पर शब्द उसके गले के भीतर जैसे अटक कर रह जाते थे। इसके बाद उसका छोटा-सा शरीर जिसकी प्रत्येक हड्डी-पसली तक क्लान्त हो गई थी, तनकर अनन्तकालीन शान्ति में जा मिला।

मैं डोरा को खोजने गया। वह छज्जे पर खड़ी थी और सामने उस स्थान की ओर दृष्टि किए थी जहाँ अनन्त समुद्र और अनन्त आकाश अभिन्न रूप से एक दूसरे से मिले हुए थे। उसने मेरी ओर मुँह किया, और मैं उसकी गम्भीर और कठोर मुद्रा देखकर चकित रह गया।

मैंने कहा—"वह मर गया है, डोरा। जाओ, उसके अन्तिम सत्कार का प्रबन्ध करो।"

"मैं नहीं करूँगी!" यह कहकर डोरा अपने पाँव को ज़मीन से इस तरह घिसने लगी जैसे नीचे पड़े हुए थूक को पोंछ रही हो।

उसने अपनी बात को दुहराते हुए कहा—"मैं नहीं करूँगी। मैं इस प्रकार के व्यक्ति से किसी प्रकार का सरोकार नहीं रखना चाहती। ज़रा सोचो, वह कैसा आदमी निकला! उसने कहा था कि वह मुझे चाहता है, और भीतर ही भीतर वह दिन-रात......"

"हाँ, ठीक है। पर तुम इस बात को क्यों भूल गईं कि वह मरने जा रहा था।"

"पर इससे क्या हुआ? मैं वह बात भूली नहीं थी। मैं अन्धी नहीं हूँ! मैंने अपने बचे-खुचे पैसों से उसके लिये कफ़न तक ख़रीदा था। जिस दिन पहले-पहल मैंने उसे देखा था तभी मैं समझ गई थी कि वह अधिक समय तक जी नहीं सकता, और मैंने अपने मन में कहा—'आह! बेचारा!' मरे चाहे जीए, इससे क्या! कौन नहीं मरता! पर इस प्रकार की झूठी बातों से दूसरों को धोखा क्यों देते हो? उसने मुझसे कहा—'मैंने कभी किसी लड़की से प्रेम नहीं किया।' पर अब देख रहे हो, उसकी बात कैसी झूठी निकली। मरो चाहे कुछ करो, पर धोखा मत दो......"

वह धीमी आवाज़ में बोल रही थी और ऐसा मालूम होता था जैसे वह कोई दूसरी ही बात सोच रही थी। इसके बाद सहसा एक मार्मिक वेदना की कराह उसके मुँह से निकल पड़ी, जैसे उसने खौलते हुए पानी का एक प्याला अपने मुँह के भीतर उँड़ेल दिया हो, और गला भयङ्कर रूप से जला डाला हो।

मैंने दिलासा देने की चेष्टा करते हुए कहा––"डोरा, शान्त होओ। चलो उसका प्रबन्ध करें।"

उसने उत्तर दिया––"तुम अगर बड़े दया-शील बनते हो तो स्वयं जाकर उसे मृतक के कपड़े क्यों नहीं पहनाते! मैं—नहीं, नहीं! मैं हर्गिज़ नहीं चलूँगी। वह मेरा क्या लगता था!"

"पर डोरा, मैं मृतक को कपड़े पहनाना नहीं जानता।"

"पर मैं क्यों उसकी चिन्ता करूँ। मैं उसके लिये एक अजनबी के सिवा और कुछ नहीं हूँ––या हूँ?"

"पर डोरा, अब तो वह मर चुका है!"

"तो इससे क्या हुआ? मुझे राज़ी करने की चेष्टा न करो। मैं उसके समान व्यक्ति की ओर आँख उठाकर देखना तक नहीं चाहती। धोखा कभी नहीं देना चाहिये..."

उसने अन्त तक मृतक के पास जाने से इनकार किया और छज्जे पर अकेली खड़ी रही।

जब मैं फिलिपाफ़ के मृत शरीर पर कफ़न चढ़ा रहा था, तो अकस्मात् मैंने किसी का मर्मभेदी क्रन्दन-स्वर सुना। मैं कूद कर छज्जे पर जा पहुँचा।

कभी-कभी मनुष्यों को विचित्र ढंग से जलते हुए, भयानक आँसू गिराते हुए देखा गया है। डोरा भी ठीक इसी प्रकार आँसू बहाते हुए

बिलबिला रही थी। फ़र्श पर घुटने टेककर, जँगले से अपना सिर पटकते हुए वह फफक-फफककर रो रही थी और दहाड़ मारती हुई कह रही थी--"अरे मेरे उचक्के प्यारे! अरे मेरे छोटे से भूत रे! मेरे प्रियतम रे! मेरे लाड़ले रे!..."

अकेले में मनुष्य का अनोखा आचरण

आज मैंने एक सुन्दरी महिला को, जिसके मुख के हाव-भाव बच्चों के-से थे, नेवा नदी के ऊपर ट्रोइत्सकी पुल पर खड़े देखा। वह मटमैले रङ्ग के दस्तानों से ढके हुए हाथों से पुल के जँगले को इस तरह पकड़े हुए थी जैसे नदी पर कूद पड़ने की तैयारी कर रही हो, और अपनी छोटी-सी जीभ बाहर निकाल कर चाँद को मुँह चिढ़ा रही थी।

बुड्ढे की-सी शक्लवाला चन्द्रमा गन्दे धुँए के बादलों से होकर सब की नज़र बचाता हुआ आगे को बढ़ा चला जा रहा था। वह बहुत बड़ा दिखाई दे रहा था, और उसके गालों का रङ्ग लाल मालूम होता था, जैसे उसने बहुत शराब पी हो। युवती महिला उसको बड़े क्रोध के साथ, हिंसक भावना से मुँह चिढ़ा रही थी--उसकी मुख मुद्रा से यही भाव प्रकट होता था।

उसे देखकर मुझे मानव-स्वभाव की कुछ ऐसी विचित्र बातों की याद आई, जो मुझे बहुत दिनों से विस्मय में डाले हुए थीं। मैंने जब कभी किसी व्यक्ति की एकाकी अवस्था में उसके आचरण पर गौर किया है, तो हमेशा मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि वह "पागल" है—और कोई दूसरा शब्द मुझे नहीं मिलता।

इस बात पर मैंने सबसे पहले ग़ौर तब किया था जब मैंने लड़कपन की अवस्था पार नहीं की थी। रन्डेल नाम का एक अँगरेज़ भाँड़ एक बार सर्कस के चारों ओर अकेला चक्कर लगा रहा था। उस समय उसके सिवा कोई दूसरा व्यक्ति वहाँ उपस्थित नहीं था। चक्कर लगाते हुए वह एक बड़े शीशे के पास जाकर खड़ा हो गया और स्वयं अपनी परछाँई का अभिवादन करने के उद्देश्य से उसने अपना टोप उतार लिया, और उसके आगे बड़े आदर के साथ झुका। मैं उसके सिर के ऊपर एक टंकी पर चुपचाप बैठा हुआ था। उसने मुझे नहीं देखा था। जब वह अभिवादन के लिये बड़े आदर से झुका तब मैंने अपना सिर बाहर निकाला। भाँड़ की उस क्रिया ने मुझे अप्रिय चिन्ताओं में मग्न कर दिया। वह एक भाँड़ था तिसपर अँगरेज़, जिसका पेशा—या कला—

इसके बाद मैंने अपने पड़ोसी, ए. चेखाफ़, की हरकतों पर ग़ौर किया। वह अपने बाग़ में बैठा हुआ टोप से सूरज की एक किरण पकड़कर उन दोनों को अपने सिर पर रखने की विफल चेष्टा कर रहा था। मैं स्पष्ट देख रहा था कि सूरज की किरणों के उस शिकारी को अपनी असफलता के कारण बड़ी झुँझलाहट आ रही थी; उसका चेहरा अधिकाधिक लाल होता चला जाता था, और अन्त में उसने अपने टोप को क्रोध के कारण अपने घुटने पर पटका, और अपने कुत्ते को धक्का देते हुए उसे शीघ्रता से सिर पर डाल लिया। इसके बाद अपनी आँखें आधी बन्द करके, एकबार कनखियों से आकाश की ओर देखकर उसने घर की ओर क़दम बढ़ाए। मुझे बरामदे पर देखकर वह मुस्कराया और बोला—"तुमने बेलमाँ की वह कविता पढ़ी है जिसमें उसने लिखा है कि 'धूप से घास की महक' आती है ! अजीब बेवकूफ़ी की बात है यह।

रूस में धूप से साबुन की-सी गन्ध आती है, और यहाँ तातारियों के पसीने की।"

चेखाफ़ ने एक बार दवा की एक छोटी सी शीशी के तङ्ग छेद के भीतर एक मोटी लाल पेन्सिल घुसेड़ने का प्रयत्न जानबूझकर किया था। इस प्रयत्न से उसने केवल भौतिक शास्त्र का एक विशेष नियम ही नहीं तोड़ा, बल्कि शीशी भी तोड़ डाली। वह एक प्रयोगशील वैज्ञानिक की तरह अपनी इस बच्चों की-सी चेष्टा में हठपूर्वक जुटा हुआ था।

लिओ टाल्सटाय ने एक बार एक छिपकिली से फुसफुसाते हुए कहा--"क्या तुम सुखी हो ?"

छिपकिली एक झाड़ी के बीच में एक पत्थर के ऊपर बैठकर धूप खा रही थी, और टाल्सटाय बड़े ग़ौर से उसे देख रहा था। अपने दोनों हाथों को वह चमड़े की पेटी के भीतर डाले हुए था। इसके बाद एक बार चारों ओर चौकन्नी दृष्टि फेरकर उस मनीषी ने छिपकिली के आगे अपने अन्तर की व्यथा प्रकट करते हुए कहा—"मैं तो सुखी नहीं हूँ।"

प्रसिद्ध रासायनिक प्रोफेसर टिखविन्सकी जब एक बार मेरे भोजन के कमरे में बैठा हुआ था, तो उसने ताँबे के 'ट्रे' में अपनी परछाँई देखकर उस परछाँई से प्रश्न किया—"कहो दोस्त, जीवन कैसा है ?"

परछाँई ने चूँकि कोई उत्तर नहीं दिया इसलिये उसने एक सर्द आह भरी और अपनी हथेली से उसे मिटाने की चेष्टा करने लगा। ऐसा करते हुए वह भौंहें चढ़ा रहा था और नाक सिकोड़ रहा था। उसकी नाक क्या थी हाथी की सूँड़ का 'पाकेट एडीशन' थी।

मैंने सुना है कि एक बार एन. एस. लेस्काफ़ नामक प्रसिद्ध मनीषी एक मेज़ के पास बैठा हुआ रुई के टुकड़े को हवा में इस तरह उछाल रहा था कि वह चीनी मिट्टी के एक बड़े-से कटोरे में जाकर गिरे, और

उसके गिरते ही कटोरे के पास झुककर बड़े ग़ौर से कान लगाता था। वह स्पष्ट ही यह आशा कर रहा था कि रुई के गिरने से किसी प्रकार का शब्द अवश्य होगा।

पादड़ी ब्लादीमिर्सकी ने एक बार अपने आगे एक जूता रखा और तब अत्यन्त गम्भीर भाव से उस जूते को लक्ष्य करके कहा—"अच्छा, अब चलो!" कुछ क्षण बाद बोला—"तो तुम चलने में असमर्थ हो?" इसके बाद आत्म-विश्वास और आत्म-गौरव के साथ उसने कहा—"देखा तुमने! मेरी सहायता के बिना तुम एक पग भी कहीं नहीं जा सकते!"

इतने में मैं उसके कमरे में जा पहुँचा। मैंने उसे उस अवस्था में देखकर पूछा—"आप यह क्या कर रहे हैं?"

उसने बड़े ग़ौर से मेरी ओर देखा और बोला—"इस जूते को देखते हो—इसकी एँड़ी बिलकुल घिस गई है। आजकल लोग ऐसे निकम्मे जूते बनाते हैं।"

मैंने अक्सर इस बात पर ग़ौर किया है कि लोग अकेले में किस विचित्र ढङ्ग से हँसते और रोते हैं। एक लेखक, जो कभी शराब नहीं पीता था, अकेले में खूब रोता और रोते-रोते एक पुराने गीत के तर्ज पर सीटी बजाता रहता। गीत की पहली पंक्ति इस प्रकार थी—"मैं पथपर चला अकेला!" वह ठीक तरह से सीटी नहीं बजा पाता था—एक स्त्री की तरह बजा रहा था, और उसके ओंठ काँपते रहते थे। उसकी आँखों से आँसुओं की झड़ी बहती जाती और बूँदें उसके गलमुच्छों और दाढ़ी में जाकर छिप जातीं। एक बार उसने किसी होटल के एक कमरे में रोना शुरू कर दिया। उस समय उसकी पीठ खिड़की की तरफ़ थी, और वह रोते हुए अपनी दोनों बाँहों को इस

तरह फैला रहा था जैसे तैरना चाहता हो। वह कसरत के लिये ऐसा नहीं कर रहा था, क्योंकि उसकी हरकतें बड़ी धीमी थीं और उनसे न फुर्ती प्रकट होती थी न सङ्गति।

फिर भी इस तरह की बात मुझे विशेष आश्चर्यजनक नहीं मालूम होती। हास्य और क्रन्दन मनुष्य के मन की स्वाभाविक अवस्था को प्रकट करते हैं। उन्हें देखकर मैं विभ्रान्त नहीं होता हूँ। और न मुझे लोगों को एकाकी अवस्था में जङ्गलों में, खेतों में अथवा समुद्र पर रात के समय ईश्वर के ध्यान में मग्न होते देखकर ही कोई आश्चर्य होता है।

नियागी द्वोर में मेरा एक पड़ोसी, जो वोरोनाय ज़िले का एक ज़मींदार था, एक बार रात के समय मेरे कमरे में ग़लती से चला आया। वह आधे ही कपड़े पहने था, पर नशे में नहीं था। मैं बत्ती बुझाकर पलङ्ग पर चुपचाप लेटा हुआ था। कमरे में चाँदनी छिटक रही थी। मेरे पलङ्ग के चारों ओर पर्दा टँगा था, इसलिये वह मुझे नहीं देख पाया। पर मैं पर्दे के एक छेद से उसकी सब हरकतों को देख रहा था। उसके सूखे हुए चेहरे पर एक विचित्र मुसकान झलक रही थी। वह धीमी आवाज़ में स्वयं अपने साथ इस प्रकार बातें कर रहा था--

"यहाँ पर कौन है!"

"मैं हूँ।"

"यह तुम्हारा कमरा नहीं है।"

"ओह, मैं क्षमा चाहता हूँ!"

"कृपा करके--"

सहसा उसने बोलना बन्द कर दिया, और एक बार कमरे के चारों

ओर देखकर शीशे में अपना मुख देखने लगा और अपने गलमुच्छों पर स्वयं रीझने का-सा भाव प्रकट करने लगा। इसके बाद उसने धीरे से गाना शुरू किया--

"मैं भटक गया हूँ, भटक, भटक,
क्यों भटका ? कैसे ? क्यों, क्यों, क्यों ?"

इसके बाद सीधे लौट चलने के बजाय उसने एक किताब उठाई और उसे उलटाकर मेज़ पर रख दिया। और तब बाहर सड़क की ओर देखकर ज़ोर से बोला, जैसे किसीको फटकार रहा हो—"इस समय ऐसा उजाला है कि दिन मालूम होता है—और दिन में भयङ्कर अन्धेरा था। यह अच्छा ढङ्ग है ! खूब !"

यह कहकर वह अङ्गूठों के बल क़दम रखता हुआ अपनी दोनों बाँहों को फैलाकर अपनी चाल में समता लाने की चेष्टा करता हुआ बाहर चला गया और कमरे के किवाड़ों को धीरे से फेर गया।

यदि कोई बच्चा किसी चित्रवाले पन्ने में से केवल चित्र को अपनी उङ्गलियों से पकड़ने की चेष्टा करे और काग़ज़ को ज्यों-का-त्यों छोड़ देना चाहे, तो यह बात विशेष आश्चर्य की नहीं समझी जावेगी। पर यदि कोई सयाना व्यक्ति—विज्ञान का एक अध्यापक—ऐसा करे और चौकन्नी दृष्टि से चारों ओर देखे कि कहीं कोई उसे 'चोरी' करते हुए देख तो नहीं रहा है, तो यह बात वास्तव में अत्यन्त आश्चर्य में डालने-वाली है।

विज्ञान के जिस अध्यापक का उल्लेख मैंने किया है उसे स्पष्ट ही यह विश्वास हो रहा था कि काग़ज़ में अङ्कित चित्र को वह काग़ज़ से अलग करके उठाकर अपनी जेब में रख सकता है। दो-एक बार उसे यहाँ तक भ्रम हुआ कि चित्र उसकी जेब में चला गया है। उसने

पेज पर से शून्य को पकड़कर दो उँगलियों से उसे इस तरह उठाया जैसे वह एक सिक्का हो, और उसे चुपके से अपनी जेब में डालने की चेष्टा की। पर जब दुबारा उसने अपनी उँगलियों को देखा, तो झुँझलाहट के कारण उसने मुँह बिचकाया और फिर एक बार कागज़ को प्रकाश के पास ले जाकर छपे हुए चित्र को हठपूर्वक कागज़ से अलग करने की चेष्टा करने लगा। अन्त में जब उसने देखा कि कोई फल नहीं हुआ, उसने किताब को उठाकर दूर फेंक दिया, और क्रोध से पाँव ज़मीन पर पटककर वह कमरे से बाहर चला गया। उसके चले जाने पर मैंने किताब को उठाकर ध्यानपूर्वक उसे देखा। वह जर्मन भाषा में लिखित बिजली की मशीनों से सम्बन्धित एक 'टेकनिकल' किताब थी। उसमें तरह-तरह के 'इलेक्ट्रिक मोटरों और उनके विभिन्न अंशों के चित्र दिए हुए थे। उसमें एक भी चित्र ऐसा नहीं था जो कागज़ से चिपकाया गया हो, और किसी छपे हुए चित्र को कागज़ पर से उठाकर जेब में डालना स्वभावतः असम्भव है! अध्यापक भी अपनी चेष्टा की असम्भवता से परिचित रहा होगा, हालाँकि वह कोई 'टेक्नीशियन' नहीं था, बल्कि मानवात्मा के कल्याण से सम्बन्धित विज्ञान-शास्त्रों का अध्यापक था।

स्त्रियाँ जब 'पैशंस' * खेलने में तल्लीन रहती हैं या बनाव-शृङ्गार में व्यस्त रहती हैं तो अक्सर अपने आप से बातें करती रहती हैं। पर एक दिन मैंने एक सुशिक्षिता महिला को पूरे पाँच मिनट तक अकेले में मिठाइयाँ खाते और मिठाई के प्रत्येक टुकड़े को लक्ष्य करके बोलते हुए सुना। वह एक छोटे से चिमटे से एक टुकड़ा मिठाई का ऊपर उठाती

*ताश का एक खेल जो अकेले ही खेला जाता है।

और उसे लक्ष्य करके कहती—"आह, मैं तुम्हें खा जाऊँगी !" इसके बाद उसे मुँह में डालकर खा जाती और तब प्रश्न करती—"किसे ?"

फिर कहती—"क्यों, खाया या नहीं ?"

इसके बाद एक दूसरा टुकड़ा उसी प्रकार ऊपर उठाकर कहती—"मैं तुम्हें खा जाऊँगी !"

और फिर—"क्यों, खाया या नहीं ?"

उस समय वह अपने मकान की एक खिड़की के पास एक आराम-कुर्सी पर बैठी हुई थी। गरमी का मौसम था और सन्ध्या का समय। बाहर सड़क से शहर का कोलाहल सारे कमरे को छाए हुए था। उस महिला की मुखमुद्रा अत्यन्त गम्भीर दिखाई देती थी, और उसकी कुछ-कुछ मटमैली आँखें मिठाई के बक्स पर, जो उसकी गोद पर रखा था, गड़ी हुई थीं।

एक बार किसी थियेटर के 'कारीडोर' में मैंने एक सुन्दरी, काले बालोंवाली महिला को, जो खेल शुरू होने के बाद पहुँची थी, एक बड़े शीशे के सामने खड़े देखा। वह अपने बालों को ठीक कर रही थी और किसी को लक्ष्य करके अत्यन्त गम्भीर और कुछ ऊँची आवाज में कह रही थी—"और यह सब होने पर भी—एक दिन मरना है ?"

उस समय 'कारीडोर' में मेरे सिवा और कोई दूसरा व्यक्ति नहीं था—क्योंकि मुझे भी पहुँचने में देर हो गई थी। पर वह मुझे नहीं देख पाई थी, और यदि उसने मुझे देखा भी होता, तो भी निश्चय ही इस प्रकार का बेतुका प्रश्न वह मुझसे कदापि न करती।

हाँ, बहुत-से ऐसे व्यक्ति होते हैं जो अकेले होने पर इस प्रकार का विचित्र आचरण करते हैं। एक और उदाहरण देता हूँ—

प्रसिद्ध कवि अलेग्ज़ेण्डर ब्लाक एक बार जब किसी पबलिक लाइ-

ब्रेरी के ज़ीनेपर खड़ा था, तो किसी एक किताब के हाशिये पर वह पेंसिल से कुछ लिख रहा था। सहसा वह जङ्गले से दबकर खड़ा हो गया, और बड़े आदर से किसी एक व्यक्ति के लिये उसने रास्ता छोड़ दिया। मैं बड़े ग़ौर से उसे देख रहा था, पर मुझे कोई भी व्यक्ति उस रास्ते से जाते हुए न दिखाई दिया। ब्लाक की आँखों में प्रसन्नता का भाव वर्तमान था, और जब उसने अपनी बग़ल से होकर जानेवाले काल्पनिक व्यक्ति (सम्भवतः कोई काल्पनिक महिला) की ओर देखने की चेष्टा की तो उसकी दृष्टि मुझपर पड़ी। मेरी आँखों में उस समय निश्चय ही तीव्र विस्मय का भाव वर्तमान रहा होगा। मुझे देखते ही ब्लाक के हाथ से पेन्सिल गिर गई; वह उसे उठाने के लिये नीचे झुका और बोला—"क्या मैंने देर कर दी?"

टाल्सटाय

गरमी के मौसम में मैं एक दिन निचली सड़क से होकर जा रहा था। सहसा टाल्सटाय पीछे से एक घोड़े पर सवार होकर आ पहुँचा। मुझे देखकर उसने घोड़े की चाल धीमी कर ली और मेरा अभिवादन किया। वह लीवाडिया की ओर जा रहा था और एक छोटे से तातारी घोड़े पर सवार था। वह एक छत्रकनुमाँ सफ़ेद टोपी लगाए हुए था और किसी भौतिक लोक के जीव की तरह दिखाई दे रहा था।

मैं उसकी बग़ल से होकर चलने लगा। कुछ इधर-उधर की बातों के बाद मैंने उससे कहा कि मुझे व्ही. जी. कोरोलेंको का एक पत्र मिला है। टाल्सटाय ने अपनी दाढ़ी को क्रोधपूर्वक हिलाते हुए प्रश्न किया—"क्या वह ईश्वर पर विश्वास करता है?"

मैंने कहा—"मुझे नहीं मालूम।"

"इसका अर्थ यह है कि तुम उसके सम्बन्ध में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात का पता नहीं रखते। वह मन-ही-मन ईश्वर पर विश्वास करता है, पर नास्तिकों के आगे इस बात को स्वीकार करने से डरता है।"

वह झुँझलाहट और खीझ भरे शब्दों में बोल रहा था, और अपनी अधमुँदी आँखों से क्रोधपूर्वक मेरी ओर देख रहा था। यह स्पष्ट था कि उस समय मेरे साथ बातें करने की मानसिक अवस्था उसकी नहीं थी। पर जब मैंने उसे छोड़कर चले जाने का भाव जताया, तो उसने मुझे रोका और कहा—"तुम किधर जा रहे हो? मैं बहुत तेज़ तो नहीं चल रहा हूँ!"

इसके बाद वह फिर शिकायत के स्वर में कहने लगा—"तुम्हारा एन्ड्रीएफ़ भी नास्तिकों से डरता है, पर वह भी निश्चय ही ईश्वर पर विश्वास करता है—और ईश्वर उसपर अपना आतङ्क जमाए हुए है।"

जब हम लोग ग्रैंड ड्यूक ए. एम. रोमानोफ़ की 'इस्टेट' के पास पहुँचे, तो वहाँ रोमानोफ़ वंश के तीन व्यक्ति एक-दूसरे के पास-पास खड़े आपस में बातें कर रहे थे। एक घोड़ागाड़ी ने सारी सड़क को घेर कर रास्ता बन्द कर रखा था, और उस गाड़ी के पास ही एक कोने पर एक घोड़ा, जिस पर ज़ीन कसा हुआ था, खड़ा था। लिओ निकोलेविच (टाल्सटाय) उन दोनों के बीच से होकर नहीं जा सकता था। उसने बड़ी गम्भीर दृष्टि से रोमानोफ़ परिवार के उन तीन व्यक्तियों की ओर इस प्रत्याशा से देखा कि वे उसके लिये रास्ता साफ किये जाने का आदेश दें। पर उसके पहुँचने के पहले वे तीनों रोमानोफ़ वहाँ से हट कर चले गए थे। अन्त में ज़ीन कसा हुआ घोड़ा घबरा कर वहाँ से

हट गया, और टाल्सटाय के घोड़े को आगे बढ़ने का रास्ता मिल गया।

कुछ समय तक टाल्सटाय चुपचाप आगे को बढ़ा चला गया। इसके बाद बोला—"उन मूर्खों ने मुझे पहचान लिया।" कुछ क्षण बाद उसने कहा—"वह घोड़ा जानता था कि उसे टाल्सटाय के लिये हर हालत में रास्ता छोड़ देना होगा!"

* * * *

"सब से पहले अपनी चिन्ता करो—और तब दूसरों के लिये चिन्ता करने के बहुत अवसर तुम्हारे लिये रह जावेंगे।"

* * * *

"जब हम कहते हैं कि हम 'जानते हैं' तो उसका क्या अर्थ होता है? मैं निश्चय ही जानता हूँ कि मैं टाल्सटाय नाम का लेखक हूँ, मेरे एक स्त्री और बाल बच्चे हैं, मेरे बाल पक गए हैं, मेरा चेहरा बदसूरत है और मैं दाढ़ी रखता हूँ—मेरे पासपोर्ट में ये सब बातें लिखी हुई हैं। पर मेरी आत्मा के सम्बन्ध में मेरा पासपोर्ट एक शब्द भी नहीं कहता, और अपनी आत्मा के सम्बन्ध में मैं यह जानता हूँ कि वह ईश्वर के निकट होना चाहती है।

"पर ईश्वर क्या है? ईश्वर वह है जिसका मेरी आत्मा एक अणु है। जिस व्यक्ति ने दार्शनिक विचारों में मग्न होना सीख लिया है उसके लिये ईश्वर पर विश्वास करना कठिन हो जाता है; पर केवल विश्वास द्वारा ही मनुष्य ईश्वर में निवास कर सकता है। इसी लिये टर्टू-लियन ने कहा था—'विचार पाप है'।"

* * * *

इस दन्तकथा के युग के व्यक्तियों की-सी प्रसिद्धि पानेवाले महान् पुरुष के धार्मिक उपदेशों में एकरसता और निर्विच्छिन्नता होने पर

भी उसके व्यक्तित्व में कितनी असंख्य विचित्रताएँ वर्तमान हैं ! आज जब पार्क में जब वह आस्प्रे के मुल्ला के साथ बातें कर रहा था, तो वह एक ऐसे विश्वासपरायण, सरल-स्वभाव, अशिक्षित किसान की तरह पेश आ रहा था जिसके लिये अपने अन्तिम दिनों की चिन्ता करने का समय आ गया हो। वह नाटे क़द का और जीर्ण-शीर्ण दिखाई देता था, और उस चौड़े क़दवाले, हृष्ट-पुष्ट तातारी के आगे वह एक छोटे से बुड्ढे की तरह लगता था, जिसकी आत्मा अभी-अभी किसी ऐसी बात के सम्बन्ध में सचेत हो उठी हो, जो आज तक उसके भीतर दबी पड़ी थी, और जो उन प्रश्नों से घबराता हो जो उस दबी हुई बात के उभरने के कारण उठ खड़े होंगे।

वह अपनी जर्जर-भौंहों को आश्चर्य के साथ चढ़ा रहा था, अपनी छोटी-सी, मर्मभेदी आँखों को मीच रहा था, और उन आँखों के भीतर जो असहनीय रूप से मर्मदाही अग्नि वर्तमान थी उसे बुझाने की चेष्टा कर रहा था। उसकी सर्वदर्शी दृष्टि मुल्ला के चौड़े मुख पर गड़ी हुई थी। इस समय उसकी आँखों की पुतलियों में वह तेज वर्तमान नहीं था जो अक्सर लोगों को विभ्रान्त कर देता था।

मुल्ला से वह जीवन के अर्थ, आत्मा और ईश्वर के सम्बन्ध में बच्चों के से प्रश्न कर रहा था, और मुल्ला कुरान की जो-जो आयतें सुनाता, टाल्सटाय आश्चर्य-जनक फ़ुर्ती से तदनुरूप वाक्य इञ्जील में से सुनाता जाता था। वह मुल्ला के साथ ऐसी आश्चर्य-जनक दक्षता के साथ पेश आ रहा था जो केवल ऐसे आदमी में सम्भव हो सकती है, जो बहुत बड़ा कलाकार हो और साथ ही बहुत बड़ा ऋषि।

इस घटना के कुछ दिन पहले जब वह तानेइयेफ़ और सूलेर के साथ सङ्गीत पर बातें कर रहा था तो वह, बच्चों की तरह भाव-मग्न

और पुलकित हो रहा था। मुझे ऐसा लगता था कि वह सङ्गीत की प्रशंसा के बहाने जैसे स्वयं अपने उत्साह पर—बल्कि यह कहना अधिक उचित होगा कि उत्साह प्रकट कर सकने की योग्यता पर—मुग्ध हो रहा था। उसने यह मत प्रकट किया कि सङ्गीत के सम्बन्ध में शोपेनहोअर ने जिस योग्यता और गहराई से लिखा है वह अद्वितीय है; इसी सिलसिले में उसने अन्तर्कथा के रूप में प्रसिद्ध कवि फेट के सम्बन्ध में एक विनोदपूर्ण क़िस्सा सुनाया, और अन्त में कहा कि सङ्गीत "आत्मा की नीरव अर्चना है।"

इसपर सूलेर ने पूछा—"नीरव कैसे?"

"इसलिये कि वह शब्दों का नहीं, बल्कि ध्वनि का प्रयोग विशेष रूप से करता है। भावों और विचारों की अपेक्षा ध्वनि में आत्मा का समावेश अधिक रहता है। भाव एक बटुवे की तरह है—उसमें ताँबे के सिक्के भी रहते हैं जो अत्यन्त तुच्छ हैं। पर ध्वनि में किसी प्रकार का मिश्रण नहीं होता—वह पूर्ण रूप से विशुद्ध और निष्कलुष होती है।"

वह अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक सरल, मधुर शब्दों में अपने विचार प्रकट कर रहा था, और चुन-चुन कर सबसे अधिक सुन्दर और कोमल शब्दों का प्रयोग कर रहा था, जो कि उसके लिये बिलकुल नयी बात थी। इसके बाद अकस्मात्, अप्रत्याशित रूप से, दाढ़ी के भीतर अपनी व्यङ्गपूर्ण मुसकान को छिपाने की चेष्टा करता हुआ, वह पुचकार-भरी मधुर वाणी में बोल उठा—"सब संगीतज्ञ मूर्ख होते हैं। जो सङ्गीतज्ञ जितना ही अधिक प्रतिभाशाली होता है वह उतना ही अधिक ओछा होता है। आश्चर्य केवल इस बात पर होता है कि वे सब धार्मिक होते हैं।"

* * * *

एक बार उसने चेख़ाफ़ से टेलीफोन पर कहा था—

"आज का दिन मुझे बहुत ही सुन्दर लग रहा है; मेरी आत्मा आनन्द से इस क़दर ओत-प्रोत है कि मैं तुम्हारे लिये भी उसी प्रकार के आनन्द की कामना करता हूँ। हाँ, ख़ास तौर से तुम्हारे लिये। तुम बहुत ही अच्छे आदमी हो, बहुत ही अच्छे!"

*　　*　　*　　*

जब कोई व्यक्ति टाल्सटाय से ऐसे विषयों पर बात करता है जिन का कोई उपयोग वह नहीं कर सकता, तो वह उदासीनता और अविश्वासपूर्वक उसकी बातें सुनता है। वास्तव में वह किसी से किसी विषय पर ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से कुछ पूछता नहीं—केवल जाँच के लिये प्रश्न करता है। अजीब और दुष्प्राप्य चीजों को इकट्ठा करने-वाले व्यक्ति की तरह वह केवल ऐसी दुर्मूल्य वस्तुओं का संग्रह करता है जो उसके दूसरे संग्रहों से मेल खाता हो।

*　　*　　*　　*

एक दिन वह अपनी चिट्ठियों को पढ़कर उन्हें ठीक सिलसिले से रख रहा था। इस अवसर पर उसने कहा—

"इस समय सब लोग मेरे सम्बन्ध में बड़ा शोर मचाए रहते हैं, सर्वत्र मेरी रचनाओं की चर्चा होती रहती है। पर अन्त में, जब एक-आध वर्ष बाद मेरी मृत्यु हो जायगी, तो लोग कहेंगे—'टाल्सटाय? हाँ, हाँ, ठीक है, इस नाम का एक कौंट था जिसने जूते बनाने का प्रयत्न किया था; बाद में अकस्मात् उसके जीवन में एक अनोखी बात देखने में आई। क्या उसी व्यक्ति से तुम्हारा आशय है?'

*　　*　　*　　*

मैंने कई बार उसके चेहरे में, उसकी दृष्टि में, एक ऐसे व्यक्ति

की चतुराई से भरी और आत्मसन्तोषपूर्ण मुसकान का-सा भाव पाया है, जो किसी छिपाई हुई चीज़ को अप्रत्याशित रूप से फिर से पा जाता है। वह पहले उसे कहीं छिपाकर रख देता और फिर एकदम भूल जाता है कि किस स्थान में उसने उसे छिपाया था। जब उसकी आवश्यकता पड़ती है तो वह चिन्ता और आशङ्का से घबरा उठता है और घण्टों अत्यन्त व्याकुल होकर सोचता रहता है—"मैंने उस चीज़ को कहाँ रख दिया, जिसकी मुझे इस समय इतनी अधिक आवश्यकता है!" इस ख़याल से कि कहीं उसके आस-पास के लोग उसकी इस बेचैनी की बात मालूम न कर लें और उसके सम्बन्ध में उसे परेशान करना शुरू कर दें और किसी प्रकार की हानि पहुँचाने लगें, वह भयभीत हो उठता है। इसके बाद अकस्मात् उसे वह छिपाई हुई चीज़ मिल जाती है। अपनी उस सफलता से वह अत्यन्त प्रसन्न हो उठता है, और चूँकि अब दूसरों के आगे अपने मन का भाव छिपाने और उनसे घबराने का कोई कारण नहीं रह जाता, इसलिये अपने आस-पास के व्यक्तियों को वह चतुराई से भरी दृष्टि से देखने लगता है, जैसे कहना चाहता हो—"अब तुम लोग मुझे किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा सकते!"

पर उसने कौन-सी चीज़ छिपाई थी और वह कहाँ मिली—यह रहस्य सदा के लिये अज्ञात ही रहेगा।

उसके सम्बन्ध में तरह-तरह की बातें सोचते रहने से किसी का जी नहीं उकता सकता, पर उससे अक्सर मिलना दर-असल कष्टकर है। व्यक्तिगत रूप से मैं उसके साथ एक ही मकान में किसी हालत में नहीं रह सकता—एक ही कमरे के सम्बन्ध में तो कहना ही क्या है। कारण यह है कि उसके चारों ओर का वातावरण मुझे एक रेगिस्तान

की तरह लगता है जहाँ ज्वलन्त सूर्य के प्रचण्ड ताप से सब चीज़ें झुलस जाती हैं, और वह सूर्य भी ऐसा जो स्वयं दिन-पर-दिन निर्वाण की ओर बढ़ा चला जा रहा हो, और एक विकराल और अनन्त रात्रि की पूर्वसूचना दे रहा हो।

एण्टन चेकाफ़

आज पाँच दिन से मेरा 'टेम्परेचर' नार्मल से ऊपर है, पर बिस्तर पर लेटे रहने की बात मुझे तनिक भी नहीं जँचती।

मटमैले रङ्ग की वर्षा पृथ्वी पर गीली धूल छिड़क रही है। आइको के क़िले पर से तोपों की गड़गड़ाहट मुझे साफ़ सुनाई दे रही है। शत्रु-सेना ने उस क़िले पर धावा बोल दिया है। रात के समय सर्च-लाइट की लम्बी जीभ बादलों को चाटती रहती है। इस दृश्य से मन में बड़ी खलबली मचने लगती है, क्योंकि यह शैतान के इस आविष्कार--युद्ध--की बात भूलने नहीं देता।

मैं चेकाफ़ की कहानियाँ पढ़ रहा हूँ। यदि दस वर्ष पहले उसकी मृत्यु न हो गई होती, तो आज युद्ध का यह दृश्य उसे निश्चय ही मार डालता, क्योंकि मानवजाति के प्रति घृणा के भाव से उसका मन पहले ही विषमय हो उठा था।

उसके जनाज़े की बात मैं नहीं भूला हूँ। मास्को की जनता के उस "प्रिय" लेखक की अर्थी एक हरे रङ्ग की माल ढोने वाली गाड़ी में लाई गई, जिसकी एक बग़ल में बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा हुआ था—"सीपों के लिये।" उस महान लेखक के जनाज़े में शरीक होने के लिये जो ख़ासी भीड़ स्टेशन पर इकट्ठा हुई थी उसका एक बड़ा भाग

जनरल केलर के जनाज़े के साथ हो लिया। बात यह हुई कि जनरल केलर का मृत शरीर, जो कि मञ्चूरिया से लाया गया था, ठीक उसी समय मास्को पहुँचा। जनता को यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हो रहा था कि चेकाफ़ का जनाज़ा पूरे 'मिलिटरी' ठाठ के साथ निकाला जा रहा है। पर बाद में जब भूल मालूम हुई तो कुछ मनमौजी व्यक्तियों में क़हक़हा मच गया और मज़ाक उड़ाया जाने लगा। चेकाफ़ के जनाज़े के साथ केवल सौ के क़रीब आदमी रह गए। मैं दो वकीलों के पीछे-पीछे चल रहा था। वे दोनों नये जूते और भड़कीली 'टाइयों' से सज्जित थे—सम्भवतः दोनों की सगाइयाँ हाल ही में हुई थीं। उनमें से एक का नाम व्ही. ए. माक्लाकाफ़ था। वह कुत्तों की होशियारी पर लेकचर बघार रहा था; और दूसरा—जिससे मैं परिचित नहीं हूँ—अपने देहाती मकान और उसके आसपास के स्थानों की प्रशंसा के पुल बाँध रहा था। एक महिला, जो हाथ में एक गोटेदार छाता लिए थी, एक चश्मानशीन बुड्ढे सज्जन को इस बात पर विश्वास करने के लिये प्रेरित कर रही थी कि मृत व्यक्ति एक योग्य लेखक था। वह कह रही थी—"ओह, वह कमाल का लेखक था और हद दर्जे का चुहचुहाता..." वृद्ध महाशय ने उसकी बात सुनकर अविश्वासपूर्वक खाँसना शुरू कर दिया। बड़ी गर्मी पड़ रही थी और धूल उड़ रही थी। जनाज़े के आगे एक भारी-भरकम शरीरवाला पुलिस का आदमी एक घोड़े पर सवार होकर अकड़ता हुआ चला जा रहा था। सारा दृश्य अत्यन्त साधारण और बाज़ारू लग रहा था, जिसे देखकर किसी भी समझदार व्यक्ति के मन पर चोट पहुँचना स्वाभाविक था। वह जनाज़ा किसी भी हालत में एक महान् और सूक्ष्मदर्शी कलाकार की शान के उपयुक्त नहीं था।

* * * *

'नोवोये फ्रेम्या' नामक पत्र के सम्पादक बुड्ढे ए. एस. सुवोरिन को एक बार चेकाफ़ ने लिखा था—

"नीरस, गद्यात्मक जीवन-संघर्ष की अपेक्षा अधिक जी उबानेवाली और कवित्वहीन बात और कोई नहीं हो सकती। इस प्रकार का सङ्घर्ष जीवन से सब आनन्द सोख लेता है और व्यक्ति को उदासीन और समवेदना-रहित बना देता है।"

ये शब्द रूसी विचारधारा को मार्मिक रूप से प्रकट करते हैं, और मेरा यह अनुमान है कि ए. पी. चेकाफ़ के मूल स्वभाव में यह बात नहीं थी। रूस में, जहाँ सब चीज़ों की इफ़रात है पर जहाँ लोग काम को केवल काम के लिये पसन्द नहीं करते, अधिकांश लोग इसी ढङ्ग से सोचने के आदी हैं। रूसी जनता शक्ति और स्फूर्ति की प्रशंसा करती है, पर उसमें विश्वास करने में उसे कठिनाई मालूम होती है। जैक लण्डन के समान सक्रिय मनोवृत्तिवाला लेखक रूस में मिलना असम्भव है। हालाँकि उक्त लेखक की पुस्तकें रूस में लोकप्रिय हैं, पर मैं नहीं समझता कि उनसे रूसियों को कर्म की प्रेरणा मिलती होगी; वे रचनाएँ केवल उनके मस्तिष्क को गुदगुदाती हैं।

पर इस दृष्टिकोण से चेकाफ़ पूर्णतया रूसी नहीं था। उसके लिये पूर्वोक्त 'जीवन-सङ्घर्ष' यौवन के प्रारम्भ में ही शुरू हो गया था; तभी से उसे दो रोटियाँ प्राप्त करने के लिये नीरस कर्मचक्र में पिसने, प्रतिदिन के जीवन की तुच्छता को अपनाने और दिन-रात चिन्ता-मग्न रहने के लिये बाध्य होना पड़ा था। और यह चिन्ता केवल अपने ही पेट के लिये नहीं थी—उसके परिवार का पेट बहुत बड़ा था। इस प्रकार की आनन्दरहित चिन्ताओं के पीछे उसने अपनी जवानी की सारी शक्ति ख़र्च कर डाली थी, और इस बात पर हमें आश्चर्य होना चाहिये कि वह

अपनी परिहास की प्रवृत्ति को इस परिस्थिति में भी अन्त तक कैसे क़ायम रख सका। उसने जीवन को केवल सन्तोष और शान्ति की रङ्गरहित साधना के रूप में देखा; जीवन-नाट्य की विशाल "ट्रेजेडियाँ" उसके लिये प्रतिदिन की घटनाओं की घनी, मोटी परतों के नीचे छिपी हुई रहीं। बाद में जब वह किसी हद तक अपने चारों ओर के भूखे मुखों में अन्न के कौर डालने की चिन्ता से मुक्त हो पाया, तब वह उन वृहत् जीवन-नाटकों पर दीर्घ दृष्टि डालने में समर्थ हुआ।

कर्म को सब प्रकार की संस्कृतियों का मूल मानकर उसके महत्त्व का अनुभव चेकाफ़ जिस गहनता से करता था वह मेरी जानकारी में अद्वितीय है। उसकी यह अनुभूति उसके प्रतिदिन के जीवन की सभी तुच्छताओं के बीच में अपने को व्यक्त करती रहती थी——उसकी आदतों में, चीज़ों के चुनाव में और मानवीय कृतियों के प्रति उस उदार प्रेम-भावना में, जो उन्हें मनुष्य की सृजन-वृत्ति के प्रेरणा की उपज समझ कर उनकी प्रशंसा करने से कभी नहीं थकता। वह इमारतें गढ़ना, बाग़ लगाना, ज़मीन को सजाना तथा और भी इसी तरह के कामों को पसन्द करता था; उसमें कर्म-मूलक कविता की अनुभूति वर्तमान थी। उसने अपने बाग़ में जिन फल के पेड़ों और सजावट की झाड़ियों को अपने हाथ से लगाया था उनके उगने और पनपने की क्रिया को वह अत्यन्त स्नेहपूर्वक देखा करता। आउटका में एक मकान बनाने का 'प्लान' उसने तैयार कर लिया था। इस सम्बन्ध में उसका कहना था——"यदि प्रत्येक मनुष्य ज़मीन के उस टुकड़े को सुन्दर बनाने की चेष्टा में कोई बात उठाए न रहता, जिस पर उसका अधिकार है, तो सारा संसार कितना आकर्षक न बन जाता!"

मैंने "वास्का बुस्सलाएफ़" नामक एक नाटक लिखना शुरू किया

था, और एक दिन मैंने चेकाफ़ को वास्का की दाम्भिकतापूर्ण स्वगतोक्ति पढ़कर सुनाई, जो इस प्रकार थी--

"हाय, यदि मुझे अधिक शक्ति और सामर्थ्य प्राप्त होती, तो मैं ऐसी तप्त श्वास छोड़ता कि उससे बर्फ़िस्तान पिघल जाता! मैं सारी पृथ्वी का चक्कर लगाते चलता और उसपर सर्वत्र हल चलाता जाता! मैं वर्षों तक केवल चलता ही रहता और शहर-पर-शहर बसाता जाता, असंख्य गिर्जों का निर्माण करता, और अनन्त बाग़ लगाता। मैं पृथ्वी को इस तरह सजाता जैसे वह एक सुन्दरी कुमारी हो, और उसे अपनी छाती से लगाता, जैसे वह मेरी दुलहन हो। उसे गोद में उठाकर मैं ईश्वर के पास उसे ले जाता, और उससे कहता—"यह देखो ईश्वर! नीचे मेरी इस पृथ्वी की ओर देखो! ज़रा इस बात पर ग़ौर करो कि वास्का ने उसे कैसे सुन्दर रूप से अलंकृत किया है। तुमने इसे आकाश से केवल एक पत्थर की तरह नीचे फेंक दिया था, पर मैंने उस पत्थर को एक मूल्यवान हीरे के रूप में परिणत कर दिया है! इसे देखो, मेरे ईश्वर! और मेरे साथ तुम भी खुशी मनाओ। यह देखो, सूर्य की किरणों में किस तेजी से यह हीरा चमक रहा है! मैं इसे तुम्हें एक सुन्दर उपहार के रूप में प्रदान करता हूँ--पर नहीं—मैं इसे नहीं दे सकता—मैं इसका मोह त्यागने में असमर्थ हूँ।"

चेकाफ़ ने इस स्वगतोक्ति को बहुत पसन्द किया, और आवेश के कारण खाँसते हुए उसने मुझसे और डा० एलोक्सेन से, जो उस समय वहाँ मौजूद था, कहा—"वाह, वास्तव में यह उक्ति बहुत सुन्दर है! बहुत सत्य है और अत्यन्त मानवीय। इसमें सब दर्शनों का सार आ गया है। मनुष्य ने पृथ्वी को वासयोग्य बनाया है—इसलिये यह आवश्यक है वह उसे सुखप्रद भी बनावे।"

इसके बाद उसने हठपूर्ण आवेश के साथ कहा--"वह बनाकर छोड़ेगा !"

उसने मुझसे वास्का की स्वगतोक्ति एक बार और पढ़ने के लिये अनुरोध किया। मैं पढ़ने लगा। वह अन्त तक ध्यानपूर्वक सुनता रहा। इसके बाद उसने अपना यह मन्तव्य प्रकट किया—"अन्तिम दो पंक्तियाँ अनावश्यक हैं—उनसे शालीनतारहित दम्भ की बू आती है। इसकी कोई आवश्यकता वहाँ पर नहीं है।"

* * * *

अपनी साहित्यिक कृतियों के सम्बन्ध में चेकाफ़ बहुत कम बोला करता था, और जब कभी बोलने को विवश होता तो अनिच्छापूर्वक दो चार शब्द कहकर रह जाता। ऐसे अवसरों पर वह उसी शालीनता और सावधानी से बोला करता था जिस प्रकार वह टाल्सटाय के सम्बन्ध में बोलता था। बहुत ही कम अवसर ऐसे आते थे जब वह, खुश-मिजाज़ी की हालत में, हँसते हुए अपनी किसी नयी परिहासात्मक सूझ से हम लोगों को परिचित कराता। ऐसे ही बिरले अवसर पर एक बार उसने मुझसे कहा—

"मैं एक स्कूल की अध्यापिका के सम्बन्ध में एक कहानी लिखने जा रहा हूँ। वह एक नास्तिक और डार्विन को बहुत माननेवाली महिला होगी। जन-साधारण के कुसंस्कारों से लड़ने की आवश्यकता पर उसका पूर्ण विश्वास रहेगा; पर इस विश्वास के रहते हुए भी वह आधी रात के समय गुसलखाने में एक काली बिल्ली को उबालने से बाज़ नहीं आवेगी, और उस बिल्ली के शरीर से एक विशेष हड्डी निकालकर उस हड्डी को टोने-टोटके के काम में लावेगी, ताकि इच्छित व्यक्ति पर उसके प्रेम का जादू चल जावे !"

अपने नाटकों को वह प्रहसनात्मक और विनोदपूर्ण बताया करता था, और सम्भवतः इस बात पर वह सच्चे हृदय से विश्वास करता था। शायद उसके इस कथन से प्रभावित होकर ही सव्वा मोकोज़ाफ़* इस बात पर जोर दिया करता था कि "चेकाफ़ के नाटक गीति-प्रहसन के रूप में खेले जाने चाहियें।"

पर आम तौर से वह साहित्यिक प्रगति का अध्ययन अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक किया करता था, और नए लेखकों की रचनाओं पर विशेष मनोयोग पूर्वक ध्यान दिया करता था। अत्यन्त धैर्य के साथ वह बी. लाज़ारेव्सकी, एन. ओलीगी आदि-लेखकों की रचनाओं की हस्तलिखित कापियों को पढ़ा करता।

वह कहा करता था—"हमें और अधिक लेखकों की आवश्यकता है। हमारे देश में साहित्य अभी तक एक नूतनता है—सुसंस्कृत श्रेणी के व्यक्तियों के लिये भी यह बात लागू होती है। नारवे की सारी जनसंख्या में प्रति दो सौ छब्बीस व्यक्तियों में से एक व्यक्ति लेखक है, और रूस में दस लाख व्यक्तियों में केवल एक लेखक पाया जाता है।"

* * * *

अपनी बीमारी के कारण वह कभी-कभी झुँझला उठता था और मानव-विद्वेषी बन जाता था। ऐसे अवसरों पर साहित्य तथा जीवन के सम्बन्ध में उसके विचार मनमाने होते थे, और प्रत्येक व्यक्ति के प्रति उसका व्यवहार खीझ और झुँझलाहट से भरा होता था। एक दिन जब वह अपने कौच में लेटा हुआ खाँस रहा था और थर्मामीटर के

* मास्को का एक बहुत बड़ा व्यापारी, जो क्रान्तिकारी होने के साथ ही कला का पोषक भी था।

साथ खेल-सा रहा था, उसने कहा—"मरने के लिये जीना किसी के लिए विशेष सुखकर नहीं कहा जा सकता; पर यह जानते हुए भी कि हमें अपने समय से पहले ही मर जाना है, यदि हम जीते रहें, तो यह घोर मूर्खता का परिचायक है।"

इसी तरह एक बार जब वह एक खुली हुई खिड़की के पास बैठा था और समुद्र की दूरस्थित क्षितिज-रेखा की ओर देख रहा था, तो अकस्मात् वह झुँझलाहट के साथ बोल उठा—

"हम लोग अच्छे मौसम, अच्छी फ़सल, सुखद प्रेम, धन की प्राप्ति, पुलिस के प्रधान पद की प्रतिष्ठा आदि बातों की आशा में जीवन बिताने के आदी हो गए हैं, पर ऐसे व्यक्ति मुझे नहीं मिले जो अधिक समझदार बनने की आशा में जीवन बिताते हों। हम लोग सोचते हैं—'किसी एक नये ज़ार के शासन में सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्थाएँ पहले से अच्छी हो जावेंगी, और दो सौ वर्ष बाद उससे भी अधिक उन्नति हो जावेगी'—पर इस बात की चेष्टा कोई नहीं करना चाहता कि कल ही सब व्यवस्थाएँ सुधर जावें। जीवन प्रतिदिन जटिल से जटिलतर होता चला आता है, और बिना किसी नियम के मनमाने तौर से आगे को बढ़ा चला जाता है। लोग दिन पर दिन अधिक मूर्ख बनते चले जाते हैं, और अधिकांश व्यक्ति जीवन के बाहरी प्राङ्गण में टिल्ले-नवीसी करते फिरते हैं।"

कुछ क्षण तक वह गहन विचार में मग्न होकर मौन हो रहा, और तब अपनी भौंहों को मटकाकर अपनी अन्तिम बात के सिलसिले में बोला—"गिर्जे के किसी जलूस के अवसर पर लङ्गड़े-लूले भिखारियों की तरह।"

वह डाक्टर था—और रोग जब किसी डाक्टर पर आक्रमण करता

है तो वह उसके लिये साधारण रोगी की अपेक्षा अधिक कष्टसाध्य हो जाता है; साधारण रोगी पीड़ा का केवल अनुभव करता है, पर डाक्टर जब बीमार पड़ता है तो वह पीड़ा का अनुभव तो करता ही है, साथ ही उस क्रिया की प्रगति से भी परिचित रहता है जिसके द्वारा उसका शरीर दिन-पर-दिन नष्ट होता चला जाता है। ऐसी हालत में रोग के सम्बन्ध में जानकारी रखना मृत्यु को अधिक शीघ्रता से बुलाना है।

* * * *

जब वह हँसता था, तो उसकी आँखें बहुत सुन्दर दिखाई देती थीं—सुकुमार, स्निग्ध और स्त्रियों की तरह कोमल। और उसकी हँसी, जो एक प्रकार से नीरव होती थी, एक असाधारण प्रकार की होती थी। ऐसा जान पड़ता था कि अपनी हँसी में मग्न होकर वह स्वयं उसका रस बड़े आनन्द से ले रहा है। मुझे जीवन में कोई भी दूसरा व्यक्ति ऐसा नहीं मिला जो चेकाफ़ के समान 'आध्यात्मिक' रूप से हँसने में समर्थ हो। गन्दी बातों पर हँसना तो दर-किनार, मुसकान की झलक तक उसके चेहरे पर नहीं दिखाई देती थी।

अपने इसी विशेषत्व के साथ हँसते हुए एक दिन उसने मुझसे कहा——

"तुम्हें मालूम है टाल्सटाय का रुख तुम्हारे प्रति क्यों इस क़दर बदला हुआ है ? वह तुमसे ईर्ष्या करने लगा है। उसके मन में यह विश्वास जम गया है कि सुलेरयित्सकी तुम्हें अधिक पसन्द करता है और उसे कम। हाँ, बिलकुल यही बात है। कल उसने मुझसे कहा—— 'मैं गोर्की के साथ सहृदयता से पेश नहीं आ सकता——मैं स्वयं नहीं जानता कि इसका कारण क्या है। मुझे इस बात से दुःख ही होता है

कि सूलेर उसके साथ रहता है। सूलेर के लिये यह हानिकर है। गोर्की एक निष्करुण व्यक्ति है। वह मुझे धर्मशास्त्र के एक ऐसे छात्र की याद दिलाता है जिसे अपनी इच्छा के विरुद्ध धार्मिक शिष्टाचार के चक्कर में फँसना पड़ा हो, और इस कारण वह सबके प्रति झुँझला उठा हो। गोर्की के भीतर एक जासूस की आत्मा छिपी हुई है। उसे देखकर यह अनुभव होने लगता है जैसे वह बाइबिल में वर्णित कनान के देश में आ भटका हो। वहाँ वह अपने को एक परदेशी समझता है, अपने चारों की प्रत्येक बात पर बड़ी सावधानी से गौर करता है, प्रत्येक व्यक्ति की चाल-ढाल पर नज़र रखता है, और तब अपने एक विशेष देवता को लम्बी-चौड़ी रिपोर्ट लिखकर भेजता है। और उसका वह देवता क्या है पूरा दानव है—वह किसान स्त्रियों की दन्तकथाओं में वर्णित किसी एक कामुक भूत या बैताल की तरह या पानी में निवास करनेवाली डायन-परी की तरह है'।"

यह कहते हुए चेकाफ़ खिलखिला कर हँस रहा था और हँसते-हँसते उसकी आँखों से आँसू निकल आए थे। आँसुओं को पोंछ कर वह कहने लगा—"मैंने टाल्सटाय से कहा—'गोर्की बड़ा सहृदय व्यक्ति है।' पर वह अपनी बात पर अड़ा रहा और बोला—'नहीं, नहीं, मैं उसे अच्छी तरह जानता हूँ! उसकी नाक बतख की-सी है—केवल दिलजले और निष्करुण व्यक्तियों की नाक उस तरह की होती है। स्त्रियाँ भी उसे नहीं चाहतीं, और स्त्रियाँ इस सम्बन्ध में कुत्तों की तरह विशेषज्ञ होती हैं, सहृदय पुरुष को वे फौरन सूँघ लेती हैं। पर सूलेर की बात दूसरी है—उसमें सब व्यक्तियों को निःस्वार्थ भाव से चाहने का अमूल्य गुण वर्तमान है। इस क्षेत्र में वह वास्तव में प्रतिभा-शील है! जो व्यक्ति प्रेम करना जानता है वह सब कुछ जानता है'।"

चेकाफ़ इतना कहकर एक क्षण के लिये चुप रहा, और इसके बाद उसने कहा—"हाँ, बुड्ढा बेचारा तुमसे ईर्ष्या करने लगा है। वास्तव में वह एक आश्चर्यजनक बुड्ढा है!"

*   *   *   *

टाल्सटाय के सम्बन्ध में वह जब कभी बोलता तो उसकी आँखों में एक अव्यक्त, स्निग्ध और उद्विग्न मुसकान खेलती रहती थी, और ऐसे अवसरों पर वह अपनी आवाज़ धीमी कर लेता, जैसे वह परीलोक के किसी ऐसे गहन रहस्यमय जीव के सम्बन्ध में बातें कर रहा हो, जिसके लिये कोमल और चुने हुए शब्दों का उपयोग आवश्यक है। वह अक्सर इस बात की शिकायत किया करता था कि जर्मन कवि गेटे की तरह टाल्सटाय के साथ रहनेवाला एर्कमान के समान कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो उस बूढ़े जादूगर (टाल्सटाय) के समस्त तीखे, आकस्मिक और अक्सर आत्मखण्डनात्मक विचारों को सावधानी के साथ लिपिबद्ध करता रहे।

इस सम्बन्ध में उसने एक बार सूलेरयित्सकी से कहा था—"तुम्हें यह काम अपने हाथ में लेना चाहिये। टाल्सटाय तुम्हें बहुत चाहता है, तुम्हारे साथ बहुत अच्छी तरह से बातें करता है, और तरह-तरह के विचार तुम्हारे आगे प्रकट करता रहता है।"

सूलेर के सम्बन्ध में एक बार चेकाफ़ ने मुझसे कहा था—"वह एक समझदार बच्चा है।" उसकी यह बात बिलकुल सच थी।

*   *   *   *

एक दिन टाल्सटाय चेकाफ़ की किसी एक कहानी के सम्बन्ध में बड़े आवेश के साथ अपना मन्तव्य प्रकट कर रहा था। सम्भवतः वह 'दुशेंक्का' शीर्षक कहानी थी। टाल्सटाय कह रहा था—"यह कहानी

एक ऐसे गोटे की तरह है, जो किसी निष्कलङ्क तरुणी कुमारी द्वारा तैयार किया गया हो। पिछले ज़माने में इस तरह के गोटे तैयार करने-वाले लोग हमारे देश में थे; वे गोटे का जो 'डिज़ाइन' तैयार करते थे उसमें अपने जीवन की सब बातें, सब सुख-स्वप्न अङ्कित कर देते थे। उन 'डिज़ाइनों' के रूप में वे उन सब बातों का स्वप्न अङ्कित करते थे जो उन्हें बहुत प्रिय होती थीं, और अपने पवित्र, निष्कलङ्क और अनिश्चित प्रेम का स्वरूप उसमें बुन देते थे।"

टाल्सटाय इस क़दर आवेश के साथ बोल रहा था कि बोलते-बोलते उसकी आँखों से आँसू निकल आए थे। ठीक उसी दिन चेकाफ़ का टेम्परेचर बढ़ गया था, और उसके गाल तमतमाए हुए थें। वह शान्त भाव से, सिर नीचा किए बैठा था, और जब टाल्सटाय उसकी प्रशंसा कर रहा था तो वह चुपचाप बड़ी सावधानी से अपना चश्मा पोंछने में व्यस्त था। बहुत देर तक वह चुपचाप बैठा सुनता रहा। अन्त में एक लम्बी आह भरकर वह सकुचाई हुई आवाज़ में धीरे से बोला—"इस कहानी में प्रूफ़ की बहुत-सी ग़लतियाँ रह गई हैं।"

* * * *

चेकाफ़ के सम्बन्ध में बहुत-सी बातें लिखी जा सकती हैं, पर उन्हें सूक्ष्म और सुकुमार शैली में लिखना होगा, और इस तरह की कला में मैं सिद्धहस्त नहीं हूँ। उसके सम्बन्ध में उसी शैली में लिखना ठीक होगा जिसमें उसने स्वयं 'स्टेप' शीर्षक कहानी लिखी थी। इस कहानी का वातावरण ही बिलकुल निराला है, वह यद्यपि हलके हाथों लिखी गई है, तथापि उसमें एक गहन चिन्ताशील विषाद का भाव पाया जाता है, जो रूस की विशेषता है। इस तरह की मार्मिक कहानी, लेखक केवल अपने लिये लिखता है। चेकाफ़ के समान व्यक्ति की स्मृति जगने

से बड़ी प्रसन्नता होती है, उससे जीवन में एक नयी स्फूर्ति पैदा होती है, जीवन का एक स्पष्ट और निश्चित अर्थ सामने आता है।

मनुष्य अपने सब पापों और दोषों के बावजूद संसार-चक्र का एक धुरा-मात्र है। हम सब अपने सहजातीय मनुष्यों के प्रेम के लिये लालायित रहते हैं, और जब आदमी भूखा होता है तो अधपकी रोटी भी मीठी लगती है।

कवि और वेश्या

एक दिन पेकार के चाय-घर में मैं नेव्सकी में रहनेवाली एक नौजवान लड़की से बातें कर रहा था।

उसने कहा—"तुम्हारे पास जो यह किताब है उसे प्रसिद्ध कवि-ब्लाक ने लिखा है न? मेरा भी उससे व्यक्तिगत परिचय रहा है, हालाँकि मैं उससे एक बार से अधिक नहीं मिली।

"शरत्काल की रात थी, और चारों ओर घना और तर कुहरा छाया हुआ था। ड्यूमा की घड़ी बारह बजे का समय बता रही थी। मैं किसी गाहक की खोज में इधर-उधर चक्कर लगाने के कारण बहुत थकान मालूम करने लगी थी, और घर लौट चलने का विचार कर रही थी। अचानक इटालियान्सका के एक कोने पर एक बहुत सुन्दर रूप से सुसज्जित पुरुष मेरे पास आया और उसने मुझे अपने साथ चलने के लिये अनुरोध किया। वह बहुत ही सुन्दर दिखाई देता था और उसके मुख पर एक ऐसा गर्वीला भाव अङ्कित था कि मैंने उसे कोई विदेशी समझा।

"हम दोनों पैदल चले क्योंकि जहाँ हमें जाना था—१० नं०

कारावानाइया में वह स्थान पास ही था। वह प्रेमिकों के मिलने का अड्डा था। चलते हुए मैं उससे बातें करने लगी, पर उसने मेरी किसी भी बात का कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रकार का व्यवहार एक तो मेरे लिये असाधारण-सा था, और दूसरे कुछ प्रियकर भी नहीं था। इस प्रकार की अशिष्टता को मैं पाशविक समझती हूँ।

"जब हम लोग नियत स्थान पर पहुँच गए तो मैंने चाय के लिये आर्डर दिया। 'वेटर' बहुत देर तक वापस नहीं आया, इसलिये मेरा साथी स्वयं उसे बुलाने के लिये हॉल में गया। चूँकि मैं बहुत थकी हुई थी और जाड़े के कारण बहुत बेचैन थी, इसलिये ज्योंही मेरा साथी 'वेटर' को बुलाने गया त्योंही मैं सोफापर हाथ-पाँव समेटकर सो गई। कुछ समय बाद जब अकस्मात् मेरी आँखें खुलीं, तो मैंने देखा कि वह मेरे सामने चुपचाप बैठा है। वह अपने दोनों हाथों से अपना सिर थामे हुए अपने कुहनों के बल मेज़ पर झुका हुआ था, और मुझे अत्यन्त गम्भीर और मार्मिक दृष्टि से एकटक देख रहा था। उसकी उस पैनी दृष्टि की गम्भीरता मन में कुछ भय का-सा आभास उत्पन्न करनेवाली थी।

"पर मैं तनिक भी भयभीत नहीं हुई, केवल इस बात पर लज्जा का अनुभव करने लगी कि मुझे नींद आ गई। साथ ही मैं मन-ही-मन यह सोच रही थी—'वह निश्चय ही सङ्गीतज्ञ होगा, उसके बाल बहुत घुँघराले हैं।'

"मैंने कहा—'क्षमा कीजिएगा। मैं सर्दी से अकड़ी हुई थी और थक गई थी।'

"पर वह केवल अत्यन्त नम्रता के साथ मन्द-मन्द मुस्कराया और बोला—'इस बात का ख़याल बिलकुल न करो।' यह कहकर वह

अपनी जगह से उठकर मेरी बग़ल में आकर सोफा पर बैठ गया, और मुझे उठाकर उसने अपनी गोद में बिठा लिया। इसके बाद मेरे सिर के बाल सहलाते हुए बोला—'और थोड़ी देर के लिये सो जाओ।' और मज़े की बात यह है कि मैं सचमुच सो गई! यह अच्छा मज़ाक रहा! मैं जानती थी कि यह मेरी निहायत बेवकूफ़ी और ज़्यादती है, पर मेरा शरीर इस क़दर थका हुआ था कि मैं बरबस सो गई।

"वह धीरे से मुझे बच्चों की तरह झुलाने लगा, जिससे मुझे बड़ा आराम मालूम हो रहा था। मैं बीच-बीच में क्षण-भर के लिये अपनी आँखे खोलकर उसकी ओर देखकर केवल मुस्करा देती थी और वह भी पलटे में मुस्करा देता था। पर तत्काल मैं फिर सो जाती थी। इस प्रकार मैं बहुत देर तक सोती रही। अन्त में उसने मुझे जगाने के उद्देश्य से धीरे से अपने हाथ से हिलाया-डुलाया। मैं जग उठी। उसने अत्यन्त नम्रता के साथ कहा—'अच्छा, अब मैं जाता हूँ!' यह कहकर वह उठ खड़ा हुआ और मेज पर उसने पचीस रूबल* रख दिये।

"मैंने हड़बड़ा कर कहा—'यह क्या? यह रुपया आप किस लिये दे रहे हैं?'

"मुझे अपने व्यवहार पर बड़ी लज्जा मालूम हो रही थी और अकारण उसका रुपया स्वीकार करने में मैं बड़ी झिझक महसूस कर रही थी। वास्तव में उसके साथ मेरा व्यवहार बड़ा हास्यास्पद और असाधारण था। पर वह केवल मन्द-मन्द मुस्कराने लगा। उसने मेरा हाथ पकड़कर धीरे से उसे दबाया, और—सचमुच उसे चूम लिया। इसके बाद वह चला गया। उसके जाते ही 'वेटर' मेरे पास आया।

* उस समय के हिसाब से प्रायः पैंतालीस रुपये।

"मैंने 'वेटर' से पूछा--'तुम जानते हो, यह आदमी कौन था ?'

"उसने उत्तर दिया—'वह मशहूर कवि, ब्लाक है—यह देखो !' यह कहकर उसने एक पत्र में छपा हुआ उसका फोटो मुझे दिखाया।

"फोटो देखकर मुझे विश्वास हो गया कि निश्चय ही वह ब्लाक था। मैंने मन-ही-मन कहा--'भगवन्! मैं कैसी मूर्खता से उसके साथ पेश आई !' "

यह बात कहते हुए खेद की भावना के कारण उसके सतेज मुख पर बल पड़ गए। उसकी आँखों में, जो शरारत से भरी होने पर भी गृहहीन कुत्ते के पिल्ले की तरह करुण थीं, मुझे वास्तविक वेदना का आभास दिखाई दे रहा था। मेरे पास उस समय जितने भी रुपये थे वे सब मैंने उसे दे दिए, और तब से ब्लाक के प्रति मेरे मन में अत्यन्त निकटता का भाव उत्पन्न हो गया।

ब्लाक का गर्वीला चेहरा और उन्नत ललाट मुझे बहुत प्रिय लगते हैं। उसका ललाट देखकर मुझे फ्लोरेन्टाइन शिल्पकला के अभ्युदय काल के चित्रों की याद आती है।

परिहासपूर्ण घटनाएँ

एक भूतपूर्व सिपाही ने एक बार मुझसे कहा—"लड़ाई में भी कभी-कभी परिहासपूर्ण घटनाएँ घट जाती हैं। उदाहरण के लिये, एक बार हम लोग पाँच आदमी पास ही किसी एक जङ्गल में कुछ टहनियाँ तोड़कर लाने गये। अचानक जर्मनों का एक दोज़खी गोला भयङ्कर विस्फोट के साथ हमारे ऊपर आ टूटा। मैं जबर्दस्त धक्का खाकर एक गढ़े में जा गिरा और वह गढ़ा ऊपर से पत्थरों से ढक गया।

"जब मैं अपने होश में आया तो उस गढ़े के भीतर लेटे-लेटे सोचने लगा—'सेमियन, तुम अब समाप्त हुए !' पर नहीं, मैं शीघ्र ही चङ्गा होकर उठ बैठा। बाहर निकलकर, आँखें मलने के बाद मैंने चारों ओर नज़र दौड़ाई—पर मेरे मित्रों का कहीं कोई चिह्न नहीं दिखाई दिया। मेरे सिर के ऊपर कुछ पेड़ थे, जो बिलकुल ठूँठ थे। उनकी कुछ टहनियों से मनुष्यों की अँतड़ियों की रस्सियाँ लटक रही थीं।

"यह विचित्र दृश्य देखकर मैं ठठाकर हँस पड़ा ! मेरे साथियों के वे जो अनोखे चिह्न शेष रह गए थे वे वास्तव में बड़े मज़े के थे।

"इसमें सन्देह नहीं कि कुछ ही समय बाद मुझे अपने साथियों की उस दशा पर दुःख हुआ। कुछ भी हो, आखिर वे मेरे मित्र थे, ठीक मेरे ही समान चलते-फिरते मनुष्य थे; और अकस्मात् उनका कोई चिह्न ही शेष नहीं रहा, जैसे कभी उनका अस्तित्व ही न रहा हो। पर पहले मुझे हँसी अवश्य आई।"

* * * *

"हम लोग एक ऐसे गाँव में पहुँचे जहाँ तीन से अधिक झोपड़ियाँ नहीं थीं। उनमें से एक के पास एक बुढ़िया बैठी हुई थी, और कुछ ही दूरी पर एक गाय चर रही थी। हम लोगों ने बुढ़िया से कहा—'नानी, यह जानवर किसका है ?—तुम्हारा है क्या ?'

"बुढ़िया हमारा प्रश्न सुनते ही ढाड़ मार कर रोने लगी और घुटने टेककर विनय के स्वर में कहने लगी—'मेरे बच्चे—सब तहख़ाने में छिपे हैं। अगर तुम लोग गाय ले लोगे तो वे सब भूखों मर जावेंगे।

"हम लोगों ने कहा—'चिल्लाओ मत, बुढ़िया ! हम तुम्हें इस गाय के लिये एक रसीद दे देंगे।'

"हमारी पलटन का एक सिपाही कोस्ट्रोम का रहनेवाला था। वह नम्बरी उचक्का था। उसने इस आशय की एक रसीद लिखकर बुढ़िया को दी—'यह बुढ़िया नब्बे वर्ष तक जीवित रह चुकी है और यह आशा करती है कि वह और नब्बे वर्ष तक जीएगी—पर वह जी नहीं सकती।' इसके नीचे उस बदमाश छोकरे ने दस्तख़त के स्थान पर लिख दिया—'सर्वशक्तिमान ईश्वर।'

"हम लोगों ने बुढ़िया को वह रसीद दे दी और गाय को अपने साथ ले गये। उस मज़ाक पर हम लोग इस क़दर हँस रहे थे कि चल नहीं पाते थे। रास्ते में कई बार हम लोगों को हँसी के कारण निकले हुए आँसुओं को पोंछने के लिये रुकना पड़ा।

क्रान्ति के चलचित्र

१९१९

इस वर्ष गर्मियों के प्रारम्भ में विचित्र भौतिक जगत् के-से लोग पेट्रोग्राड की सड़कों में चक्कर काटते हुए दिखाई देते थे। आज तक ये सब लोग कहाँ और कैसे जीवन बिताते होंगे? निश्चय ही वे गन्दी बस्तियों में, पुराने, निर्जन मकानों के खण्डहरों में, जीवन से बहिष्कृत और संसार तथा समाज द्वारा अवमानित और विताड़ित अवस्था में छिपे पड़े होंगे। मैं जब-जब उन्हें देखता था तो प्रति बार मेरे मन में रह-रहकर एक विशेष धारणा उत्पन्न होती थी—यह कि वे लोग कोई एक बात भूल गए हैं और उसे याद करने का प्रबल प्रयत्न कर रहे हैं—उसी बात की खोज में चुपचाप शहर के चारों ओर चक्कर काटते फिरते हैं।

वे सब फटे-पुराने कपड़े पहने थे, जिनकी धज्जी-धज्जी अलग हो

गई थी; वे गन्दे दिखाई देते थे और बहुत भूखे लगते थे। पर भिखारियों की तरह उनका रूप-रङ्ग नहीं था, और न वे किसी से भीख माँगते ही थे। वे बिलकुल चुपचाप, बड़ी सावधानी के साथ चल रहे थे, और साधारण राहगीरों को सन्देह तथा कुतूहल की दृष्टि से देख रहे थे। जब वे दुकानों की खिड़कियों के पास खड़े होते थे, तो वहाँ प्रदर्शित की गई चीज़ों को इस दृष्टि से देखते थे जैसे यह याद करने की कोशिश कर रहे हों कि वे सब चीज़ें किन कामों में लाई जाती हैं। मोटरों को देखते ही वे भयभीत हो उठते थे, जिस प्रकार बीस वर्ष पहले देहाती पुरुष और स्त्रियाँ इस सवारी से डरती थीं।

* * * *

एक लम्बे क़द का, भूरे रङ्ग के चेहरेवाला बुड्ढा, जिसकी आँखें भीतर को धँसी हुई थीं, नाक टेढ़ी थी और दाढ़ी कुछ-कुछ हरा रङ्ग लिए हुए थी, शिष्टता के बतौर अपनी फटी और सिकुड़न पड़ी हुई पुरानी टोपी को हाथ से ऊपर उठाकर, तेज़ रफ़्तार से जाती हुई मोटरकार की ओर उँगली से इशारा करते हुए एक राहगीर से पूछता है—

"बिजली ? ओह, समझा ! धन्यवाद !"

वह बुड्ढा छाती आगे को बढ़ाए और सिर ऊँचा उठाए चला जाता है; जब कोई आदमी सामने से आता है तो वह उसके लिये रास्ता नहीं छोड़ता, और जो-जो व्यक्ति उसके पास से होकर गुज़रते हैं उनकी ओर अपनी अधखुली आँखों से घृणापूर्वक देखता है। उसके पाँव नङ्गे हैं और जब वह सड़क पर बिछे हुए पत्थरों को अपने पाँवों के तलवों से स्पर्श करता है तो उनपर अपने अँगूठों को जमाता है, जैसे पत्थरों की मज़बूती परखना चाहता हो। एक आवारा भिखमङ्गा अकस्मात् उसके पास आकर प्रश्न करता है—

"बाबा, तुम कौन हो ?"

"बहुत सम्भव है, मैं एक मनुष्य हूँ।"

"रूसी ?"

"जीवन-भर।"

"पलटन में ?"

"शायद।"

इसके बाद प्रश्न करने वाले छोकरे की जाँच करते हुए वह पलटे में पूछता है—

"क्रांति कर रहे हो ?"

"कर चुके !"

"ओह……"

इसके बाद बुड्ढा वहाँ से अलग हट कर पुरानी किताबें बेचने वाले की दुकान के पास जाता है, और बाँए हाथ से मजबूती के साथ दाढ़ी पकड़ कर खिड़की पर सजाई हुई किताबों को देखने लगता है। आवारा छोकरा फिर एक बार घेर कर कुछ पूछता है; पर बुड्ढा उसकी ओर न देख कर धीरे से कहता है—"हट जाओ।"

× × × +

साइमियनेव्स की सड़क पर गिर्जे के फाटक से लगे एक प्रायः चालीस वर्ष की स्त्री खड़ी है। उसका पीला चेहरा सूजा हुआ है, जिसके कारण उसकी आँखे ठीक से नहीं दीखतीं। उसका मुँह आधा खुला है, जैसे वह हाँफ रही हो। उसके नङ्गे पाँव बड़े-बड़े जूतों के भीतर घुसे हुए हैं। उन जूतों के सिरे सूखी हुई कीचड़ की मोटी परत से ढके हुए हैं। वह पुरुषों के पहनने योग्य ड्रेसिंग-गाउन अपने शरीर पर लपेटे हुए है। उसके हाथ एक-दूसरे से जुड़े हुए उसके वक्षस्थल पर स्थापित हैं।

उसके सिर पर फूस की बनी एक टोपी है, जिस पर सिकुड़ी हुई पत्तियों सहित एक 'चेरी' फल अङ्कित है—मालूम होता है किसी समय 'चेरियों' का एक पूरा गुच्छा उस पर अङ्कित था, पर अब केवल एक ही 'चेरी' रह गई है,—बाकी सब घिसघिसा गए हैं, और उसके शेष चिह्न शीशे की तरह चमक रहे हैं।

अपनी मोटी और सुडौल भौंहों को मटकाती हुई वह बड़े गौर से ट्रामगाड़ियों के भीतर भीड़ के बीच में पथिकों का घुसना, प्लेटफार्मों पर से कूदना और गाड़ियों में उतर कर इधर-उधर बिखर जाना देख रही है। उसके ओठ हिल रहे हैं, जैसे वह आने-जाने वाले व्यक्तियों की संख्या गिन रही हो। यह भी संम्भव है कि वह किसी व्यक्ति की प्रतीक्षा में खड़ी हो और उस व्यक्ति के मिलने पर उससे जो-जो बातें कहेगी उनका अभ्यास कर रही हो। उसकी फूली हुई आँखों की लाल और तङ्ग दरारों के बीच एक निष्करुण, गम्भीर और तीखी दृष्टि झलक रही है। सड़क पर सिगरेट बेचने वाले छोकरे जब उसकी बगल में होकर गुज़रते हैं तो वह उन्हें घृणा-पूर्वक धक्का देकर हटा देती है।

एक व्यक्ति आकर धीरे से उससे पूछता है—"तुम्हें किसी प्रकार की सहायता कीं आवश्यकता तो नहीं है?"

वह उस अनाहूत व्यक्ति को क्रोध-भरी दृष्टि से देखती है और उसीकी तरह धीमे स्वर में उत्तर देती है––"तुमने क्या देख कर ऐसा सोचा?"

"क्षय करना······"

एक साफ-सुथरी नाटे क़द की बुढ़िया एक गोटेदार टोपी पहने उसकी बगल में खड़ी है, और सन या मिट्टी की बनी हुई 'पैस्ट्री' बेच रही है। अजनबी स्त्री उस बुढ़िया से पूछती है––"क्या तुम—एक महिला हो?"

"मैं दुकान करनेवालों की श्रेणी की हूँ।"

"अच्छा! इस शहर में कितने आदमी रहते हैं?"

"मैं नहीं जानती। बहुत-से रहते हैं।"

"हाँ, यह देखकर भय मालूम होने लगता है कि यहाँ कितने..."

"क्या तुम परदेसी हो?"

"मैं? नहीं। मैं यहीं की रहनेवाली हूँ।"

यह कहकर वह वहाँ से चल देती है। अपने भारी जूतों को, जो बहुत बड़े और ढीले होने के कारण उसके पाँवों में ठीक से जम नहीं पाते, घसीटती हुई वह सर्कस की ओर बढ़ती है।

कुछ समय बाद वह सर्कस के पीछे एक बाग़ में जाकर एक बेञ्च पर बैठ जाती है। उसकी बग़ल में एक भारी-भरकम शरीरवाली बुढ़िया छड़ी टेककर गर्दन झुकाए बैठी है, और बड़े ज़ोरों से साँस ले रही है। उसका चेहरा पत्थर पर खुदा हुआ-सा मालूम होता है, वह काले रङ्ग का गोल चश्मा लगाए है, और एक क़ीमती पशमी कोट का शेष चिह्न और रेशम तथा भूरे रङ्ग के पशम के चिथड़े पहने है।

उस रास्ते से गुज़रते हुए मुझे एक भारी गले की आवाज़ और तीखे, चुभते हुए शब्द सुनाई पड़ते हैं—"इस शहर का अन्तिम भद्र पुरुष उन्नीस वर्ष पहले मर चुका था।"

और बुढ़िया बहरों की तरह चिल्लाकर कहती है—"न्यायालय में आग लग गई है। मैं देखने गई थी, केवल दीवारें शेष रह गई हैं। बाक़ी सब कुछ जल गया है। ईश्वर का दण्ड है!"

बड़े-बड़े जूतोंवाली स्त्री बुढ़िया के कानों के पास झुककर कहती है—"मेरे घर के सब लोग जेल में बन्द हैं—सब!"

मुझे ऐसा लगा कि वह ऐसा कहते हुए हँस रही थी।

एक नाटे कद का आदमी, जिसके शरीर में बहुत बाल हैं, और जिसकी सूरत बन्दर की-सी और नाक कचूमर की हुई-सी है, बड़ी तेज़ी से चला जा रहा है—बल्कि एक प्रकार से दौड़ रहा है। उसकी आँखों की नीली-भूरी पुतलियाँ किसी आशङ्का के कारण फैली हुई हैं; उन पुतलियों के चारों ओर सुन्दर गोलाकार रूप से सफ़ेदी छाई हुई है। जो ओवरकोट वह पहने है, वह स्पष्ट ही उसका नहीं मालूम होता; उसका किनारा झालर की तरह सिकुड़ा और सिमटा है। उसके पाँवों में 'फेल्ट' जूते हैं जिनकी एड़ियों के हिस्से घिस गए हैं, और उसके सिर पर टोपी नहीं है। उसके सिरपर अधपके जर्जर-बाल अयाल की तरह सीधे ऊपर को उठे हुए हैं; एक घनी दाढ़ी उसकी आँखों के पास से, गालों की हड्डियों पर से कानों तक बेढङ्गे तौर से उभरी हुई है। वह चलते-चलते किसी चिन्ता से उद्विग्न होकर बड़बड़ा रहा है, अपने हाथों को बीच-बीच में झटकता रहता है। अपनी उँगलियाँ एक दूसरे से कसकर फँसाता है। नारोड्नी डाम नामक स्कायर में जाकर वह सिपाहियों को लक्ष्य करके भाषण देता है—

"तुम लोगों को—हाँ, विशेष करके तुम लोगों को—समझना चाहिये कि मनुष्य तभी प्रसन्न हो सकता है जब वह जीवन की नश्वरता का ख़याल करके उस तथ्य के साथ समझौता कर लेता है......"

वह बहुत धीमी आवाज़ में बोलता है; हालाँकि उसके चेहरे से यह आशा की जा सकती है कि वह ग़ुर्रावेगा। वह कभी एक पाँव उठाता है, कभी दूसरा; अपना एक हाथ वह अपने हृदय के पास स्थापित किए है और दूसरे हाथ को वह इस तरह हिलाता-डुलाता है कि मालूम होता है जैसे सङ्गीत का सञ्चालन कर रहा हो। उसके हाथ बालों से ढके हुए हैं, और उँगलियों की गाँठों के बीच में घने बालों

के छोटे-छोटे गुच्छे दिखाई देते हैं। उसके सामने एक बेञ्च पर बैठे हुए तीन सिपाही सूरजमुखी के बीजों को चबा रहे हैं और उन बीजों के छिलकों को वक्ता के पेट और पाँवों पर थूक रहे हैं। एक चौथा सिपाही, जिसके एक गाल में लाल रङ्ग का एक छेद दिखाई देता है, सिगरेट पी रहा है, और धुएँ की कुण्डलियों को वक्ता की नाक तक पहुँचाने की चेष्टा कर रहा है।

वक्ता बकता जाता है—"मैं निश्चयपूर्वक यह बात कहता हूँ कि हम लोगों—अर्थात् साधारण जनता—के भीतर अधिक सुन्दर जीवन की आशा लगाना व्यर्थ है; इस प्रकार की चेष्टा अमानुषिक अपराध-मूलक है; यह लोगों को मन्दी आँच में जीते जी भूनने के बराबर है......"

चौथा सिपाही सिगरेट के शेष अंश के सिरे पर थूक कर चुटकी से उसे ऊपर हवा में फेंक देता है, और अपने पाँवों को सामने की ओर फैलाते हुए पूछता है—

"तुम्हें किसने भाड़े पर लिया है?"

"क्या? मुझे?"

"हाँ तुम्हें। तुम्हें किसने भाड़े पर लिया है?"

"भाड़े पर लेने से तुम्हारा तात्पर्य क्या है?"

"मैं जो कहता हूँ वही मेरा तात्पर्य है। तुम बुर्जआ लोगों के भाड़े के टट्टू हो या यहूदियों के?"

वक्ता घबरा कर चुप रह जाता है। एक सिपाही अपने साथी को सलाह देता है—"उसके पेट में एक लात जमाओ।"

दूसरा उत्तर देता है—"उसके पेट ही नहीं है।"

नाटे क़द का आदमी—वक्ता—अपने हाथों को दोनों जेबों के भीतर डालता है, और फिर बाहर निकाल कर उन्हें एक दूसरे से

सटाकर दबाता है। इसके बाद कहता है—"मैं स्वयं अपनी तरफ़ से बोल रहा हूँ। मैं भाड़े का आदमी नहीं हूँ। मैंने भी अध्ययन और चिन्तन किया है, और मैं विश्वासपरायण रहा हूँ। पर अब मैं इस सत्य से परिचित हो गया हूँ कि मनुष्य केवल कुछ ही समय के लिये मनुष्य रूप में जीवित रहता है, प्रत्येक वस्तु का अन्त में विनाश होता और वह--"

यहाँ पर वह सिपाही जिसके गाल पर छेद है, भयङ्कर रूप से चिल्ला उठता है--"हट जाओ !"

नाटा आदमी घबराकर वहाँ से चल देता है, और प्रायः दौड़ता हुआ भाग जाता है। उसके जूते गर्द के बादल उड़ाते रहते हैं। इधर पूर्वोक्त सिपाही अपने साथियों से कहता है--"वह सोच रहा था कि वह हमारे मन में घबराहट पैदा कर रहा है। नम्बरी चाँई मालूम होता है, जैसे हम उसका उद्देश्य समझने की बुद्धि नहीं रखते। हम लोग सब समझते हैं, क्यों, है न ?

उसी दिन सन्ध्या के समय वही नाटे क़द का आदमी त्रोइत्सकी पुल के बेञ्च पर बैठा हुआ था, और उसी बेञ्च पर बैठे हुए दूसरे व्यक्तियों से कह रहा था--"ज़रा इस बात को समझने की कोशिश कीजिए--सब बातों को ध्यान में रखने पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अधिकसंख्यक जनता से सम्बन्ध रखनेवाला मनुष्य--सीधी-सादी प्रकृति का मनुष्य, जिसे हमलोग मूर्ख समझते हैं—जीवन का एकमात्र सच्चा निर्माण-कर्ता है। अधिकसंख्यक जनता मूर्ख ही होती है......"

उसकी बातें सुननेवाले व्यक्तियों में से एक चेचक के दागों से युक्त मल्लाह, एक पलटनिया, नीले रङ्ग के कपड़े पहने हुए एक स्त्री,

तीन अधपके बालों वाले व्यक्ति, सम्भवतः मज़दूर, और काले चमड़े का ओवरकोट पहने एक यहूदी युवक—कुल इतने व्यक्ति थे। यहूदी युवक उसकी बात सुनकर उत्तेजित हो उठा; वह व्यङ्गपूर्ण ढङ्ग से बोला—"तो क्या प्रोलेतेरियत श्रेणी की जनता भी मूर्ख है ?"

"मैं उन लोगों की बात कह रहा हूँ जिनकी माँगें बहुत कम हैं। वे केवल यह चाहते हैं कि उन्हें अच्छे-ख़ासे ढङ्ग से जीवन बिताने की सुविधा दी जाय।"

"तुम्हारा आशय क्या बूर्जुआ श्रेणी की जनता से है ?"

इस पर मल्लाह मोटी आवाज़ में बोल उठा—

"ज़रा ठहरो, 'तोवारिश' (कामरेड—संगी) ! पहले उसे अपनी बात पूरी करने दो।"

वक्ता ने मल्लाह की ओर सिर हिलाते हुए कहा—"धन्यवाद देता हूँ।"

"इसकी कोई आवश्यकता नहीं है।"

वक्ता कहने लगा—"मनुष्य को केवल सैद्धान्तिक रूप से मूर्ख कहा जा सकता है, क्योंकि प्रकृति ने उसे मस्तिष्क का जो अंश दिया है उससे वह अपने दृष्टिकोण से परम सन्तुष्ट है और यह बात अच्छी तरह जानता है कि उसका उपयोग कैसे किया जा सकता है।"

मल्लाह बोला—"ठीक। अब आगे बढ़ो !"

"वह जानता है कि उसे केवल कुछ ही समय के लिये मनुष्य-रूप में जीवित रहना है, पर इस बात के ज्ञान से उसके प्रतिदिन के नियमों में कोई विघ्न नहीं पड़ता कि एक दिन उसे क़ब्र में जाकर विश्राम करना होगा......"

मल्लाह ने कहा—"ठीक है, हम सब को एक दिन मरना है !"

यह कहकर वह यहूदी युवक की ओर आँखें मटकाता हुआ मुक्त-भाव से मुस्कराने लगा, जैसे वह कुछ ही देर बाद संसार के आगे अपनी व्यक्तिगत अमरता की घोषणा करने जा रहा हो।

बन्दर की-सी सूरत वाले वक्ता ने अपनी धीमी आवाज में अपना भाषण जारी रखा। वह बोला—"मनुष्य आशाओं में पूर्ण व्यस्त जीवन नहीं चाहता। वह रात में नक्षत्रों की छाया के नीचे एक शान्त और धीर गति से चलने वाले जीवन से सन्तुष्ट रहना चाहता है। मैं यह कहता हूँ कि संसार में थोड़े ही समय के लिये जीवित रहने वाली जनता के भीतर अनिश्चित आशाएँ उभाड़ना उनके जीवन को और अधिक उलझन में डालना है। कम्यूनिज़्म उन्हें क्या दे सकता है?"

वक्ता की अन्तिम बात सुनकर मल्लाह एकदम बिगड़ बैठा। अपनी हथेलियों को घुटनों पर रखकर उसने कहा—"अच्छा, यह बात है!" इसके बाद आगे की ओर झुका और फिर उठ खड़ा हुआ और बोला—"चलो, तुम्हें मेरे साथ चलना होगा!"

नाटे कदवाले व्यक्ति ने चौंक कर पूछा—"कहाँ?"

"मैं जहाँ ले जाऊँ। 'तोवारिश,' तुम भी मेरे साथ चलो।"

यहूदी युवक ने अवज्ञा के साथ कहा—"अरे हटाओ भी!"

मल्लाह अपनी बात दुहराते हुए बोला—"कृपा करके चलो!" उसके चेचक-चिह्नित मुख में गहरी छाया घिर आई थी और उसकी आँखे गहन गम्भीरता से पलक मार रही थी।

वक्ता बोला—"मैं नहीं डरता।"

जो स्त्री उस बेञ्च पर बैठी थी वह शूली का सांकेतिक चिह्न अङ्कित करती हुई उठ खड़ी हुई, और वहाँ से चली गई, पलटनिया भी अपनी बन्दूक की पेंचदार कील पर हाथ फेरते हुए उठकर चला गया;

शेष तीन व्यक्ति भी एक साथ इस तरह खड़े हुए जैसे तीनों का एक ही मन हो। मल्लाह और यहूदी युवक अपने क़ैदी को पीटर और पाल के क़िले की ओर ले गए, पर रास्ते में दो आदमी उन्हें मिले जिन्होंने उस दार्शनिक कैदी को छोड़ देने के लिये अनुरोध किया।

इस पर मल्लाह आपत्ति प्रकट करते हुए बोला—"नहीं–नहीं इस झब्बरे कुत्ते को यह मालूम करना होगा कि मनुष्यका जीवन कितना क्षणिक है।"

वक्ता अपनी बात को दुहराते हुए धीमी आवाज़ में बोला—"मैं नहीं डरता। मुझे केवल इस बात पर आश्चर्य हो रहा है कि तुम लोग कितनी कम समझ रखते हो!"

यह कह कर वह सहसा लौटा और फिर 'स्क्वायर' की ओर वापस चला गया, मल्लाह ने कहा—"अरे देखो, वह भाग गया। ठग कहीं का! ए! तुम कहाँ जाते हो?"

"अरे जाने भी दो, 'तोवारिश!' तुम देखते नहीं, उसका दिमाग़ ठिकाने नहीं है।"

मल्लाह ने उस बन्दर की-सी सूरतवाले नाटे आदमी की ओर एक बार सीटी बजाई, और फिर खूब हँसा। बोला—"भाड़में जाय! वह चुपचाप निकल भागा है। आखिर बहादुर कुत्ता है। निश्चय ही वह सिड़ी और सनकी है।"

× × × ×

एक तीखी नजरवाला बुड्ढा एक मैला काई लगा हुआ टोप सिर पर डाले और पशम के कालर से युक्त कोट पहने नार्डोनी डाम के आसपास भीड़ के बीच में चक्कर काट रहा है। जहाँ-कहीं भी दस पाँच आदमी इकट्ठा हुए हों वहीं जाकर वह खड़ा हो जाता है। अपना सिर

एक तरफ को किये अपनी आबनूस की मूठवाली छड़ी की नोक ज़मीन के भीतर घुसाए वह बड़े गौर से लोगों की बातें सुनता है, उसका चेहरा फुटबाल की तरह गोल है और उसका रङ्ग गुलाबी है। उसकी आँखें रात में उड़ने वाले पक्षी की तरह गोल और टिमटिमाती हैं। उसकी बाज की-सी नाक के नीचे उसकी मटमैले रङ्ग की मूँछ के बाल काँटों की तरह खड़े और नोकदार हैं। उसकी ठुड्डी के नीचे बकरी की तरह भूरे बालों का एक गुच्छा लटक रहा है। उन बालों को वह अपने बाँए हाथ की तीन उँगलियों से पकड़कर घुमा रहा है और बीच-बीच में उन्हें अपने मुँह के भीतर डाल कर अपने ओठों से चबाता भी है, फिर तत्काल 'फुप्फूः' करके उन्हें थूक के साथ बाहर निकाल देता है।

अपने कंधे से लोगों को ढकेलते हुए वह भीड़ के बीच में घुस जाता है, जैसे छिपना चाहता हो, और फिर अकस्मात उसकी तीखी, चुनौती भरी आवाज गूँज उठती है--

"मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि किस वर्ग के लोग हमारे लिये खास तौर से हानिकर हैं। उन्हें जड़ से नष्ट कर देना होगा, उनकी बोटी-बोटी अलग कर देनी होगी और हड्डियों को पीस कर धूल के साथ मिला देना होगा।"

उसकी बातें सब लोग बड़े ध्यान से सुनते हैं—सिपाही, मज़दूर, नौकर चाकर, रास-रङ्गवाली स्त्रियाँ, सभी मुँह बाए उसकी ओर देखते रहते हैं, जैसे उसके उत्तेजक शब्दों को चूस रहे हों। जब वह बोलता है तो अपनी छड़ी को अपनी छाती के एक छोर से दूसरे छोर तक आड़ी अवस्था में दोनों हाथों से पकड़े रहता है और अपनी उँगलियों को उसपर बड़ी तेजी से इस तरह फेरता रहता है जैसे वह एक वीणा हो।

वह कहता जाता है--"पहला नम्बर सब प्रकारके दफ्तरों के क्लार्कों

और आफ़ीशियलों का है। तुम लोग सब निश्चय ही जानते होगे कि ये सब क्लार्क और आफिशियल लोग कैसे भयङ्कर रोग हैं, ज़हमत हैं। उन लोगों से अधिक अन्यायी और अत्याचारी और कौन है ? अदालतों में काम करनेवाले आफ़ीशियल, जेलोंके आफीशियल, लगान विभाग के आफ़ीशियल, चुङ्गी के आफ़ीशियल, टैक्स विभाग के आफ़ीशियल सर्वत्र उनका दौर-दौरा है और वे लोग कैसे चालबाज़ होते हैं--ठीक मदारियों की तरह ! और मदारियों ही की तरह उनके बक्सों में तरह-तरह के चालबाजियों का सामान भरा पड़ा रहता है। उनका नम्बर सबसे पहले आता है--सब आफ़ीशियलों को जड़ से साफ़ कर देना होगा।"

उसकी यह बात सुनकर एक लाल बालों वाली लड़की, जो सम्भवतः एक नौकरानी है, क्रोध के साथ प्रश्न करती है--"तुम स्वयं कौन हो, मैं जानना चाहती हूँ। मैं शर्तिया कह सकती हूँ कि तुम स्वयं एक आफ़ीशियल हो !"

बुड्ढा तत्काल आफीशियल होने से इनकार करता है, और कुछ खिसियानी-सी आवाज़ में कहता है—"मैंने ग़रीब लोगों के साथ कभी किसी प्रकार का अत्याचार नहीं किया, कभी नहीं ! मैं एक ज्योतिषी हूँ—मैं जानता हूँ कि भविष्य में हम लोगों का क्या हाल होगा।"

उसकी यह बात सुनकर बहुत से श्रोता एक-साथ चिल्लाकर बुड्ढे से कहते हैं कि वह अपने ज्ञान का प्रदर्शन करे।

बुड्ढा कहता है—"नहीं, यह गुप्त विषय है—खुले आम उसका प्रदर्शन नहीं हो सकता।"

जब उससे यह प्रश्न किया जाता है कि "भविष्य में हम लोगों का क्या हाल होगा ?" तो वह ज़मीन की ओर देखते हुए उत्तर देता है—"चूँकि तुम लोगों ने इस काम को हाथ में ले लिया है, इसलिये

यदि तुम शीघ्र ही इसका ख़ातमा करके नहीं छोड़ोगे, तो हालत ख़राब हो सकती है। सड़े हुए दाँतों को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहिये। सब प्रकार के आफ़ीशियलों को तहस-नहस कर देना होगा। और शिक्षित लोगों की भी यही गत बनानी होगी, क्योंकि उन लोगों ने हमारी बुद्धि को अन्धा बनाने की चेष्टा की है, और उनके लिये हमने जो कुछ कमाया है उसपर उन्होंने एक रुपया पीछे एक आना से अधिक मजूरी नहीं दी है। हाँ! अब चूँकि हम भी समझदार हो गए हैं, इसलिये उन्हें हमारा कहना मानना पड़ेगा। अब हम उनपर क़ानून लागू करेंगे। और तुम लोगों को मालूम है, उन लोगों ने साफ़ पानी-पीने का जो आन्दोलन चलाया वह कैसा मूर्खतापूर्ण था! जगह-जगह उन लोगों ने इस आशय के नोटिस चिपकाए--'बिना औटाया हुआ पानी न पिया करो!' हाः हाः हाः!"

यह मालूम करना मुश्किल था कि वह हँस रहा है या आह भर रहा है, क्योंकि 'हाः हाः हाः' का शब्द उसके गोल मुख के भीतर से बड़े विचित्र रूप में बाहर निकला था।

इसके बाद मुँह मटकाकर वह विजयोल्लास के साथ पूछता है--"अच्छा तो हम लोग उस बिना खौलाए हुए पानी को पीते हैं या नहीं?"

श्रोतागण उसकी इस तरह की बातों से अच्छा विनोद अनुभव कर रहे हैं। प्रश्न के उत्तर में कुछ लोग मिलकर एक साथ ख़ूब जोर से चिल्ला उठते हैं--"हम पीते--नहीं हैं।"

बुड्ढा कहता है--"और यह बिना खौलाया हुआ पानी पीने पर भी हम ज़िन्दा हैं या नहीं?"

"निश्चय ज़िन्दा है!"

"तब आप ही लोग स्वयं सोचें कि हमारा शिक्षित वर्ग किस तरह के ऊटपटाङ्ग क़ानून इस पर लागू करना चाहता है। देखा आपने! इन सब लोगों को नष्ट कर देना होगा!......"

इसके बाद इस सम्बन्ध में विश्वस्त होकर कि उसने अपने कर्तव्य का पालन सफलतापूर्वक कर लिया है, पह फुर्ती के साथ उस भीड़से अलग हटकर शान के साथ छड़ी घुमाता हुआ चला जाता है। पर कुछ ही समय बाद वह एक दूसरी भीड़ के बीच में जा पहुँचता है, और फिर वह एक राग अलापने लगता है—

"दो वर्ग ऐसे हैं जो हम लोगों के लिये विशेष रूप से प्राण-घाती हैं......"

निस्सन्देह यह बुड्ढा भी किसी ऐसी अन्ध गुहा से बाहर निकला है, जहाँ जीवन की विवशताओं ने उसे खदेड़ दिया था। उस एकान्त खोह के भीतर वर्षों तक बन्द रहकर वह दिन-पर-दिन अपने भीतर क्रोध घृणा और प्रतिहिंसा का सञ्चय करता रहा होगा।

* * * *

ऐसे लोगों की संख्या कुछ कम नहीं है जो शिक्षित वर्ग के विरुद्ध विद्वेष का भाव उभाड़ने के कार्य में सब समय व्यस्त रहते हैं। अधिक-तर नौकर-चाकर, रसोइया, खानसामा आदि गृहस्थ परिवारों में काम करनेवाले व्यक्ति इस प्रकार के विद्वेष के प्रचार में विशेष रूप से दिल-चस्पी लेते हुए दिखाई देते हैं। एक बार कुछ लोग 'आधुनिक सर्कस' नामक स्थान में एकत्रित हुए थे। उनमें एक मोटे क़द की स्त्री (जो स्पष्ट ही कुछ बड़े घरों में नौकरानी रह चुकी थी) अपने श्रोताओं को बता रही थी कि "मालिक" लोग किस प्रकार का जीवन बिताया करते हैं। उसके किस्से बहुत दिलचस्प और विनोदपूर्ण थे, पर वह इस प्रकार की

अश्लील भाषा का प्रयोग कर रही थी कि उसके प्रति दस शब्दों में से तीन शब्द काग़ज़ पर नहीं लिखे जा सकते। उसके श्रोताओं में से अधिकांश व्यक्ति सिपाही थे। बुढ़िया उन्हें बता रही थी कि एक स्त्री-रोग-विशेषज्ञ डाक्टर अपने मरीज़ों के साथ किस गन्दे ढङ्ग से पेश आता था, दाँतों की चिकित्सा करनेवाली एक यहूदी महिला का चरित्र कैसा था, और फलाँ अभिनेता अपनी शिष्याओं को किन विचित्र ढङ्गों से नाट्य-कला सिखाता था। श्रोतागण उसकी बातों में बड़ा रस ले रहे थे, और उस रसानुभूति के साथ ही बीच-बीच में थूकते भी जाते थे।

एक भूरे रङ्ग का सिपाही, जो अपने गले के चारों ओर रूमाल लपेटे था, बोला——"इस प्रकार के लोगों की ख़ूब मरम्मत करनी होगी——एक को भी साबूत नहीं छोड़ना होगा।"

एक दूसरे स्थान पर प्रायः चालीस वर्ष का एक व्यक्ति, जो चलने में लङ्गड़ा रहा था, और जो दाढ़ी और मूँछ में एक भी बाल उगा हुआ न होने से जनखे की तरह लग रहा था, अपने कुछ श्रोताओं के आगे चिल्ला रहा था——"मैंने अपना सारा जीवन अस्तबलों में, घोड़ों की गन्दगी के बीच में बिताया है, और वे लोग शानदार कोठियों में रहते हैं, और मुलायम गद्देदार कौचोंपर लेटकर गोद में लेने योग्य कुत्तों के साथ खेलते रहते हैं। मैं कहता हूँ, अब इस प्रकार की बातें नहीं होने पावेंगी। अब गोद के कुत्तों से खेलने की बारी मेरी है; और वे लोग अब अस्तबलों की गन्दगी के बीच में जाकर रहें, क्यों, है न?"

एक कानी और जवान स्त्री, जिसका तमाम चेहरा तेज़ाब से जला हुआ था, अत्यन्त भयङ्कर और कठोर शब्दों में बोल रही थी——

"ज़रा एक बार बाइबिल को उठाकर तो देखो--क्या उसमें कुलियों और मज़दूरों के 'मालिकों' का वर्णन कहीं आया है ? कहीं नहीं, उसमें न्यायाध्यक्षों और महात्माओं का वर्णन है--पर 'मालिकों' का नहीं। स्वयं ईश्वर ने उन जातियों के पूर्ण विनाश की आज्ञा दी थी जिनमें 'मालिकों' का बोलबाला था। ऐसी जातियों को ईश्वर ने जड़ से नष्ट कर डाला, और उनकी स्त्रियों, बच्चों और गुलामों तक को नहीं छोड़ा। क्योंकि गुलाम भी अपने मालिकों के विषैले विचारों से प्रभावित हो जाते हैं और उनका मनुष्यत्व कुछ भी शेष नहीं रह जाता।"

सहसा उस भीड़ में से किसी को चिल्लाते हुए सुना गया---"अरी बेहया औरत, तू गले में फाँसी लगाकर मर जा !" पर वह साहसी स्त्री अपने दोनों हाथों से अपने वक्षस्थल को दबाती हुई चीखने की सी आवाज़ में कहती चली गई—"मैं ग्यारह वर्ष तक एक भद्र महिला की नौकरानी रह चुकी हूँ, और मैंने इन आँखों से ऐसे-ऐसे दृश्य देखे हैं कि......"

निश्चय ही उसने ऐसी-ऐसी बातें देखी थीं—यदि वह सच कह रही थी तो—जिनसे फ्रेञ्च-लेखक ओश्लाव मिर्बो भी अपनी 'एक भद्र-महिला की नौकरानी की डायरी' लिखते समय, अपरिचित रहा। उसके श्रोतागण उसकी बातों पर तनिक भी नहीं हँसे और उदास-भाव से चुपचाप सुनते रहे। उत्तेजना के कारण उस कानी स्त्री का मुँह लाल हो आया था और वह पसीने से तर-बतर हो गई थी। जब उसी उत्तेजित अवस्था में वह चली गई, तो एक चिपटी नाकवाले सिपाही ने कहा---"उसका मुँह तेज़ाब से यों ही ख़राब नहीं हुआ है !"

निस्सन्देह जब अत्याचार-पीड़ित व्यक्ति को बदला चुकाने की

शक्ति और सुविधा प्राप्त हो जाती है, तो वह भयङ्कर रूप से खूंख्वार हो उठता है। यदि हमारे वर्तमान समाज-सुधारक-गण इस कोटि के व्यक्तियों को "विनष्ट किए जाने योग्य वर्गों" की लिस्ट में सबसे पहले रखें, तो यह अनुचित न होगा।

स्पष्ट दृष्टि

रेलगाड़ी तीव्र गति से आन्दोलित हो रही थी और उसका धुरा निरन्तर एक ही स्वर में चीत्कार करते हुए झुँझलाहट उत्पन्न कर रहा था। वह शब्द इस प्रकार मालूम होता था—

"रीगा—ईगा—ईगा—-ईगा !"

इसके बाद गाड़ी के पहिये सम्मिलित स्वर में बोल उठते थे—

"सङ्गी, जल्दी ! सङ्गी, जल्दी !"

मेरा सहयात्री एक विचित्र व्यक्ति था। उसका मुख ऐसा शुष्क, सफ़ेद, नीरस और रङ्ग-रहित दिखाई देता था कि सम्भवतः तेज़ धूप की चमक में वह अदृश्य-सा हो जाता ! उसे देखकर ऐसा अनुभव होने लगता था जैसे उसका निर्माण कुहरा और छाया—-केवल इन दो—चीजों से हुआ है। उसके मुख की रेखाएँ जिनमें भूख की छाप स्पष्ट दिखाई देती थी, अवर्णनीय थीं; उसकी आँखें भारी पलकों से ढकी थीं; उसके झुर्रियों से युक्त गाल और जटा-युक्त दाढ़ी, दोनों जल्दबाज़ी में सन से तैयार की गई मालूम होती थीं। एक मटमैले रङ्ग की सिकुड़ी-सिमटी टोपी उसके मुख के उस विचित्र भाव को और अधिक स्पष्ट बना रही थी। उसके मुँह से नेपथेलीन की-सी गन्ध आती थी। वह अपने पाँवों को समेट कर एक कोने में बैठा था, और एक दिया-

सलाई से अपने नाखून साफ़ कर रहा था। सहसा वह अपनी भारी आवाज़ में बोल उठा—

"सत्य वह सम्मति है जो विश्वास की भावना से ओत-प्रोत रहती है।"

"प्रत्येक सम्मति?"

"हाँ, प्रत्येक।"

"रीगा--ईगा--ईगा--ईगा।"

खिड़की के बाहर शरत्-प्रात के धुँधले प्रकाश में पेड़ अपनी काली शाखाओं को शान के साथ हिला-डुला रहे थे। उनके आस-पास पत्तियाँ और चिनगारियाँ चटख़ रही थीं और फटफटा रही थीं।

मेरा सहयात्री बोला--"महात्मा जेरेमिया ने कहा है--'पिताओं ने अँगूर खाए और उन अँगूरों की खटास ने उनकी सन्तति के दाँत खट्टे कर दिए।' हमारी सन्तति के सम्बन्ध में यह बात बिलकुल सत्य बैठती है--उनके दाँत खट्टे हो गए हैं। हम लोगों ने विश्लेषण के खट्टे अँगूर खाए और हमारे बच्चों ने विश्वास की अस्वीकृति और श्रद्धा के अभाव-सम्बन्धी सिद्धान्तों को सत्य के बतौर स्वीकार कर लिया।"

उसने अपने तिरपाल के ओवरकोट की दुम के हिस्से को अपने नुकीले घुटनों पर लपेट लिया, और दियासलाई से नाख़ून साफ़ करने के काम में मग्न रहते हुए कहता चला गया—

"लाल सेना में भरती होने के पहले मेरे बेटे ने मुझसे कहा--'तुम एक ईमानदार आदमी हो। ज़रा मुझे यह बात समझाओ--तुमने और तुम्हारे युग के शिक्षित वर्ग ने अपनी बहुमुखी आलोचनाओं द्वारा जीवन के सब आधारों को सैद्धान्तिक रूप में नष्ट भ्रष्ट कर दिया है; तब तुम अब किस बात के पक्ष का समर्थन करने पर तुले हुए हो?' मेरा बेटा

बुद्धिमान नहीं था, उसके विचार बेढङ्गे तौर पर ढले हुए थे, पर फिर भी वह सच्चा और ईमानदार था। लेनिन का सन्दर्भ प्रकाशित होते ही वह बोल्शेविक बन गया था। उसने ठीक ही बात कही थी, क्योंकि वह विनाश और विध्वंस की शक्तियों पर विश्वास करता था। सच बात यह है कि स्वयं मैं भी बोल्शेविक सिद्धान्तों से सहमत था, पर मेरा हृदय मुझे उन्हें स्वीकार नहीं करने देना चाहता था। 'चेका' के जिस जज ने मेरी जाँच की उसके आगे मैंने यह बात स्वीकार की थी—यह बात तब की है जब मैं क्रान्ति-विरोधी समझा गया और इस कारण गिरफ़्तार कर लिया गया। जज अभी नौजवान था और छैला था। वह स्पष्ट ही क़ानून का विद्यार्थी रह चुका था। वह मुझसे उपयुक्त और उचित प्रश्न कर रहा था। उसे यह बात मालूम थी कि मेरा लड़का युडेनिख़ के मोर्चे पर प्राण त्याग चुका है, और इस कारण वह मेरे साथ कुछ सौजन्य से पेश आ रहा था। पर मैं बराबर यही अनुभव करता रहा कि मुझे गोली से मरवाने पर वह बहुत प्रसन्न होगा।

"जब मैंने उस नौजवान जज के आगे अपने हृदय और बुद्धि के द्वन्द्व की बात बताई, तो वह विचार-मग्न होकर अपने मामले के काग़ज़ों पर हाथ फेरता हुआ बोला—'हाँ, हमें यह बात आपके पत्रों से, जिन्हें आपने अपने लड़के के नाम लिखा था, मालूम हो चुकी है। पर इस बात से आपकी स्थिति सुधरती नहीं।'

"मैंने पूछा—'तो क्या आप लोग मुझे गोली से मरवाने का इरादा रखते हैं'?

"उसने उत्तर दिया—'इस बात की सम्भावना बहुत अधिक है—यदि आप इस जी उकताने वाले मामले में हमारी सहायता न करें तो!'

"वह मुक्त-भाव से बोल रहा था, पर उसकी मुसकान से यह भाव झलकता था कि इस मामले से वह दुःखी है। मेरा ऐसा ख़याल है कि मैं भी मुस्करा रहा था––क्योंकि उसकी कर्तव्य-परायणता से और इसके बाद उसने एक ऐसी बात कही जिससे उसके सम्बन्ध में मेरी धारणा और अच्छी हो गई। उसने सहज-भाव से कहा––'मेरा तो यह ख़याल है कि आपके लिये मर जाना बेहतर है––क्या आप ऐसा नहीं समझते। क्योंकि जिस प्रकार का द्वन्द्व आपके भीतर चल रहा है, उसे लेकर जीवन बिताना निश्चय ही बड़ा कष्ट-कर होगा।' इसके बाद तत्काल उसने कहा––'मुझे एक ऐसी बात कहने के लिये क्षमा करेंगे जिसका कोई सम्बन्ध आपके मामले से नहीं है।' "

"ईगा—रीगा—रीगा—ईगा" की आवाज़ में गाड़ी चल रही थी।

मेरा सहयात्री जम्हाई लेता हुआ और जाड़े से काँपता हुआ खिड़की से बाहर की ओर देखने लगा। वर्षा की बौछार के कारण खिड़की के शीशे से छोटी-छोटी जलधाराएँ प्रवाहित हो रही थीं। मैंने पूछा–– "पर अन्त में उसने आपको छोड़ तो दिया ?"

"स्पष्ट है। मैं अभी तक जीवित हूँ, जैसा कि आप देखते हैं।"

इसके बाद अपने सन की झालर से युक्त मुख को मेरी ओर करके वह तनिक घृणा-भरी मुसकान से प्रायः चुनौती के स्वर में बोला––"मैंने जाँच के सिलसिले में कुछ प्रश्नों पर स्पष्ट-दृष्टि से विचार करने में उसकी सहायता की।"

"सङ्गी, जल्दी ! सङ्गी, जल्दी !"—इस शब्द से रेलगाड़ी के पहिये गड़गड़ाते हुए चल रहे थे। वर्षा का वेग और अधिक बढ़ गया, और गाड़ी का धुरा पहले से भी तीखी आवाज़ से चीखने लगा––"इगुइ––इगुइ––इगुइ––इगुइ––"

नागरिक एफ. पोपोफ़ के पत्र से

"प्रसिद्ध डार्विन यह तथ्य प्रमाणित कर गया है कि जीवन-संघर्ष अनिवार्य है और दुर्बलों अर्थात् काम करने में असमर्थ-व्यक्तियों के समूल निराकरण के विरुद्ध कोई दलील नहीं रह गई है; और यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि 'डार्विन से कई शताब्दियाँ पूर्व इस तथ्य से (दुर्बलों के विनाश के स्वाभाविक नियम से) लोग परिचित थे—जब बुड्ढों को पकड़ कर लोग उन्हें किसी पहाड़ी घाटी में भूखों मरने के लिये फेंक आते थे अथवा वे किसी ऊँचे पेड़ पर चलने के लिये बाध्य किए जाते थे, जिन पर से नीचे गिरकर वे अपनी गर्दन तोड़ डालते थे। इन दोनों बातों से हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि विज्ञान हमारी आराम-तलब नैतिकता को पार कर चुका है। फिर भी अकारण और अनुचित क्रूरता का विरोध करते हुए मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूँ—जो लोग समाज के लिये उपयोगी कार्यों को कर सकने में असमर्थ हैं उनका समूल विनाश ऐसे उपायों से किया जाय जो कम सख़्त हों; उदाहरण के लिये, उन्हें मारने के लिये कुछ ऐसी चीज़ें खिलाई जानी चाहिये जो स्वादिष्ट हों—जैसे कुचला या सङ्खिया (जो कुछ सस्ती है) मिली हुई मिठाइयाँ या माँस।

इस प्रकार के सदय उपायों से जीवन सङ्घर्ष, जो कि इस समय सर्वत्र फैला हुआ है, कुछ कम कठोर बन जायगा।

"इसी प्रकार के उपाय बुद्धिहीन और विकलाङ्ग व्यक्तियों और क्षयरोग अथवा नासूर के समान असाध्य रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के विनाश के लिये भी काम में लाए जाने चाहिये।

"निश्चय ही इस प्रकार का क़ानून हमारे रोने—झीखनेवाले शिक्षित वर्ग को नहीं जँचेगा; पर अब समय आ गया है कि शिक्षित वर्ग की प्रतिक्रियावादी विचारधारा की अवज्ञा की जाय।"

सङ्गीत और संहार

जुलाई मास की दोपहरी में पीतल के आकाश पर सूर्य भीषण रूप से प्रज्वलित हो रहा है। सारा क़स्बा गरमी से भभक रहा है और स्तब्ध है। चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ है, केवल बीच-बीच में कुछ अस्पष्ट सान्निपातिक शब्द उस सन्नाटे को विचलित कर रहे हैं। किसी के आनुनासिक और भावमग्न स्वर में संगीत-लहरी फूट रही है—

रजत-शुभ्र सरिता के तट पर
स्वर्ण रेणु के ऊपर,
खोज रहा हूँ चरण-चिह्न मैं
अलबेली बाला के।

मोटी, भारी आवाज़ में कोई प्रश्न करता है—

"आज सुबह तुम क्या करते थे?"

"मैं कुछ आदमियों को गोली मारने के काम में व्यस्त था।"

"कितने?"

"तीन।"

"क्या वे चिल्लाए?"

"चिल्लाते क्यों?"

"तब क्या उन्होंने कोई आवाज मुँह से नहीं निकाली?"

"कोई नहीं। वे लोग आम तौर से शोर नहीं मचाया करते...।

संयम और नियमन के सम्बन्ध में उनका एक निजी आदर्श है, जो उन्हें यह जता देता है कि जहाँ एक बार वे झञ्झट में फँसे नहीं कि उसका फैसला इस ओर या उस ओर एक बार अवश्य ही होगा—चाहे आज हो चाहे कल।"

"भद्रपुरुष थे ?"

"नहीं—कम-से-कम मेरा ऐसा ख़याल नहीं है। गोली खाने से पहले उन्होंने बध-स्थान पर अपने ऊपर शूली का धार्मिक संकेत-चिह्न अङ्कित किया। इससे मैं यह अनुमान लगाता हूँ कि वे साधारण श्रेणी के व्यक्ति थे।"

एक क्षण तक सन्नाटा छाया रहता है, इसके बाद फिर तीव्र करुण-स्वर में संगीत-ध्वनि गूँज उठती है—

विमल चन्द्र ! तुम मुझको मार्ग सुझाओ !

"क्या तुमने भी कुछ गोली-काण्ड किया ?"

"क्यों नहीं !"

"मुझे बताओ कहाँ छिपी है बाला ?..."

भारी आवाज़ परिहास के स्वर में कहती है—"तुम गा तो रहे हो 'अलबेली बाला' का गीत, पर फिर भी तुम्हें अपनी कमीज़ की मरम्मत स्वयं करनी पड़ती है। अच्छे भोंदू हो तुम !"

"अरे, अभी ज़रा ठहरो तो सही; समय आने पर लड़कियाँ भी मिल जायँगी। सभी-कुछ होगा......"

"बोलो, मन्द पवन, कुछ बोलो !
वह बाला क्या सोच रही है—
यह रहस्य टुक खोलो !

नाच, नास्तिकवाद और निकाह

बड़े हॉल के खम्भे लाल कपड़े और हरे भोजपत्रों से सजे हुए हैं। उन पत्तियों के बीच से सुनहरे अक्षर जगमगा उठते हैं और इन शब्दों के रूप में परिणत हो जाते हैं—

प्रोलेतेरियन ...... ज़िन्दाबाद !

खिड़की से एक ताज़ा वासन्ती हवा का झोंका आता है, और बाहर पेड़ों की छाया और उनके ऊपर तारे दिखाई देते हैं। कमरे के एक कोने पर एक लम्बे क़द का और भूरे रङ्ग का आदमी अपनी सारस की-सी लम्बी और पतली गर्दन को लचकाता हुआ अपनी लम्बी लम्बी पतली उँगलियों को पियानो के पर्दों पर बड़े जोरों से फेर रहा है। मल्लाह और सिपाही लोग फ़र्श पर बिछल रहे हैं और रेंग रहे हैं, और अपनी बाँहों से नौजवान छोकरियों की कमरें पकड़ कर अपने पाँवों को घसीटते हुए चल रहे हैं और बीच-बीच में पैरों को धमाधम की आवाज़ से फ़र्श पर पटक भी रहे हैं। नौजवान लड़कियाँ रङ्ग-बिरङ्गे कपड़े पहने हैं। सारा दृश्य प्रचण्ड कोलाहल और उन्मत्त राग-रङ्ग में पूर्ण है।

एक लम्बी आकृतिवाला युवक झुँझलाहट के साथ चिल्लाता है—"बेहूदो! 'ग्राङ्ग—रङ्ग'—इस ताल पर नाचो!" वह युवक सफ़ेद जूता और नीली कमीज़ पहने है; उसके कपाल के ऊपर बालों का एक भड़कीला गुच्छा लटक रहा है, और उसके माथे से लेकर गालों के नीचे तक चोट के चिह्न-स्वरूप एक रेखा खिंची हुई है। एक क्षण बाद वह कहता है—"अच्छा, ठहरो! मेरा मतलब 'ग्राङ्ग—रङ्ग' से नहीं था, मैं दूसरी ही बात कहने जा रहा था—उसका कुछ भला-सा नाम

है। भाड़ में जाय! अब तुम लोग एक दूसरे का हाथ मज़बूती से पकड़ो और गोल चक्कर बनाकर नाचो!"

वे लोग मिलकर तत्काल एक उत्कट चीत्कार-पूर्ण रास-मण्डल बनाकर नाचने लगते हैं। ऐसा मालूम होता है जैसे रङ्ग-विरङ्गे धब्बों का एक बड़ा-सा लट्टू उन्मत्त वेग से घूम रहा है। सारा फ़र्श एड़ियों के दबाव से कराहने लगता है, और विशाल झाड़ के स्फटिक-खण्ड आशङ्कित होकर टनटनाने लगते हैं।

एक खम्भे के पीछे, गहरे लाल रङ्ग के झण्डे की आड़ में युवक-युवती के एक जोड़े ने नाच से थककर आश्रय लिया है। युवक एक नङ्गी छाती और चौड़े कन्धों वाला मल्लाह है, जिसके सिर के बाल लाल रङ्ग के हैं और चेहरे पर चेचक के दाग़ हैं। उसकी सङ्गिनी एक घुँघराले बालोंवाली लड़की है, जो नीली पोशाक पहने है। उसकी छोटी-छोटी, मटमैले रङ्ग की आँखें विस्मय-विभोर भाव से चमक रही हैं—शायद आज उसके जीवन में प्रथम बार एक उजड्ड और भीमकाय पुरुष उसके आगे नत-मस्तक हुआ है, आज पहली बार एक मर्द ने उसके चिनिया-गुड़िया की तरह मुख पर अपनी गोल-गोल आँखों से सदय दृष्टिपात किया है। वह एक बढ़िया क़िस्म के सफेद कपड़े के टुकड़े से अपने मुखपर हवा कर रही है, और निरन्तर आँखें मिचका रही है। स्पष्ट ही वह प्रसन्न है और साथ ही कुछ-कुछ भीत-सी भी लगती है।

भीमकाय मल्लाह कहता है—"ओल्गा स्टीपानोवना, आपके धार्मिक विश्वासों पर एक बार और अच्छी तरह से बहस हो जाय।"

"आः, ज़रा रह जाइए,—बड़ी गरमी मालूम हो रही है।"

"भाड़ में जाय गरमी! अच्छी बात है—मान लिया कि ईश्वर

है ! पर, चाहे कुछ भी कहें, ईश्वर एक काल्पनिक चीज़ है, और मैं एक वास्तविक तथ्य हूँ; पर फिर भी आप इस सत्य की ओर ध्यान देना नहीं चाहतीं।"

"नहीं, यह बात नहीं है !"

"क्षमा कीजिए !--क्या आप नहीं देखतीं कि आपके विचार मेरे खिलाफ़ पड़ते हैं ? आपकी कल्पना में जो 'चीज़' घुसी हुई है वह आपको अजेय तत्त्व के अनन्त शून्य में, असहाय अवस्था में भटकाती फिरती है, और यहाँ आपके सामने प्रत्यक्ष रूप से एक जीता-जागता आदमी खड़ा है, जो आपकी प्रिय आत्मा की ख़ातिर आग और शोलों के बीच चलने के लिये तैयार है......"

लम्बे क़दवाला युवक भयङ्कर रूप से चिल्लाता है—"महिलाओं के सामने क़तार बाँध कर खड़े हो जाओ !" उसकी बड़ी-बड़ी बाँहें उसके सिर के ऊपर फैली हुई हैं। वह फिर कहता है—"आठ-आठ की टोली में उन खम्भों के चारों ओर चक्कर लगाओ !"

"ओल्गा स्टीपानोवना, चलिए !" यह कहकर मल्लाह इस युवती की कमर पकड़कर उसे ज़मीन से ऊपर उठा लेता है, और नाच के तूफ़ानी चक्कर के बीच में ले जाता है।

कुछ समय बाद वह खिड़की पर बैठी हुई दिखाई देती है, और हाँफती हुई मालूम होती है। उसका साथी उसके सामने खड़ा है, और पुचकार-भरे शब्दों में धीरे से कहता है—

"इसमें सन्देह नहीं कि हम लोग, जो कि एक नये राष्ट्र से सम्बन्ध रखते हैं, बड़े स्पष्टवादी और बेतकल्लुफ़ हैं। पर हम लोग चाहे कैसे भी क्यों न हों, न तो हम जानवर हैं न पिशाच।"

"मैंने कब कहा कि आप यह सब हैं !"

"मुझे अपनी बात कह लेने दीजिए। यदि आप गिर्जे में ही विवाह करने के लिये हठ करती हैं, तो इस बात को अधिक तूल देना बेकार है; पर लोग-बाग इस बात को लेकर निश्चय ही मेरा मज़ाक उड़ाना शुरू कर देंगे।"

"उनसे इस सम्बन्ध में कुछ कहने की आवश्यकता ही क्या है?"

"क्या आपका आशय यह है कि गुपचुप में विवाह किया जाय? अच्छी बात है; आपकी-ख़ातिर मैं नास्तिकता के ख़िलाफ़ यह अपराध भी करने को तैयार हूँ। फिर भी, ओल्गा स्टीपानोवना, मैं आपसे इतना कहूँगा कि हम लोग यदि अभी से नास्तिकता की आदत डालना शुरू कर दें, तो बेहतर होगा। हाँ, निश्चय ही बेहतर होगा! जीवन में हमें स्वयं अपने ऊपर भरोसा करना होगा, और किसी बात में डरना नहीं होगा, ओल्गा स्टीपानोवना! जितना डरना था, हम लोग डर चुके! आज-कल, वर्तमान युग में, अपने को छोड़कर और किसी से भी डरना नहीं चाहिये......क्यों कामरेड, तुम क्या चाहते हो? यह चाहते हो?" यह कहकर वह पास ही खड़े एक व्यक्ति की ओर धीरे से अपना घूँसा बढ़ाता है। उसकी मुट्ठी ऐसी ज़बर्दस्त है कि दस सेर के बटखरे के बराबर दिखाई देती है।

हाल के बीच में लम्बे क़दवाला व्यक्ति, जो वर्तमान नृत्य-उत्सव का नियन्ता है, उन्मत्त स्वर में चीखता है—

"महिलाओं के सामने से दो क़दम पीछे हटकर सिर झुकाओ—एक—दो! महिलाएँ अपनी-अपनी इच्छा के अनुसार अपने सङ्गियों को चुनें। कोई किसी पर दबाव न डाले!"

उपसंहार

इस प्रकार के लोगों के बीच में मैं पचास वर्ष तक रहा।

आशा है, इस पुस्तक से यह बात प्रमाणित हो जावेगी कि जब-तक मैं सत्य को जान बूझकर दबाना नहीं चाहता तब-तक उससे नहीं कतराता। फिर भी मेरो यह धारणा है कि सत्य को उस हद तक परिपूर्ण होना आवश्यक नहीं है जिस हद-तक लोग समझते हैं। जब-जब मैंने यह अनुभव किया है कि अमुक-अमुक प्रकार का सत्य केवल आत्मा पर निर्दय प्रहार करते रहने के अतिरिक्त मानव को कोई उपयोगी पथ नहीं सुझाता, और मनुष्य की यथार्थता का परिचय मुझे देने के बजाय उसे अवमानित रूप में मेरे सामने रखता है, तो मैंने उसका उल्लेख न करना ही बेहतर समझा है।

मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूँ कि बहुत-से ऐसे सत्य होते हैं जिन्हें याद न करना सबसे अच्छा है। इस प्रकार के सत्यों की उत्पत्ति झूठ से होती है, और उनमें उस विषैले असत्य के सब तत्त्व वर्तमान रहते हैं जिसने मनुष्यों के पारस्परिक सम्बन्धों को विकृत कर डाला है, और जीवन को बिलकुल वीभत्स और अप्राकृत बनाकर उसे नरक के रूप में परिणत कर दिया है। मानवता को एक ऐसी चीज़ की याद दिलाने से क्या लाभ है जो संसार से जितनी जल्दी ग़ायब हो जाय उतना ही अच्छा है ? जीवन की केवल गन्दी-गन्दी बातों की पोल खोलते रहने का काम भी गन्दा है।

मैं पहले इस किताब का नाम रखना चाहता था—"रूसी जनता, जैसी कि वह पहले थी।" फिर मैंने सोचा कि इस तरह का नाम-करण

बहुत गम्भीर हो जायगा। इसके अतिरिक्त क्या मुझे इस बात का निश्चय है कि मैं रूसी जनता को बदले हुए रूप में देखना चाहता राष्ट्रीयता, देशभक्ति तथा आत्मा के दूसरे रोगों से मैं चाहे कितन दूर क्यों न होऊँ, पर रूसियों के सम्बन्ध में मेरी यह धारणा है अपवाद-रूप से और विलक्षण प्रकार से प्रतिभाशील और असा होते हैं, अभी तक अटूट बनी है। रूस के मूर्खों की मूर्खता भी विचित्र प्रकार की, निजी ढङ्ग की होती है, जिस प्रकार निखट्टुअ प्रतिमा उनकी निजी विशेषता की परिचायक होती है।

मेरा यह अनुमान है कि जब यह आश्चर्य-जनक जनता हिस्से में पड़े हुए निर्यातनों का भोग कर चुकने के बाद उन पीड़नों से अपने को मुक्त कर डालेगी जो मन को उलझनों में रहते हैं, जब वह श्रम के उस सांस्कृतिक, बल्कि धार्मिक, महत्त्व पूर्ण अनुभूति से कार्यशील होगी जो सारे संसार को एक रूप में मि करने में समर्थ है, तब वह परिस्तान का-सा सुन्दर और तेजस्वी जी बितायेगी, और कई बातों में वह संसार को प्रकाशमान करेगी जो व मान समय में युद्ध और संघर्ष से क्लान्त और दुष्कर्मों से उन्मत्त उद्भ्रान्त है।



इतिहास का महत्त्वपूर्ण एवं प्रामाणिक-महाग्रन्थ-रत्न

श्री महाकवि कल्हण कृत

हिन्दी-राजतरङ्गिणी

ोपीकृष्णशर्मा, व्याकरणाचार्य, काव्य-तीर्थ (संस्कृताध्यापक, माधव कॉलेज उज्जैन)

न्दी-साहित्य से अनुराग रखनेवालों को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता 5 जिस महान् ऐतिहासिक और प्रामाणिक ग्रन्थ के श्लोकों को प्रमाणस्वरूप कर बड़े-बड़े इतिहासवेत्ता गर्वानुभव करते हैं, उसी भूस्वर्ग काश्मीर के कल्हण के राजतरङ्गिणी नामक विशालकाय ग्रन्थ को हिन्दी भाषा में न करने का हमने साहस किया है। यह इतिहास का महाग्रन्थ ४८ ई० में, आज से लगभग ८०० वर्ष पूर्व, उस समय के प्राप्त शिला-लेखों, ताड़पत्रों आदि के आधार पर लिखा गया था, जिनमें से बहुतों ज पता भी नही है, नष्ट हो गये हैं। आज तक इसके फारसी, फ्रेंच, आदि पाश्चात्य भाषाओं में कई-कई अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी में आज-तक उसका एक भी संस्करण न प्रका-ीना हिन्दी के लिए दुर्भाग्य की बात थी। हमारी प्राचीन संस्कृति, रहन-वैभव आदि का इतिहास बतलानेवाला सबसे पहला प्रामाणिक ग्रंथ यही गया है। हम इसी विशाल-काय ग्रन्थ को ३ खंडों में अत्यन्त विश्वस्त और एक प्रति पर से सरल भाषा में शृंखलाबद्ध अनुवाद कराकर प्रकाशित हैं। पहले दो खंडों में अनुवाद तथा आलोचनात्मक भूमिका रहेगी। वमें मूल संस्कृत रहेगा। पहला खंड जिसमें ग्रन्थ के आधे से अधिक अंश अनुवाद है, मय भूमिका के, प्रकाशित हो चुका है। लगभग ६०० पृष्ठों खंड का मूल्य ३) रखा गया है। दूसरा और तीसरा भी छप रहा है। लोग अभी से ग्राहक बनकर इस पहले खंड को मँगा लेंगे उन्हें ६) पेशगी ने ही से तीनों खंड बिना किसी प्रकार के अन्य खर्च के मिल जायँगे। खंड के छपने में हाथ लग गया है। अलग-अलग, लेने पर पूरे सेट का ७॥) तथा डाकखर्च अलग लगेगा।

घाघ और भड्डरी की कहावतें

(सम्पादक—श्रीकृष्ण शुक्ल 'विशारद')

भारतवर्ष बहुत प्राचीनकाल से कृषिप्रधान देश रहा है। प्रस्तुत पुस्तक में , वर्षा, नाज बोआई, शकुन आदि विषयों पर कवि घाघ और भड्डरी द्वारा त कविताएँ दी गई हैं। घाघ और भड्डरी सिर्फ कवि ही नहीं थे प्रत्युत

Mahavir Prasad Dwivedi

वे एक अच्छे ज्योतिषी भी थे। आपके विचार प्रायः बिल्कुल-ठीक ठीक उतरते हैं। ग्रामीण जनता के ख्याल से प्रत्येक पद का अर्थ भी दे दिया गया है। पुस्तक की छपाई सफाई आदि सभी सुन्दर है। मूल्य केवल १)

वीर-विरदावली

(संकलनकर्त्ता एवं सम्पादक—श्री वियोगी हरि तथा विश्वनाथप्रसाद मिश्र एम. ए., साहित्यरत्न)

श्री वियोगी हरि जी के नाम से कौन साहित्य-प्रेमी परिचित न होगा! आपको 'वीर सतसई' पर १२००) का मङ्गलाप्रसाद पारितोषिक मिल चुका है। श्री विश्वनाथप्रसाद जी मिश्र हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रोफेसर, अनेक साहित्यिक ग्रन्थों के प्रणेता एवं अच्छे कवि हैं। हिन्दी में वीर-रस की कविताओं का कोई अच्छा संग्रह न होने के कारण यह सङ्कलन प्रकाशित किया जा रहा है। पुस्तक पढ़ना शुरू करते ही नस-नस में जोश फड़कने लगता है। संग्रह अपूर्व है। पुस्तक पाठ्यक्रम में रखने योग्य है। पाठकों एवं विद्यार्थियों की सुविधा के लिए पुस्तकान्त में कठिन शब्दों के अर्थ एवं शुरू में सारगर्भित भूमिका भी दे दी गई है। मोटे कागज पर बढ़िया छपाई के साथ पुस्तक का मूल्य १।।) है।

सद्गुणी बालक

(लेखक—स्वर्गीय नारायण हेमचन्द्र)

बच्चे ही भावी राष्ट्र के कर्णधार हैं। उनका चरित्र उज्ज्वल होने से ही राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल हो सकता है। बाजारों में बालोपयोगी पुस्तकों की भरमार है; परन्तु उनमें से शायद ही एक प्रतिशत पुस्तकें ऐसी निकल सकें जो बच्चों का मनोरञ्जन करने के साथ-ही-साथ उनका चरित्र भी उज्ज्वल बनादें हों। प्रस्तुत पुस्तक में ऐसी ही छोटी-छोटी ६९ जीवनियां दी गई हैं जिनसे बच्चों का मनोरञ्जन तो होगा ही साथ-ही-साथ उनके चरित्र पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। प्रत्येक जीवनी, पढ़ने के बाद बच्चे के हृदय पर अपनी एक अमिट छाप छोड़ जायगी। यदि आप अपने बच्चे का भविष्य उज्ज्वल बनाना चाहते हैं तो इस पुस्तक को उन्हें अवश्य ही पढ़ाइए। बड़ी ही सरल भाषा में छोटे-छोटे बच्चों के [redacted] है, [redacted] पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल ।।।) मात्र।

मिलने का पता—पुस्तक भवन, बनारस।

Signature with Date